भव्य-प्रमोद

प्रथम खण्ड : धर्म सिद्धान्त

मङ्गलाचरण

(दोहा)

महावीर भगवान को, प्रणमूँ बारम्बार।
जिनके सत् उपदेश से, सुधर गया संसार॥
वृषभादिक चौबीस जिन, अघहर मंगलकार।
नमहुँ ग्रन्थ की आदि में, मन वच काय संभार॥

(गीता छंद)

अरहंत सिद्धाचार्य श्री, उवझाय साधु प्रणाम करि।
जिनवृष जिनालय जैनबिम्ब, सरस्वती को हृदय धरि॥
ये ही परम मंगल जगोत्तम, यही शरण सहाय हैं।
ये ही भवोदधि तरण-तारण, भव्यजन सुखदाय हैं॥

जिनेन्द्रदेव का स्वरूप (कवित्त 31)

विश्व की विभूति को विनश्वर विचार,
जिन, देह गेह सों सनेह त्यागि तप धारा है।
धाराधर सम पाप पुंज को प्रभंजन ह्वै,
करम करिन्द को मृगिन्द बनि मारा है॥
काम क्रोध मोह मद लोभ क्षोभ मान छल,
सकल उपाधि को समाधि से बिडारा है।
पाय बोध केवल सुबोधि दिये जग जन,
ऐसे जिनदेव को नमो नमो हमारा है॥1॥

पगनितैं चलिवे की चाह कछु रही नाहिं,
तातैं पद्मासन लगायो भू मसान में।
करनि तैं करिवो न काज कछु बाकी रह्यो,
तातैं कर पर कर धरि बैठे ध्यान में॥
नासिका की कोर ओर नैनन की दृष्टि जोर,
लागे सब छोर निज आतम विधान में।
कानन में कानन सों सुनत न नाद कछु,
लीन जिनराज स्वातमोपलब्धि ज्ञान में॥2॥
वीरन में वीर है प्रसिद्ध कामदेव वीर,
जाने जग वीरों को अधीर कर डारा है।
ब्रह्मा और विष्णु शिव शङ्कर गणेश शेष,
माधव महेश सुर सुरेश को पछारा है॥
हलधर चक्रधर गदा औ त्रिशूल धर,
पुष्पसर वाले ने सभी को ललकारा है।
विश्वामित्र पारासर आदि ऋषि वश किये,
ऐसो कामदेव जिनदेव ही ने मारा है॥3॥

परमात्मा का स्वरूप

जाके ज्ञान माहिं तिहुँ लोक के पदारथ की,
भूत भावी वर्तमान परियाय झलकत।
जामें क्षुधा तृषा जनम मर्ण राग द्वेष नाहिं,
परम पवित्र वीतरागपन छलकत॥
जाके उपदेश में विरोध नाहिं आदि अन्त,
तारक भवोदधि करत जग जन हित।

वही परमातम परम निरग्रन्थ देव,
ताको ध्यान करत मुकति मग दरशत॥

लघुता (सवैय्या 31)

जैसे कोई आंधो नर तालियाँ बजाय कर,
चाहत है चंचल बटेर को पकरना।
गूँगा नर भरे स्वर, पंगु नर चढ़ै गिरि,
बिना कर वाला चाहै सागर को तरना॥
जैसे शशि प्रतिबिम्ब लखिकै गगन माहिं,
पकड़न हेतु शिशु चाहत उछरना।
तैसे मैं कवित्त करिवे को कियौ उद्यम ये,
लेकर जिनेन्द्र देव ही का एक शरना॥

पुस्तक बनाने का हेतु

जेते समै माहिं पद वाक्य शब्द जोड़ने का,
करेंगे प्रयत्न तौलों रहे शुभ वासना।
जगत के ख्याल विकलप जाल छूटि जाय,
धर्म के कथन सेती चित्त हो उदास ना॥
फेरि इस पुस्तक को पढ़ेंगे अनेक नर,
उनके हृदै में कछु होय भाव-भासना।
ऐसे निज-पर हित हेतु यह रचे हम,
लोभ मान प्रभुता की किंचित् हू आस ना॥

प्रेरणा

एक बार पढ़ि लीजिये पुस्तक आद्योपान्त।
शिक्षाप्रद सुन्दर ललित हैं अनेक दृष्टान्त॥

(कवित्त)

भव्य प्रमोद किताब भव्यजन के हित हेतु बनाई है।
पढ़ौ ध्यान से सुनो ध्यान से ये पुस्तक सुखदाई है॥
जैन अजैन कथावाचक उपदेशक व्याख्याताओं के।
मतलब के दृष्टांत सैकड़ों बाल वृद्ध माताओं के॥

भव्य-प्रमोद

नहीं कड़कती बिजली इसमें नहीं चहकती मैना।
नहीं राग की बातें इसमें नहीं मटकते नैना॥
इसमें बहता शान्ति सुधामय गंगाजी का पानी।
सत्य अहिंसा अपरिग्रह का पाठ वीर की वानी॥
पढ़ो हृदय से सुनो हृदय से शिक्षा उर में लाओ।
पलट-पलट कर पाने इसके वृथा न समय गमाओ॥

धर्म के दश लक्षण

(दोहा)

क्षमा मार्दव आर्जव, सत्य शौच तप त्याग।
आकिंचन ब्रह्मचर्य दश, वृष पालें बड़भाग॥

उत्तम क्षमा

क्षमा और शांति में सुखी रहै सदैव जीव,
क्रोध में न एक पल रहै सुख चैन से।
आवत ही क्रोध अङ्ग अङ्ग से पसेव गिरै,
होठ डसै, दाँत घिसै, आग झरै नैन से॥
औरन को मारै, आपनो शरीर कूट डारै,
नाक भौं चढ़ाय कुराफात बकै बैन से।

ज्ञान-ध्यान भूल जात, आपा-पर करै घात,
ऐसे रिपु क्रोध को भगावो क्षमा सैन से॥

क्रोध का फल

क्रोध कर मरै और मारै ताहि फाँसी होय,
किंचित् हू मारे बोहू जाय जेलखाने में।
जो कहूँ निबल भये हाथ, पाँव, टूट गये,
ठौर ठौर पट्टी बंधी पड़े सफाखाने में॥
पीछे से कुटम्बी जन हाय हाय करत फिरें,
जाय जाय पैरों पड़ैं तैसील रु थाने में।
किंचित् किये तैं क्रोध एते दुख होत भ्रात,
होत हैं अनेक गुण जरा गम खाने में॥

उत्तम मार्दव

ऊँच कुल जाति बल धनैश्वर्य प्रभुता का,
पुण्य उदै पाकर क्या मान करै बावरे।
आपको महान जानि औरन कौ तुच्छ मानि,
पीकै मद मद्य धरै भूमि पै न पाँव रे॥
बड़े बड़े धनी गुनी चक्रवर्ति शहंशाह,
ऊँचे चढ़ गिरे देख खोल तू किताब रे।
तातें अब छोड़ मान सभी को समान जान,
सर्व धर्म में प्रधान मार्दव कौ भाव रे॥

उत्तम आर्जव

कपट कटार से गरीबन का गला काटि,
पाप की कमाई कहौ कै जनम खायेगा।

धोखे छल छिद्र ब्लैक मारकीट से घसीट,
लाख कोड़ि जोड़-जोड़ साथ न ले जाएगा॥
हाकिम आ जाय खूब रिश्वत हूँ खाय देय,
जेल में पठाय उम्र सारी दुख पाएगा।
तातें छल छिद्र छोड़ि कपट कटार तोड़ि,
आर्जव से प्रीति जोड़ि धर्मी कहलायगा॥

उत्तम सत्य

बड़ी नीठि नीठि से मिला है नर जन्म तुझे,
झूँठ बोलि के खराब क्यों करै जबान रे।
कर्कस कठोर दुष्ट झूँठ बैन औरन के,
हृदै को विदार देत बान के समान रे॥
पुरुष सत्यवादी का आदर जहान करै,
झूँठे पुरुषों का कहीं होता नहिं मान रे।
'मक्खन' सा नर्म मिष्ट शिष्ट सत्य बैन बोलि,
वशीकर्ण मंत्र यही कहैं भगवान रे॥

उत्तम शौच

बावड़ी तलाब कूप सागर में स्नान किये,
होत नाहिं शौच गङ्ग यमुना में न्हाने से।
मथुरा वृन्दावन नहिं काशी में शौच होत,
शौच नाहिं मन्दिर शिवालय में जाने से॥
राम राम जपने से पञ्च अग्नि तपने से,
होत नाहिं शौच भाल चंदन लगाने से।
लालच की कीच धोय लेकर सन्तोष तोय,
शौच धर्म होय राग-द्वेष के मिटाने से॥

उत्तम संयम

अश्व तुल्य चञ्चल मनेन्द्रिय पै हो सवार,
सावधान होकै मत छोड़ना लगाम को।
नातर ये पाप गर्त माहिं तोहि डारि जाहि,
धर्म खेत खाय जाय मूल से तमाम को॥
छोड़िकै अभक्षण को छहों काय रक्षा करि,
शिक्षण ले ग्रन्थन से जपो आत्म राम को।
बारै व्रत पालि, रत्न संयम संभालि, विषै-
चोर को निकालि, चलौ निश्चै शिवधाम को॥

उत्तम तप

कर्म शैल तोड़न को वज्र के समान तप,
मोह अन्धकार के विनाशन को भान है।
मिथ्या घनघोर घटा फारन को मारुत है,
पाप पुञ्ज जारन को अग्नि के समान है॥
प्रोषधादि द्वादश प्रकार बाह्य-अभ्यन्तर,
चित्त वृत्ति रोक करौ होय पूर्ण ज्ञान है।
शैल वन गुफा नदी किनारे ध्यानस्थ होय,
तपश्चरण किये पास आवै निरवान है॥

उत्तम त्याग

दीन हीन दुखियों को दया कर दान देहु,
गुणियों को दान देहु मोद को बढ़ाय कै।
द्रव्य हीन धर्मिन को गुप्त द्रव्य दान देहु,
मुनियों को दान देहु भक्ति चित्त लायकै॥

औषध आहार अभै शास्त्र दान चार मुख्य,
शक्ति अनुसार देहु संपति कमाय कै।
दान ही से ऋद्धि-सिद्धि, दान ही से होय वृद्धि,
देहु दान'मक्खन' मनुष्य जन्म पाय कै॥

उत्तम आकिंचन्य

अम्बर को छोड़ के निरम्बर मुनीश हुये,
सम्वर को धार के दिगम्बर कहाये हैं।
होय पर्म हंस कर्म वंश को मिटाय रहे,
आतमीक धर्म में निशंक होय धाये हैं॥
चार बीस ग्रन्थ त्याग लगे ज्ञान मन्थन में,
वे ही निरग्रन्थ संत ग्रन्थन में गाये हैं।
आस फाँस छेदत जे कर्म शैल भेदत जे,
आकिंचन धारी मुनि सभी को सुहाये हैं॥

उत्तम ब्रह्मचर्य

ब्रह्म आतमा में ब्रह्मचारी सदा काल रमैं,
चित्त में न होय कभी कामदेव वासना।
अप्सरा समान खड़ी देख दिव्य नारियों को,
किञ्चत् हू आवै जिनके विकार पास ना॥
रात भर सुदर्शन से रानी ने रारि करी,
निर्विकार सेठ किया ब्रह्मचर्य नास ना।
ब्रह्मचारियों पै पड़ैं संकट अनेक आन,
धैर्य से सहन करें होत हैं हतास ना॥

ज्ञान चेतनाष्टक (सवैया 31)

आग में जलत न, तुषार में गलत नाहिं,
पड़ी पड़ी जल माहिं गलने न वाली है।
आरे सों न कटै, बटवारे सों न बांटी जाय,
हरी, लाल, पीली, श्वेत, गुलाबी न काली है॥
ठोके से ठुकत नाहिं, रोके से रुकत नाहिं,
पौनसों न सूखत, अंधेरी न उजाली है।
हलकी न भारी, गीली, रूखी, चीकनी न,
अजर अमर ज्ञान चेतना निराली है॥1॥

शर्मा, वर्मा, गुप्ता, शूद्र जामें चारों वर्ण नाहिं,
स्त्री पुं-नपुंसक तीनों लिंगन से खाली है।
सुर नर पशु नारकी न चारों गति जामें,
नाहिं जाति-पाँति ऊँच-नीच कुल वाली है॥
मात तात भ्रात सुत नारि बाबा दादी नाहिं
मामा मामी नाना नानी जीजी है न साली है।
निराबाध, निरद्वन्द, शुद्ध, बुद्ध, पर्म ब्रह्म,
अजर अमर ज्ञान चेतना निराली है॥2॥

सूक्ष्म स्थूल शब्द रस स्पर्श गंध वर्ण नाहिं
भू जल अनल पौन वृक्ष है न डाली है।
शैव सांख्य मीमांसक जैमिनी न जैन बौद्ध,
चारवाक शून्य न वेदांत न्याय वाली है॥
सारेगम पधनीसा जामें सातों स्वर नाहिं,
माल कोष भैरवी न गजल कवाली है।

सल्लक्षण स्वतःसिद्ध स्वसरूप, स्वसहाय,
अजर, अमर ज्ञान चेतना निराली है॥3॥

गूजर जुलाहा तेली तमोली कुम्हार नाहिं
नाई धोवी दरजी न जाट है न माली है।
धीवर चमार मनिहार नहिं स्वर्णकार,
बढ़ई लुहार नहिं पटवा कलाली है॥
लोधी छीपी कोली रंगरेज हलवाई नाहिं,
धानक अहीर भड़भूजा न हलाली है।
ये तो सब जातियाँ विविध व्यवहार कृत,
इनतैं अतीत ज्ञान चेतना निराली है॥4॥

हाथी घोड़ा गाय भैंस भेड़ बकरी न ऊँट,
वानर बिलाव मूषा सूसा न श्रृगाली है।
चीता शेर रीछ स्वान बाज न कपोत भेष,
चील चमगादड़ चकोर न मराली है॥
काक पिक हंस वक कच्छ मच्छ मृग मीन,
वत्तक मयूर खर सर्प है न व्याली है।
ये तो पशु जातिनाम नामकर्म उदै होत,
इनतैं अतीत ज्ञान चेतना निराली है॥5॥

भूतनी व्यंतरी पिशाचिनी न यक्षिनी न,
डाकिनी न साकिनी न चामड़ वैताली है।
चण्डिका न अम्बिका न भैंरों पद्मावती न,
दुर्गा जगदम्बा न भवानी है न काली है॥

सेडू शीतला न पीर पैगम्बर शैय्यद न,
सूरचन्द्र इन्द्र क्षेत्रपाल न दिग्पाली है।
ये तो सुर असुर नाम नामकर्म उदै होत,
इनतैं अतीत ज्ञान चेतना निराली है॥6॥

हाथ पांव पेट पीठ जंघा नख केश नाहिं,
नासिका नयन मुख उर न कपाली है।
भाल भौंहि पलक कपोल कंठ कर्ण ओठ,
कंधा कुच नाभि नाहिं अस्थि संधि जाली है॥
कूला कांखि पसली नितंब आंगुली हथेली,
राधि रुधिरादि मलमूत्र की न नाली है।
एतो आंगोपांग नामकर्म कृत अंग भेद,
इनतैं अतीत ज्ञान चेतना निराली है॥7॥

जामें राग-द्वेष पाप-पुण्य बन्ध-मोख नाहिं,
आदि-मध्य-अन्त नाहिं ऊरध-पताली है।
जामें भूख-प्यास आस-त्रास स्वामि-दास नाहिं,
शोक-भय वर्जित अनंत शक्तिशाली है॥
विश्व के समस्त तत्त्व की समस्त परियाय,
भूत-भावी-वर्तमान ज्ञायक त्रिकाली है।
निर्विकल्प 'मक्खन' न अक्खनतें लखी जाय,
अनादि-निधन ज्ञान चेतना निराली है॥8॥

आयु गले मन न गले ना गले आशा जीव की।
मोह स्फुरे हित न स्फुरे, यह दुर्गति इस जीव की॥

भक्त्याष्टक (सवैया 23)

काहू को भोगमनोग कियो तुम काहू को स्वर्ग विमान बसायो।
काहू को नाग नरेशपती काहु रिद्धि सुसिद्धि भंडार भरायो॥
काहू को कर्म कलंक मिटाय तुम्हीं शिव थानक में पहुँचायो।
ऐसे दयालु प्रभू अवलोकत आँखन को फल आजहि पायो॥1॥

पावक कुंड सती सिय को तुम ही सर वारिज युक्त बनायो।
मर्दन मान दुशासन को करि द्रोपदि कौ तुम चीर बढ़ायो॥
सेठ सुदर्शन शूलि चढ़ौ तब आपहि बिष्टर[1] पै पधरायो।
ऐसे दयालु जिनेश्वर को लखि आँखन को फल आजहि पायो॥2॥

अंजन चोर महान अघी तुम ही वृष दे भव पार लगायो।
मेटि सुलोचन की तनुजा दुख ग्राह गृह्यो गजराज छुड़ायो॥
शूकर कूकर भील जनंगम ऊँच रू नीच सभी अपनायो।
ऐसे दयालु जिनेश्वर को लखि आँखन को फल आजहि पायो॥3॥

पावक नीर कियो अहिमाल सुसागर गोपद तुल्य बनायो।
सिंह कुरङ्ग महीधर तें गृह खड्ग सु पुष्प विषामृत थायो॥
भक्तन पै जहं पीर पड़ी तहं आप ही ने उरझो सुरझायो।
ऐसे दयालु जिनेश्वर को लखि आँखन को फल आजहि पायो॥4॥

एकियभाव बनावत ही तुम वादि मुनीश्वर कुष्ठ मिटायो।
चालिस आठ कपाट खुले मुनी मानतुंग उपसर्ग हटायो॥
निर्विष कीन धनंजय को सुत बौद्धन तैं अकलंक जितायो।
ऐसे दयालु प्रभू अवलोकत आँखन को फल आजहि पायो॥5॥

1. सिंहासन

टेकत पांव कपाट खुले जग माहिं मनोरम का यश छायो।
सोमा सती अति शीलवती कर लागत ही अहिमाल बनायो॥
सागर पार कियो सिरीपाल सु रैनमजूषहि शील बचायो।
हे प्रभु दीनदयाल तुम्हैं लखि आँखन को फल आजहि पायो॥6॥

सज्जन रंजन कर्मन गंजन पाप प्रभंजन भर्म नशायो।
दुष्कृत वारण सुकृतकारण भौदधितारण पोत बतायो॥
इन्द्र धनेन्द्र खगेन्द्र मृगेन्द्र नरेन्द्र फणेन्द्र मुनीन्द्रनि ध्यायो।
तारण-तर्ण तुम्हैं अवलोकत आँखन को फल आजहि पायो॥7॥

काम न क्रोध न लोभ न क्षोभ न राग न द्वेष न मोह न मायो।
जन्म न मर्ण न शर्ण न कर्ण न रोग न शोग वियोग नशायो॥
हर्ज न कर्ज न गर्ज न दर्ज न मर्ज न कोऊ प्रकार बतायो।
ऐसे दयालु जिनेश्वर को लखि आँखन को फल आजहि पायो॥8॥

दानाष्टक (सवैया 31)

जिनकी कमान तैं अमान बने सारे भूप,
रूप लखि रति पति भयों छवि छीनों है।
ज्ञान मान दान में समान न जगत माहिं,
विभव विलौकि के विभव पति हीनौ है॥
भुवन उतंग परिवार में न जंग नित्त,
चित्त में उमंग चंग बजे काल तीनौ है।
कुटम कबीला घर माहिं होय लीला,
जिन पूरव जनम में महान दान दीनौ है॥1॥
दान ही सौं राजपाट बनी है हवेली हाट,
दीखत विराट धन धान्य यह गहना।

अश्व गज मोटर फिटन यान बैठि चलैं,
यार गार चाकर अनेक संग रहना॥
नौवत नगारे बजैं आठों याम द्वारे,
बनें जगत के प्यारे सब धन्य धन्य कहना।
पूरब जनम जिन दीने हैं महान दान,
तिन्हें शुभ कर्म उदै होय यहां लहना॥2॥
दान ही सौं मान सनमान होत जगत में,
दान ही से शत्रु हू सुमित्र बनि जात है।
दान ही सौं देश परदेश में सुयश मिलै,
दान सौं स्वजन परजन हरषात है॥
दान ही सौं सर सी. आई. ई. रायबहादुर,
दान ही सौं दानवीर पद मिलि जात है।
दान ही सौं सिंघई सवाई शिरीमंत सेठ,
दान ही सौं राव राजा भूषण कहात है॥3॥
दान ही सौं बैंकर रईस साहू जमीदार,
जी हजूर सरकार कहैं सब आयकै।
दान ही सौं राज माहिं दान सौं समाज माहिं,
करैं सब लाज सर ताज बनै जाय कै॥
दान ही सौं इन्द्र धरणीन्द्र चक्रवर्ति होय,
पावै निर्वाण पद करम नशाय कै।
'मक्खन' सुपात्रन कौं चहु विधि दान देय,
सफल बनाओ निजसंपति कमाय कै॥4॥
दुखिया दरिद्री दीन विधवा अनाथन की,
करि कै सहाय धन सफल बनाय लेहु।

पूरब कमाई सो तौ पाई अब यहां आय,
अब की कमाई परभव पहुंचाय देहु॥
गुरूकुल विधवा अनाथालय विद्यालय,
खोल कै जगत में सुयश प्रगटाय देहु।
रहै न दुखारी नर नारी कोऊ देश माहिं,
करौ दस्तकारी जारी बेकारी मिटाय देहु॥5॥
रोगिन को कर दो निरोगी दवाखाने खोल,
बिना मूल्य धरमार्थ औषधि बटाय देहु।
असमर्थ नौजवान छात्रन को छात्रवृत्ति,
करिकै नियुक्त युक्त शिक्षण दिलाय देहु॥
देश देश गांव गांव भेज उपदेशकों को,
शोर जैन धर्म को जहां में मचवाय देहु।
सत्य स्याद्वाद शुद्ध कंचन समान धर्म,
न्याय की कसौटी पै सभी को जंचवाय देहु॥6॥
पूजा औ प्रभावना प्रतिष्ठा में लगाओ धन,
लाखों जैन शास्तर छपाय के बटाय देहु।
जैन मन्दिरों के अग्रभाग करौ मानस्तम्भ,
तिनमें विशाल प्रतिमायें पधराय देहु॥
जैन औ अजैनन को दूर ही से दर्शन हों,
नीच और ऊँच का विवाद ही मिटाय देहु।
जीरण उद्धार करवाय जैन भवनों का,
स्वर्ग मुक्ति जाने का तमस्सुक लिखाय लेहु॥7॥
जलहु बहाय देत आग हू जलाय देत,
चोर चोरि लेत भूप छीन लेत छिन में।

भूमि गढ़ौ धन ताहि यक्ष हू हटाय देत,
शस्त्र को दिखाय डांकू लूटि लेत दिन में॥
भाई बन्धु देखें कब मरे तौ हमारे आवै,
पूत जो कपूत फैंक देति विषयन में।
'मक्खन' धरौ न धन जोरि के तिजोरिन में,
दान पुन्य करौ यश पावौ जगजन में॥8॥

चेत चेत नर चेत !

यमाष्टक (सवैया 31)

हाथी-घोड़े-पालकी, पयादे, रथ नाल की,
तिजोरी भरी माल की न साथ तेरे जायेंगीं।
महल अटारियाँ ये, कारखाने कोठियाँ ये,
मिल रू मशीनें सभी पड़ी रह जायेंगीं॥
बेटा-बेटी पोता-पोती मात, तात, भ्रात, नारि,
नानी, दादी बुआ, बैंनें खड़ी हो लखायेंगीं।
काल की कराल, बिकराल तलवार आगे,
बड़े-बड़े योधाओं की ढालैं टूट जायेंगीं॥1॥
जब यमराज मुँह फाड़िके दहाड़े आनि,
तब जग प्राणियों के प्राण कांप जायेंगे।
हलधर चक्रधर, गदा औ, त्रिशूल धर,
तोप तेग तीर वाले सभी भय खायेंगे॥
डॉक्टर, हकीम, वैद्य, जंत्र मंत्र तंत्र वाले,
भूत प्रेत व्यंतर न कोई बच पायेंगे।
स्वरग पाताल वासी, जलथल बिल वासी,
अन्तक के मुँह में सभी समाय जायेंगे॥2॥

रावराजा, साहूकार, जमींदार, फौजदार,
यमराज काहू से न रिश्वत खायगा।
काहू के अनेक पूत, काहू कै हो एक पूत,
किन्तु कभी किसी पै रहम नहीं लायगा॥
दिन होय रात होय, शाम होय, प्रात होय,
आंधी मेह शीत धूप में न घबरायगा।
चाहे बड़े बड़े घड़ियाल घड़ी फेल होंय,
यम की घड़ी में न फरक पड़ पायगा॥3॥
चाहे कोटि किले खाई खंदक में जाय छिपो,
चाहे गिरि कंदरा में बैठि जाउ जायकै।
चाहे मेरू पर्वत की चोटी पर चढ़ जाउ,
चाहे महासागर में धसौ गोते खायकै॥
चाहे शेषनाग की शरण माहिं चले जाउ,
चाहे बैठो जंगल में कप्पाली लगायकै।
'मक्खन' त्रिकाल में अकाल में न छोड़े काल,
महा अन्धकार में से ढूंढ़ लावे जायकै॥4॥
राम कृष्ण लक्ष्मण युधिष्ठिर भरत भीम-
रावण सुग्रीव विभीषण हनुमान से।
कुम्भकर्ण इन्द्रजीत मेघनाथ दशरथ-
नल नील नकुल चले गये जहान से॥
कर्ण कंस अर्जुन लवांकुश भामंडल से-
चन्द्रगुप्त नृपति अशोक बलवान से।
यम की चपेट की झपेट से न बचे कोई-
चारूदत्त भामाशाह सेठ धनवान से॥5॥

तीर्थंकर चक्रवर्ति नारायण वासुदेव,
कुलकर कामदेव नारद कहाँ गये।
शंकर गणेश शेष ऋषि मुनि साधु संत,
संन्यासी महंत काल गाल में समा गये॥
सैंकड़ों हजारों लाखों वर्षों पुरानी बातें,
इतिहासकार हमें यही बतला गये।
आये थे जहान में जहान से वे चले गये,
'मक्खन' तुम्हारे भी नजीक दिन आ गये॥6॥
बंगाली पहाड़ी चीनी जापानी बुन्देलखंडी,
काबिली बिलोचिस्तानी कोई भी बचे नहीं।
सिन्धी मदरासी गुजराती मारवाड़ी रूसी,
पंजाबी बिहारी पाकिस्तानी कहो हैं कहीं॥
बर्मी सिंगापुरी जर्मनी न सरहद्दी रहे,
अर्बस्थानी, तुर्किस्तानी, राजस्थानी भी नहीं।
मूठी बांधे आये थे, पसारै हाथ चले गये,
'मक्खन' जगत के तमाशे वहां के वहीं॥7॥
बाबा को न छोड़ा, ताऊ चाचा को न छोड़ा,
मात तात भ्रात नारि यार खाके न अघाया है।
राजा रंक धनी निर्धनी, रोगी शोगी भोगी,
बाल वृद्ध तरुण को मुंह में दबाया है॥
भंगी भटियारा भांड रंडी मुंडी दंडी रांड,
शर्मा वर्मा गुप्ता शुद्र मारि-मारि खाया है।
दानी स्वाभिमानी ज्ञानी ध्यानी पापी पुण्णी मारे,
'मक्खन' इसी से समवर्ती नाम पाया है॥8॥

जरा विचार तो कर ! (कवित्त)

जो है मंजूर धन रक्षा तो धनवानो बनौ दानी,
कूये से जल न निकलेगा तौ सड़ जायेगा सब पानी।
दिया जल हमको बादल ने तो ऊँचा हो गया बादल,
रहा नीचा ही सागर है अदाता को पशेमानी।
कोई धन दे के मरता है कोई मरकर के देता है,
जरा से फर्क से बन जाते हैं ज्ञानी से अज्ञानी।।1।।

(सवैया 23)

जा दिन काल कराल गहै कर,
आनिकै कोई न तेरो बचैया।
तोप रू तेग मशीन गनें,
यमराज को रोक सकै न लठैया।।
देखत ही रह जाँय सभी,
परिवार सुता सुत मात रु भैया।
भूमि मकान दुकान पड़े रह जांय,
न साथ में जाय रुपैया।।2।।
आयो अकेलौ अकेलौ हि जायगो,
साथ चलैं नहिं हाठ हवेली।
मात पिता परिवार सहोदर,
ताउ चचा सुत नारि सहेली।।
राज समाज सजे गज बाज न,
आवत काज टका रु अधेली।
'मक्खन' विश्वविभूति विसारि,
चले कर झार पसार हथेली।।3।।

जब संसार में ऐसे-ऐसे भी न रहे, तब तूने अपने बारे में क्या सोचा है ? (सवैया 31)

कैसे कैसे भारत में हो गये प्रचण्ड भूप,
जिनकी अखण्ड छहौं खण्ड आन मानी है।
रामचन्द्र रावण को जीत त्रिखण्डेश बने,
हनूमान तोड़ी गढ़ लंक राजधानी है।।
कृष्णचन्द्र चक्र तें नवाये बहु बक्र भूप,
भीम की गदा तें सर्व भूमि थररानी है।
गान्डीव धनुष चढ़ाय वीर अर्जुन ने,
तीर मार भूमि तें निकासि दियो पानी है।।1।।

चंद्रगुप्त भूप ने अभूप किये भूप बहु,
जाकी देश देशों में पताका फहरानी है।
पृथ्वीराज लड़ौ गजनी सों सतरै बार,
राणा परताप को प्रताप नहीं छानी है।।
शिवाजी मराठा ने निकाली ऐंठ यवनों की,
रणजीतसिंह तेग काबुल में तानी है।
ऐसे आन-वान वाले भूप भी न रहे आज,
रही शेष 'मक्खन' किताबों में कहानी है।।2।।

ज्यौं मन विषयों में रमें त्यौं हो आतम लीन।
शर्म जनक जन्मो टले पिए न जननी क्षीर।।

साथ नहीं जायेगा

कंचन के आसन औ वासन हू कंचन के,
कंचन की चौखटें किवाड़ हू चढ़े रहे।
जेवर जवाहिराति पांसे गिन्नियों से भरी,
लोहे की तिजोरिन में ताले ही जड़े रहे॥
अश्व गज लारिया सवारियाँ अनेक भांति,
कोठियाँ मकान हाट ठाठ सब पड़े रहे।
देह हू न लार 'मक्खन' रहे निहार,
मात तात भ्रात पुत्र पुत्रियाँ खड़े रहे॥1॥
सज्जन धरमातमा महंत संत आतमा,
पुनीत पुन्यवान ज्ञानवान हू चले गये।
राजे महाराजे नृप छत्रपती शहंशाह,
चक्रधर मुरारी काल चक्र तें दले गये॥
जंत्र मंत्र तंत्र बाज शूरवीर वैद्यराज,
सब ही यमराज की चपेट से मले गये।
अर्ब खर्ब लक्ष कोड़ि वैभव महान जोड़,
'मक्खन' यहाँ ही छोड़ साथ कछु नहिं ले गये॥2॥
पलटन रिशाले बन्दूक तोप तेग वाले,
गोरे अरु काले सब एक दिना जायेंगे।
देश ग्राम वासिन के स्वामि दास दासिन के,
शैल वन प्रवासिन के वास हू न पायेंगे॥
भू नभ गिरि कंदर में जा छिपौ समंदर में,
कोटि किले मंदिर में हूँ न बच पायेंगे।
भले बुरे ऊँच नीच मानुष जहान बीच,
'मक्खन' सब चार हाथ भूमि में समायेंगे॥3॥

पुण्य पाप का फल (सवैया 31)

पुण्य उदै आवै धन छप्पर को फाड़ कर,
पाप उदै भागत तिजोरिन कौ तोड़ कै।
पुण्य उदै शत्रु हू सुमित्र बन जाँय सब,
पाप उदै मित्र गण चलैं मुँह मोड़ कै॥
पुण्य उदै दुग्ध घी मलाई खीर खांड खाय,
पाप उदै भूखे पड़े पेट को मरोड़कै।
पुण्य उदै पहरत कामखाब मखमल,
पाप उदै ढकै तन टाट जौड़ि-जौड़ि कै॥1॥
पुण्य उदै अश्व रथ मोटर में बैठ चलैं,
पाप उदै बीस कोश नांगे पग दौड़ते।
पुण्य उदै रहैं सत मंजिली हवेलिन में,
पाप उदै टूटी सी झुपरिया में पौंढ़ते॥
पुण्य उदै सैकड़ों लगे रहें खवास दास,
पाप उदै दूसरों की धोतियाँ निचोड़ते।
पुण्य उदै जिन्हें देख मानते सफल जन्म,
पाप उदै उन्हें देख नाक भौं सकोड़ते॥2॥
पुण्य उदै बैठ के सिंहासन पे राज्य करें,
पाप उदै वे ही नर सूली पै लटकते।
पुण्य उदै जिनके अटूट धन सम्पत्ति है,
पाप उदै वे ही कानी-कौड़ी को भटकते॥
पुण्य उदै जिनके चरण में पड़त जग,
पाप उदै शीश चर्ण औरों के पटकते।

पुण्य उदै जिनका हुकम मानता था जग,
पाप उदै उन्हें तुच्छ मानुष झटकते॥3॥
पुण्य उदै जिनके ढुरैं थे सिर छत्र चँवर,
पाप उदै वे ही अब नांगे सिर फिरते।
पुण्य उदै स्वागत करै था जिनका जहान,
पाप उदै उन्हें देख गालियाँ उचरते॥
पुण्य उदै जहाँ राग रंग नाच कूद होय,
पाप उदै उसी ठौर हाय-हाय करते।
पुण्य-पाप उदै फल भोगत जगत जन,
'मक्खन' करम भोग टारे नाहिं टरते॥4॥

कर्म की विचित्रता (सवैया 31)

कोई खाय मोदक मलाई घृत खीर खांड़,
काहू को मिलत नाहिं रूखे सूखे टुकड़े।
कोई मखमल के गदेलन पे पौढ़ि रहे,
कोई ककरीली भूमि पड़े सहैं दुखड़े॥
कोई नित भूषण बसन धारै नये नये,
काहू को मिलत न पुराने फटे चिथड़े।
कोई न्हाय साबुन फुलेल तेल मल-मल,
कोई फिरै दीन धूल कीचड़ में लिथड़े॥1॥
कोई गज वाज रथ मोटर में बैठ चलैं,
कोई पग नंगे शीत धूप में विचरते।
कोई सत मंजिल महल में निवास करें,
कोई टूटी फूंस की झुपरिया में परते॥

कोई गोद सुता सुत पौत्र को खिलावत हैं,
कोई रात-दिन बिन संतति के झुरते।
'मक्खन' करम रेख मेटि न सकत कोई,
पुण्यपाप उदै जीव सुख-दुख भरते॥2॥
कोई सुख चैन रैन नींद भरि सौवत हैं,
कोई जाग रात भर देत रहैं पहरा।
कोई खाय पी कै जूठे वासन पटक देत,
कोई मांज मांज धोय धोय धरैं महरा॥
कोई खेती बारी क्यारी गाँवन में सींचत हैं,
कोई जौहरी की हाट खोल बैठे शहरा।
करम नचावैं जैसे नाचत जगत जीव,
काहू को उतारै काहू डोबै जल गहरा॥3॥
कोई क्षण भर में हजारों की कमाई करै,
कोई दिन भर में कमावै एक आना ना।
कोई छोटे पन ही में ग्रेजुएट शास्त्री होय,
कोई सारी उमर में अक्षर हू जाना ना॥
कोई लक्ष कोटि जोरि-जोरि धन कोश भरै,
काहू के तो पास एक कौड़ी का ठिकाना ना।
'मक्खन' करम कौ विचित्र बरतावा देखो,
बिना सर्वज्ञ जाकौ भेद काहू जाना ना॥4॥

यदि मोक्ष की है कामना तो जीव नृप को जानिए।
अनुसरण उसका ही करें अतिप्रति से पहिचानिए॥

अशुभ कर्मोदयाष्टक (सवैया 31)

जिनके दुआरे पर द्वारपाल पैरा देत,
हाथी घोड़े बग्गियों में बैठि-बैठि चलते।
रबड़ी मलाई घृत दूध के कटोरे भरे,
भोजन के लिये पिस्ते बादाम उबलते॥
मुनीम गुमासते किलर्क बही खाते करें,
नौकर अनेक तेल साबुन मसलते।
अशुभ करम आया दिनों ने पलट खाया,
वे ही आज औरन के टुकड़ों पै पलते॥1॥
हीरा मोती माणिक के कुंडल मुकुट हार,
नीलम के कंठे पैरि बैठते थे सभा में।
ग्रीषम के दिनों में महल सत मंजलौं पै,
बैठि केलि करते थे चन्द्रमा की प्रभा में॥
पहरें थे कीमखाव रेशमी जरी के वस्त्र,
झम झम झमकें थे सूरज की आभा में।
अशुभ करम आया दिनौं ने पलटा खाया,
वे ही भूखे नंगे फिरें शीत धूप हवा में॥2॥
नौवत नगारे सुन उठते थे प्रात समै,
वन्दीजन बिरद बखानते ले नाम को।
बंगले हवेली कोठियांयें सजी रहती थीं,
नौकर भरें थे बोरी अगणित दाम को॥
अतिथि अनेक नित आया जाया करते थे,
जाते न निराश जो आते थे किसी काम को।

अशुभ करम आया दिनों ने पलटा खाया,
वे ही आज तर्श रहे दमड़ी छदाम को॥3॥
जिनके थे आठ सात बेटे नाती पोते बीस,
आदर हुआ करै था जांय थे जहाँ कहीं।
एक दो विवाह हुआ करते थे हर साल,
नौबत नगारे सहनाई बजती रहीं॥
धन था अटूट घोड़े बग्गी गायें भैंसें बंधी,
नदियां फिरैं थी दूध दही की बहीं बहीं।
अशुभ करम आया दिनौं ने पलटा खाया,
आज नाम लेवा पानी देवा भी रहा नहीं॥4॥
जिनका था लैन दैन क्रोड़पती फरमों से,
उन ही पै हो रही हैं नालिसैं जहान की।
किले के समान बड़ी हवेली नीलाम हुई,
बोली बुल रही है बाजार में दुकान की।
देने वाले देंय नहीं लेने वाले द्वार खड़े,
छिप कर बैठे देकै सांकल मकान की।
अशुभ करम के उदै से कैसी दशा भई,
इज्जत बिगाड़ गई बड़े धनवान की॥5॥
बन्दगी सलाम जैजिनेन्द्र राम राम श्याम,
करें थे नमस्ते लोग द्वार पर जायकै।
कोई कहैं बाबू कोई मुंशी जी नबाब कहैं,
लाला सेठि मीयां कहैं मस्तक झुकायकै॥
जिनकी नजर टेड़ी देखिकै डरें थे सब,
होंय थे प्रसन्न जब बोले मुशिकायकै।

अशुभ करम आया दिनौं ने पलटा खाया,
देखि-देखि हंसें उन्हें तालियां बजाय कै ।।6।।
जिनकी हवेलिन में नाना भांति चित्र लगे,
द्वार पर पंच वर्ण पड़ी हुई चिकैं हैं।
महमान रिस्तेदार अतिथि पधारते थे,
उनके लिये मिष्ठान्न पूड़ियायें सिकैं हैं।।
जेवर जवाहिरात भरे थे तिजोरिन में,
कूड़ेन में झड़ि मोती मूंगे रत्न फिकैं हैं।
अशुभ कर्म आया दिनौं ने पलटा खाया,
वे ही आज दमड़ी के तीन तीन बिकैं हैं।।7।।
जिनके गरभ से भी षट् मांस प्रथमहिं,
देवों ने रतन बरषाये हरषायके।
जन्मत ही देवों ने सुमेरू परवत पर,
न्हवन किया था छीरोदधि जल लायके।।
प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव भगवान,
आप प्रजापति पुत्र चक्रवर्ति पायके ।
अशुभ करम आया दिनों ने पलट खाया,
षट् मास भूखे फिरे देश देश जायके।।8।।

अब तो अपनी सुधि ले लो

देखलो नवाबों की नवाबी नहीं रही आज,
काल थे नबाब वे कबाब आज हो गये।
राजाओं की राजगद्दी छिनक में छिनि गई,
हंसते थे काल देखो आज वही रो गये।।

बड़े-बड़े जमीदारों की न जमीदारी रही,
रायसाब रायबहादुर कहाँ खो गये।
जिनके पेशाव में चिराग जला करते थे,
'मक्खन' वे बेचिराग में ही पड़े सो गये।।1।।
जिनके सहारे से फलैं थे सैकड़ों गृहस्थ,
उनहीं के घर आज भोजनों का टोटा है।
जिनके थीं क्लॉथ मिलें फैक्टरी उन्हीं के आज,
सर पर टोपी नहीं कटि पै लंगोटा है।।
प्रात होत राजगद्दी जिनको थी होने वाली,
उनही को मिला चौदे बर्ष का दिसोटा है।
हा-हा रे करम तेरी गति नहिं जानी पड़ै,
छिन में सुखावे छिन माहिं करै मोटा है।।2।।
आँखें मीचि सोये प्रात ये करेंगे ये करेंगे,
रुकि गया सांस आँखें मिची की मिची रहीं।
योधा रणमाहिं चले औरन के मारने को,
मरि गये आप तेगें खिंचीं की खिंचीं रहीं।।
हल ले किसान चला क्यारियों के सींचने को,
मारी बैल लात क्यारी सिंचीं की सिंचीं रहीं।
खेल खेल खेलि गये'मक्खन' हजारों लाखों
चौपड़ें जहां की तहां बिछी की बिछी रहीं।।3।।

"**पुराकृतं कर्म योग्यता च दैवं**" – *आचार्य अकलंकदेव*
अर्थ – पूर्वकृत कर्म का उदय और उस जीव की
उस अवस्थारूप होने की योग्यता भाग्य है।

फकीर

किसी आदमी ने एक फकीर से पूछा –

ओ रे ओ फकीर तू फकीर सा न लगे यार,
चहरे पै तेज तेरा उन्नत ललाम है।
बोला मैं तो था अमीर अब हो गया गरीब,
फूटी तकदीर पेट भरना हराम है॥
गाम क्या है ? रत्नगढ़, नाम क्या ? किरोड़ीमल,
काम क्या है ? पीडियों से जौहरी का काम है।
गर्दिश के आये दिन बिगड़ते न लगा छिन,
पास में न रहा दाम जलि गया धाम है॥

मजदूर

एक मजदूर से किसी ने पूछा–

ओ रे मजदूर तें ये रचा क्या अनोखा सांग
सर पर पोट तेरा रेशम का कोट है।
बोला ये न पूछो बात कहे तें पसीजे गात
फूटी तकदीर लगी लाखन की चोट है॥
भरि के जहाज चला माल बेचने विदेश
टक्कर शिला की लगी फटि गया बोट है।
माल का न ख्याल किया जान को बचाय लिया
करूँ मजदूरी अब शिर धरि पोट है॥

सुख माने भोगों में तू तो, समझे मैंने भोग किया।
जबकि तुझको ही भोगों ने, भोग-भोग कर छोड़ दिया॥

झूठे सुख की आशा में यूँ , निज को तूने भुला दिया।
धर्म सहाई 'प्रेम' जगत में, क्यों नहिं उसका साथ लिया॥

भाग्य बिना कछु हाथ न आवै

सिंधु धसै गिरि पै निवसै, अति दुर्गम कानन छानि छवावै।
फूंकत धातु बनाय रसायन, खोदत भूमि सुरंग लगावै॥
वैद्यक ज्योतिष मंत्र करै नित, व्यंतर भूत पिशाच मनावै।
यों तृष्णावश मूढ़ फिरैं पर, भाग्य बिना कछु हाथ न आवै॥1॥

मात पिता सुत नारि सहोदर, छोड़ि विदेश कमावन जावै।
काटत काठ पढ़ावत पाठ, लगावत हाट कपाट बनावै॥
कृत्य कुकृत्य करै बनि भृत्य, दिखावत नृत्य बजाय रिझावै।
यों तृष्णावश मूढ़ फिरै पर, भाग्य बिना कछु हाथ न आवै॥2॥

शीत सहै तन धूप दहै अति, भार बहै भरि पेट न खावै।
देश विदेश फिरै धरि भेष, महेश बनौ उपदेश सुनावै॥
पाचक वाचक याचक नाचक, गायक नायक रूप बनावै।
पीर फकीर बजीर बनै, तकदीर बिना कछु हाथ न आवै॥3॥

इन्द्र नरेन्द्र फणीन्द्रन के सुख, भोगन को नित जी ललचावै।
कंचन धाम करूँ बिसराम, सदा मम नाम तिहुँ जग छावै॥
नूतन भोग शरीर निरोग, न इष्ट वियोग न रोग सतावै।
यों दिन रात विचार करै पर, भाग्य बिना कछु हाथ न आवै॥4॥

स्वयं किये जो कर्म शुभाशुभ, फल निश्चय ही वे देते।
करे आप फल देय अन्य तो, स्वयं किये निष्फल होते॥

अपने कर्म सिवाय जीव को, कोई न फल देता कुछ भी।
'पर देता है' यह विचार तज, स्थिर हो छोड़ प्रमाद बुद्धि॥

कृत पूरव कर्म मिटै न मिटायो (समस्या)

मात पिता परलोक गये, सुत नारि सभी परिवार नशायौ।
देखत देखत लोप भयो धन, धान मकान निशान न पायौ॥
राज समाज सजे गज बाज, धरे सर ताज न आज रहायो।
शोच प्रवीण कछू न करो, कृत पूरव कर्म मिटै न मिटायो ॥1॥

राम गये वनवास सहोदर, साथ सिया संग कष्ट उठायो।
पांडु कुमार जुए महँ हार, तजे घरवार अहार न पायो॥
आनि पड़ी विपदा नल पै, हरिचन्द महत्तर हाथ बिकायो।
शोच प्रवीण कछू न करो, कृत पूरव कर्म मिटै न मिटायो॥2॥

काहु के नौवत नाद बजै, कोई रोबत नैननि नीर बहायो।
काहु के लाख करोर भरे, कोई रंक भयो कन को तरशायो॥
कोई फिरै वृहना भुवि पै, कोई शाल दुशाल दुकूल उड़ायो।
शोच प्रवीण कछू न करो, कृत पूरव कर्म मिटै न मटायो॥3॥

कोई चढ़े गज बाज फिरैं, कोई धूप समै पग नांगे ही धायो।
कोई भखैं विविधामृत भोजन, कोई क्षुधातुर प्राण गमायो॥
कौउ सुता सुत पौत्र खिलावत, कोई बिना सनातान झुरायो।
शोच प्रवीण कछू न करो, कृत पूरव कर्म मिटै न मिटायो॥4॥

सम्यग्दृष्टि के भाव (सवैया 23)

सुख में नहिं जे नर हर्ष धरैं, दुख में न विषाद करैं मन में।
धन पाकर जे न गुमान करैं, नहिं दीन बनें अधनीपन में॥
तजि वैर विरोध प्रमोद धरैं, लघुता गुरुता न गिनै जन में।
धनि जीवन है उन जीवन का, समभाव धरैं जग जीवन में॥1॥

जबतैं निज आतम रूप लखो, तबतैं न रही दुविधा मन में।
अतिशीतल चित्त पवित्र भयो, सब मोह ममत्व नशो तन में॥
धन धाम कुटुम्ब सभी तजिकै, निवसू गिरि कन्दर कानन में।
पद्मासन बैठि नदी तट स्वातमराम, जपूं इस जीवन में॥2॥
तजिकै गृह वास उदास रहूँ, न फसूँ कबहूँ भव मंथन में।
निज आतमज्योति विकास करूँ, भटकूँ नहिं फेरि कुपंथन में॥
धरि जोग तजूँ भवभोग बुरे, तन नग्न निमग्न रहूँ वन में।
हनि मक्खन कर्म लहूँ शिव शर्म, बनूँ सफली नर जीवन में॥3॥

पाय नर जन्म सार प: महाव्रत धार,
छोड़ि ग्रहभार कब जंगल में जाऊंगा।
देह सों ममत्व त्यागि आतम सों प्रीति पागि,
बैठि कै एकान्त थिर आसन लगाऊंगा॥
मन वच काय को निरोधि शुद्ध ध्यान धरूँ,
घोर उपसर्ग से हू नाहिं अकुलाऊंगा।
पाय बोध केवल सुबोधि बहु जग जन,
लहुं पद सिद्ध वह दिन कब पाऊंगा॥4॥
महल मशान तृण कंचन समान जान,
सुख दुख जीवन मरण सम भाऊंगा।
शत्रु और मित्र मणि कांच अहि फूल माल,
निन्दा थुति माहिं रागद्वेष को नशाऊंगा॥
तजि गृह वास होय जग सों उदास कब,
छेदि मोह फाँस निज आतम को ध्याऊंगा।
नष्ट करि अष्ट दुष्ट कर्मनि की सृष्टि करूं,
मोक्ष में प्रविष्ट वह दिन कब पाऊंगा॥5॥

देह धरे को कहा फल पायो (समस्या)

शैशव काल गयो सब खेलत, शिक्षण में चित नहिं लगायो।
यौवन में तिय संग रमौं नित, कै धन जोड़न को चित चायो॥
वृद्ध भये सब अंग गये थकि, होश हवास सभी विसरायो।
खोय दिये पन तीनौं वृथा नर, देह धरे को कहा फल पायो॥1।

जे शुभ पूरव कर्म विपाक उदै, रस मानुष जन्म लहायो।
कर्म धरा पुनि आरज खेत, त्रिवर्ण महान्वय जाति कहायो॥
पूरण अक्ष निरोग वपुः विपुलायु, धनेश प्रताप बढ़ायो।
स्वानुभवामृत पान किये बिन, देह धरे को कहा फल पायो॥2॥

हाथन सौं नहिं दान दियो नहिं, कानन को जिनशासन भायो।
नैनन सों नहिं साधु विलोकिय, पाँवन सों नहिं तीरथ धायो॥
पेट भरौ धन पाप उपार्जित, गर्व सों काहु न शीश नवायो।
धारि हृदै परमातम भक्ति न, देह धरे को कहा फल पायो॥3॥

पाकर द्रव्य न दान दियो नहिं, भोग कियो धन यों हि गमायो।
ज्ञान उपाय कहा भयो जो न, हिताहित भेद विज्ञान लहायो॥
वाचक शक्ति भये कहा होत न, जीवन को शुभ मार्ग बतायो।
पाय नृजन्म कियो तप त्याग न, देह धरे को कहा फल पायो॥4॥

वीतराग महिमा (सवैय्या तेईसा)

निन्दक सों नहिं रोष करौ तुम, बन्दक पै करुँणा नहिं धारौ।
दुर्जन दुष्टन सौं नहिं बैर न, सज्जन सौं अनुराग तुम्हारौ॥
नीच निकृष्ट अपावन हू नर, पावन हो लखि रूप तिहारौ।
शांति सुधामय देखि मुखाम्बुज, दूरि भयो प्रभु दुःख हमारौ॥1॥

एक सुधी नर फूल मनोहर, लाय रचावत पूज तुम्हारी।
एक कुधी नर पाहन मारत, क्रोधित होकर काढ़त गारी॥
दोउन पै तुमरौ समभाव, न होय कभी तुम चित्त विकारी।
आतमज्योति जगी घट अंतर, वैर विरोध व्यथा वमि डारी॥2॥

सुष्क तलाव भरे जलसों फल, फूल छहौं रितु के फलि जावैं।
शेरनि दूध पिलावत गोसुत, नाहर के सुत गाय चुखावैं॥
मूसक नील भुजंग बिलाव, मयूर परस्पर प्रेम बढ़ावै।
राग विरोध विवर्जित साधु, जहाँ निवसें सब आनन्द पावैं॥3॥

तू न रूठो चाहिये (सवैया 23)

चाहै मात तात सुर नारि यार रूठि जाउ,
कुटुम्ब कबीला परिवार रूठि जाइए,
रूठि जाऊ चाहै क्यों न राजा राव साहूकार,
चाहे देशवासी पुरवासी रूठि जाइए॥
चाहै जाति बिरादर रूठौ पञ्च चौधरी हू,
हाकिम हुक्काम सारे चाहै रूठि जाइए।
साधु संत जंत्र मंत्र वादी सब रूठि जाउ,
एक जिनदेव मोसे तू न रूठो चाहिए॥

कठौती माहिं गङ्ग है (सवैय्या 31)

जाकै राग द्वैष काम क्रोध लोभ क्षोभ नसे,
मिटि गई मोह मान माया की तरङ्ग है।
जाकै इष्टानिष्ट सुख-दुख लाभालाभ सम,
जीवन-मरण पुष्पमाला वा भुजङ्ग है॥

निश-दिन रहें निज ब्रह्म में मगन कछु,
और न लगन एक मोक्ष की उमङ्ग है।
ऐसे सद्बुद्धियों को जगत भी मुक्ति सम,
जो है मन चङ्ग तो कठौती माहिं गङ्ग है॥

ऐसी दशा में भी आत्मा का हित नहीं करता

(सवैया 23)

रोजगार चलै नाहिं दाम है न गांठि माहिं,
आय गयो टोटो भयौ कर्ज सिर भारी है।
लैने वाले मांगत हैं देने वाले देते नाहिं,
हो गई कुड़क ये हवेली हाट सारी है॥
घर माहिं भूखे पड़े बालक विलाप करैं,
खाने की फिकर घरवाली देत गारी है।
ऐसी हू दशा में नहिं करै आत्मा का हित,
अरे मूढ़ प्राणी तेरी गई मति मारी है॥1॥

महल मकान बड़े अश्व गज रथ खड़े,
मोटर फिटर नाना भांति असवारी है।
गाय भैंस बंधी घर चाकर अनेक नर,
लाखन का रोज रोजगार चलै भारी है॥
जेवर जवाहिरात धन कन कंचन है,
बेटा-बेटी पोता पोती दीखत अगारी है।
ऐसी हू दशा में न निजातमा का हित करै,
अरे मूढ़ प्राणी तेरी गई मति मारी है॥2॥

छोटी सी कुठरिया में सैंकड़ों सूराख भये,
वारिस में छत टप टप टपकत है।
गलि गई चौखठि किवाड़ सब टूटि गये,
चूहा नौल साँप चमगादड़ फिरत है॥
टूटी सी खटुलिया में लाखों खटमल पड़े,
काटत हैं रातभर नींद न परत है।
पेट भर खाने को न चीथड़ा लपेटने को,
ऐसी हू दरिद्रता में घर न तजत है॥3॥
अरे जग प्राणी काहे ह्वै रह्यो गुमानी नैक,
धन कन कंचन धरापै इतरात है।
ऊंची ये हवेली नारि सुन्दर नवेली कोई,
साथ नाहिं जात मात तात सुत भ्रात है॥
घोड़े रथ हाथी यार गार संग साथी होय,
कोई न संगाती परलोक जब जात है।
तातें तू गुमान छोड़ि मोह ममता मरोड़ि,
धरम सों प्रीति जोड़ि चाहै कुशलात है॥4॥
वे दिन चितार यार मात कोखि के मँझार,
बसे नव मास सांस सांसन को भटके।
खून मल मूत में लिपटि रहे रात दिन,
ऊपर को पांव सिर नीचा करि लटके॥
स्वर्णकार जैसे तार जंती में से काढैं तैसे,
दाई ने निकासि करि भूमि पर पटके।
हाय हाय आज तुम जोबन के मद छके,
भूलि करि सारी बात विषयों में अटके॥5॥

पर चाह नहीं चित से निकसी (बुढ़ापा)

श्वेत भये बाल दोऊ बैठि गये गाल,
टप टप गिरै राल मुँह पड़ि गयो पुपला।
आँखि दोऊ गढ़ि गई नाशिका मरुड़ि गई,
खाल हू सिकुड़ि गई भाल भयो उपला॥
लकड़ से अकड़ि गये हैं कर पग धड़,
चलत पकड़ि छड़ मुड़ि भयो दुपला।
श्याम भयो रंग सब सूखि गयो अंग भूलि,
गयो राग रंग वृद्ध बैठि गयो चुपला॥1॥
बालपनौ खोय दयो बालन में खेलि खेलि,
मानी नहिं सीख मात तात गुरु भाई की।
यौवन में युवती लगाई गले रात-दिन,
भूलि गयो सुधि धन धर्म प्रभुताई की॥
मध्यम अवस्था में गृहस्थी की फिकरि पड़ी,
मात तात नारि सुत भाई धी जमाई की।
आ गया बुढ़ापा अंग थर-थर काँपा,
भूलि गयो निज आपा लई शर्ण चारपाई की॥2॥

(सवैया 23)

दाँत गिरे रसना तुतरात, बहै मुख लार खखार फंसी है।
कान सुनै न निहारत नैन, विचारन की उर शक्ति नसी है॥
नारि हलै पग हस्त कंपै, कटि बंक भई धनुषाकृति सी है।
होस हवास सभी बिनसे, पर चाह नहीं चित्त से निकसी है॥3॥

मनुष्य जनम वृथा खोने वाला मूर्ख

मूरख कल्पतरूवर काटि, निकेतन में विषवृक्ष लगावै।
कुंजर वेचि बिसावत राशभ, फैंकि महामणि काँच उठावै॥
त्यागि सुधा विष पान करै, गल हार उतारि फणी लटकावै।
त्यों शठ धर्म जिनेश्वर त्यागि, भयो विषयांध नृजन्म गमावै॥1॥

कंचन थाल बटोरि भरै रज, पाय सुधारस सों पग धोवै।
भस्म निमित्त जरावत चन्दन, साज सजे गज ईंधन ढोवै॥
काग जिहाज उड़ावन हेतु, महामणि फैंकि कुधी जन रोवै।
त्यों लहि दुर्लभ मानुष जन्म, विषै सुख कारण मूरख खोवै॥2॥

संगति (छप्पय छन्द)

तपे तबा पर आनि स्वाति जल बूंद बिनट्ठी,
कमल पत्र पर गई वही मोती सम दिट्ठी।
सागर सीप समीप भई मुक्ता फल सोई,
संगति को परसंग प्रगट देखो सब लोई॥
ह्वै नीच संगतें नीच फल मध्यम तें मध्यम सही।
उत्तम प्रसंगतें जीव को उत्तम फल प्रापति कही॥

(दोहा)

संगति कीजै साधु की, हरै और की व्याधि।
ओछी संगति नीच की, आठौ पहर उपाधि॥
नीच निकट बसिये नहीं, बिना दोष दुख होय।
जलह चुरावै जलघरी, झालर पीटैं लोय॥

– भूधरदास कृत

नीति (सवैया 23)

जा पुर वैद्य धनी नहीं होय, न पंडित हो न बहै जल धारा।
होय नरेश न हो उपदेश, न धर्म सभा नहिं ठाकुर द्वारा॥
जाति बिरादर बंधु नहीं, न धनागम होय नहीं रुजिगारा।
होय न आदर भाव जहाँ, तिहिं देशहि को परिणाम हमारा॥1॥

जहाँ चन्दन चम्पक अम्ब उखारि लगावत कीकर आक धतूरा।
जहाँ गर्दभ घोटक भैंसि गयंद बिकैं इक भाव कपास कपूरा॥
जहाँ काक उलूक छछुंदर पालि उड़ावत कोकिल हंस मूयरा।
तहाँ बास करौ मति भूलि जहां इक से शठ-पंडित कायर शूरा॥2॥

जहाँ नाहर रीछ गयंद फिरैं तिस कानन में रहि लेना भला।
करिवास महीरूह कोटर में भरि पेट वनस्पति फूल फला॥
निशि सोय महीपर घास बिछा तन ढाँकि अनोकुह के वकला।
पर निर्धन होकर बंधुन के घर जैये न भूलि ये मेरी सला॥3॥

जहाँ आदर भाव नहीं अपना तिहिं ठौरपैं भूलिकै जैये नहीं।
जिनसौं अपनी मरजी न मिलै, तिनसौं मन की कछु कहिए नहीं॥
तजना शुभ प्राण भले संग में पर कूरन के संग रैये नहीं।
सनमान का भोजन रूक्ष भला बिन आदर अमृत पैये नहीं॥4॥

सुसराल में जाकै जमाई रहै बहनोई के शाला रहै घर जा॥
सनमान घटै अभिमान घटै अरु स्वान समान मिलै दरजा॥
घर माहिं प्रमादी निठल्ला पड़ै अपने सर पै करले करजा।
उस मानव से तिरयंच भला उस जीवन से तो भला मरजा॥5॥

असम्भव बात (सवैया 23)

निर्विष सांप दया युत नाहर होत कपोत नहीं ब्रह्मचारी।
बंजर भूमि न ऊगत धान सु लागत आम न कीकर डारी॥
काक पवित्र बिलाव अहिंसक बोलत सत्य कभी नहिं ज्वारी।
निम्ब न मिष्ट न दुर्जन शिष्ट न होय कभी अहि मोर की यारी॥

(सवैय्या 31)

बालू में न तेल न सलिल माहिं घृत नहिं,
आग में कमल न हो उपल पै धान है।
नीम में मिठाई न हो दुर्जन में शिष्टताई,
अहिमुख अमृत न याचक कै मान है॥
हिंसक के दया नहीं विषयी के हया नहीं,
लोभी के न स्वाभिमान कृपण के दान है।
नभ में न होंय फूल आम न लगैं बबूल,
गधे सिर सींग न हो मृदुल पखान है॥
मृतक न जीयै चाहै कोटिक उपाय करौ,
बंजर जमीन माहिं धान न उगात है।
दूध के पखारे तें न कोयला सफेद होत,
सूखा तरु नीर दिये नाहिं हरियात है।
कस्तूरी कपूर सो न प्याज में सुगन्ध होत,
पय के पिलाये अहि विष न बिलात है।
दुष्ट नहिं तजे दुष्टताई बहु विनै किये,
सीख दिये वानरा न तजै उतपात है॥

संगति का फल (सवैया 23)

ज्ञान घटै शठ कूरन के संग, मान घटै पर के घर जाये।
पाप घटे पुनि दान किये, तन रोग मिटे कछू औषधि खाये॥
प्रीति घटे कछु मांगन तें, अरु नीर घटै ऋतु ग्रीषम आये।
जोर घटै अति मैथुन तैं, यम त्रास घटे प्रभु के गुन गाये॥1॥
ज्ञान बढ़े गुनवानन के संग, ध्यान बढ़ै तपसी संग कीये।
मोह बढ़ै परिवार की संगति, लोभ बढ़ै धन में चित्त दीये॥
क्रोध बढ़े नर मूढ की संगति, काम बढ़ै तिय को संग कीये।
पाप बढ़ै गनिकानि की संगति, पुन्य बढ़ै प्रभु पूजन कीये॥2॥

नारिन की संगति में कैसो हू सुशील रहै,
एक दिन कामदेव जागै पर जागै ही।
कायरों की संगति में कैसो हू सुसूर रहै,
एक दिना युद्ध छोड़ि भागै पर भागै ही॥
पापिन की संगति में केसौ धार्मीक रहै,
एक दिना धर्म कर्म त्यागै पर त्यागै ही।
काजल की कोठरी में कैसो हू सयानो जाय,
एक दाग काजल का लागै पर लागै ही॥3॥
ज्वारिन की संगति में कैसो हू प्रवीण रहै,
एक दिना दाव तौ लगावै पै लगावै ही।
गनिका की संगति में कैसो हू कुलीन रहै,
एक दिना आबरू गमावै पै गमावै ही॥
होटल में वास करै कैसौ हू शुभाचरणी,
एक दिना मद्य-मांस खावै पर खावै ही।
कोऊ जाय लन्दन में बार बार हवा खान,
पाश्चिमात्य फैशन में आवै पर आवै ही॥4॥

वीतरागियों को ऐसी स्त्री भी नहीं भाती

चन्द्र सा बरानन कपोल बिना पोल गोल,
कारे कुच किधों नागिनीसी लहराई है।
मृगी के समान नैन कोकिल से मृदु बैन,
श्वेत दांत तारिनि की पंक्ति ही सुहाई है॥
हस्त कंज लाल लाल हंसिनि सी चलै चाल,
भोंहि देखि इन्द्र की कमान शरमाई है।
शची रति रंभा, रोहिणी कि किधों दामिनि है,
ऐसी नारि हू न वीतरागियों को भाई है॥

रागियों को ऐसी भी स्त्री भाती है

काली कलिहारी कानी वानी बोलै काग कीसी,
चेचक के दाग नाक चपटी भयावनी।
कौड़ी जैसे दांत तीन आगे को निकलि रहे,
उपले से होठ लार टपकै घिनावनी॥
बाल बुरे रूखे तामें सैंकड़ों फिरत जूंवा,
गूमड़ी मरोड़ी दाद फुंसी असुहावनी।
मटकी सौ पेट टांग मोटी मोटी पैर बड़े बड़े,
ऐसी भी तौ नारि रागियों को मन भावनी॥

धन्धे पड़ा सारा जगत, निज आत्मा जाने नहीं।
बस इसलिए ही जीव यह निर्वाण को पाता नहीं॥
शास्त्र पड़ता जीव जड़, निज आत्मा जाने नहीं।
बस इसलिए ही जीव यह निर्वाण को पाता नहीं॥

सुलक्षणा स्त्री (दोहा)

नयना जिनके अति बड़े, अरु छिट कारे केश।
जा घर व्याही जायेंगी, नौबत बजै हमेश ।।

(सवैया 31)

सरल स्वभाव वाली देय न किसी को गाली,
मृदु भाषिणी न चित्त काहू का दुखावती।
पूजैं पतिदेव के चरण नित प्रात उठि,
सासू और स्वसुर का हुकम बजावती ।।
दौरानी जिठानी जेठ देवर ननद आदि,
सद् व्यवहार से सभी को हरषावती।
सज्जना सुलक्षणा सुशीला शुभाचर्ण वाली,
पुण्य के उदै से घर ऐसी नारि आवती ।।
आय के समान खर्च करै देख भालि करि,
घर को संभालै धन व्यर्थ ना लुटावती।
पूजा व्रत संयम धरम शुभ कर्म करै,
पर पुरुषों की ओर दृष्टि न उठावती ।।
घर पर आये अतिथी का सत्कार करै,
साधु और संतन को प्रेम से जिमावती।
'मक्खन' सुशिक्षिता विनीता पंडिता कुलीन,
पुण्य के उदै से घर ऐसी नारि आवती ।।

परतंत्रता मन इन्द्रियों की जाय फिर क्या पूंछना।
मिट जाय राग-द्वेष तो हो उदित आतम भावना ।।

माता की पुत्री को शिक्षा

अरी मेरी बेटी तोहि जानौ है पराये घर,
वहां तू हमारे मति नाम को लजैयो री।
सासु और स्वसुर को जानि मात तात तुल्य,
उनकी सदैव सेवा सुश्रूषा में रैयो री ।।
जेठ और देवर से कीजो न विरोध कभी,
दौरानी जिठानिनि से मीठे बैन कैयो री।
उठि कै प्रभात पतिदेव को प्रणाम करि,
उनका हुकम सदा शीश पै चढ़ैयो री ।।
सबसे प्रथम उठि जपो णमोकार मंत्र,
नित्य क्रिया करि जिनमन्दिर में जैयो री
समयानुकूल शुद्ध भोजन बनाय करि,
सबको खिलाय करि पीछै आप खैयो री ।।
शील व्रत संयम धरम नेम पालि सदा,
कभी भूल कुल को कलंक न लगैयो री।
पास औ पड़ौसिन से रखना सदैव प्यार,
'मक्खन' सभी के सुख-दुख मांहि जैयो री ।।

वे क्या करेंगे ?

जिनसे घर में कुछ भी न बना वन में वह जाय कहा करि हैं।
जिन ने घर में न कवायद की, रण में वह जाय कहा लरि हैं ।।
न तरे कबहू नदियान में जे, वह सागर माहिं कहा तरि हैं।
न अणुव्रत धारि सके अबलों, मक्खन वे महाव्रत कहा धरि हैं ।।

समधी-समधन (दोहा)

समधन सम अन धन नहीं, सो समधी आधीन।
समधन मम धन जानिये, या बिन चित्त मलीन॥

(सवैया31)

सम[1]धन के निकट, नित्य रहैं अरहंत देव,
समधन सौं रमत नित सिद्ध परमात्मा।
समधन की चाह करि ध्यान धरैं आचारज,
उपाध्याय साधु औ अव्रती अंतरात्मा॥
समधन की चाह करै लोक परलोक बनै,
समधन को पाया तिन मम धन का रसवमा।
समधन के प्रेम माहिं फंसि रह्यौ मेरौ मन,
हे प्रभू समधन देहु मम धन करि कै शमा॥

आत्मा को बिना जाने सब क्रिया व्यर्थ

कीयो कहा तूने रथ मोटर में बैठि बैठि,
कीयो कहा तूने वायुयान चढ़ि चढ़ि कै।
कीयो कहा तूने द्रव्य लक्ष कोटि जोड़ि-जोड़ि
लेकरि गरीबन से ब्याज घढ़ि घढ़ि कै ॥
कियो कहा तूने सत मंजली हवेलिन में
जनता में बोले बडे बोल बढ़ि बढ़ि कै।
आतम अनातम के भेद को न जाना मूढ़
खोय दिये बड़े बड़े पोथे पढ़ि पढ़ि कै॥1॥
न्हायो तू हजारों वार गंगा और यमुना में
तीरथ अनेक बार वन्दे जाय जाय कै।

1. समता

बड़े बड़े यज्ञ हू रचाये तें अनेक बार
हो गया प्रसन्न जनता में नाम पाय कै॥
बनि गया मुनि साधु संन्यासी महन्त सन्त
वर्णी ब्रह्मचारी व्रती भगत कहाय कै।
'मक्खन' न आतम अनातम को भेद जानौ
चलि दिया कोरा नर जनम गमाय कै॥2॥

सत्-उपदेश (सवैया 31)

हिंसा झूंठ चोरी व्यभिचारी अति तृष्णा त्यागि,
शील तप संयम व्रतों की भावो भावना।
विषै मांस त्यागो द्यूत कर्म में न लागो,
विषै वासना से भागो चित्त धर्म में लगावना॥
दया दान पूजा पाठ सामायिक नित्य करौ,
सत्-उपदेश सुनि हृदै हरषावना।
'मक्खन' मधुर बोलौ काहू का न दिल छोलौ,
पाकै अनमोल नर जन्म न गमावना॥1॥
रोजगार करौ नेक नीति से कमाओ धन,
शुद्ध वस्तु खाओ दान करो दिल खोलिकै।
बेईमानी ठगी दगाबाजी किसी से न करो,
सब ही से प्रेम राखो मीठे बैन बोलिकै॥
खरी में मिलायकरि खोटी मत बेचो वस्तु,
अधिक न लेहु मत देहु कम तोलि कै।
किसी का न माल मारो नहिं देवालो निकालो,
जिसका है कर्ज उसे देहु बोलि बोलिकै॥2॥
जैसे प्राण तुम्हें प्यारे वैसे औरों को भी प्यारे,
मरना न चाहै कोई किसी को न मारना।

जैसे झूंठ तुम्हैं बुरा लगे वैसे औरों को भी,
तातें झूंठ बोलि के प्रतिष्ठा न बिगारना॥
जैसे तुम चाहो मेरी वस्तु न चुरावे कोई,
तैसे सब चाहैं तातें चोरी हू को टारना।
तुम चाहौ मेरी बहू बेटी को न छेड़े कोई,
तैसैं और चाहैं तातें शील व्रत धारना॥3॥

न जाने सब कहाँ गये ?

'मक्खन' जनम पायो जिन से वे मात तात,
पालि पौषि छोड़ जाने कहाँ को चले गये।
खेले कूदे साथ रहे मेले औ तमाशन में
ऐसे यार वास भी तो हमसे जुदा भये॥
नाते रिश्तेदार लेन देन वाले साहूकार
प्यारे दिलदार पता भी तो न बता गये।
तार चिट्ठी टेलीफून आवै नहीं भेजें कहाँ
उर्ध्व मध्य अधोलोक में कहाँ समा गये॥

क्या तुम इस घर में सदा रहोगे ?

'मक्खन' कहाँ से आये जाउगे कहाँ को अब,
केते दिन और रहोगे इस मकान में।
ये भी गये वे भी गये लाला गये सेठि गये,
तुम कहाँ छिपौगे मकान या दुकान में॥
मालिक मकान पल भर में कराके खाली,
इस झोंपड़ी को जला देगा शमसान में।
माल धन दौलत किराये में वसूल करि,
तुमको अकेला छोड़ि देगा वीयावान में॥

तुम ऐसे बनो ! ऐसे न बनो !!

तुम पेट भरौ पेटी न भरौ, तुम सेठि बनौ न समेटि धरौ।
तुम पुण्योदय से धनी बनौ, पर औरन का धन तौ न हरौ॥
तुम बनकरि साहूकार, नहीं औरों पर अत्याचार करौ।
तुम बैठि बैठि करि कारों में, मत औरों को बेकार करौ॥
तुम रहौ सुखी बनि दुनिया में, पर औरों को दुखिया न करौ।
तुम जियो हजारों वर्ष अरे, पर औरन का जीवन न हरौ॥
तुम फूलौ फलौ सदा जग में, पर औरन को मत देखि जरौ।
तुम रहो महल सत मंजलों में, औरों के घर न उजाड़ करौ॥
तुम बनौ बड़े इज्जत वाले, पर औरों की इज्जत न हरौ॥
तुम बनौ स्वयं जग में नामी, मत औरों को बदनाम करौ।
बनवा अपने कोठी बंगले, औरों को तौ कंगला न करौ।
अपना करि लाखों का धंधा, पर औरों को अंधा न करो॥
मानव बनिकरि दानव न बनौ, नर बनिकरि के नाहर न बनौ।
जैनी बनि करि छैनी न बनौ, प्यारे बनकरि आरे न बनौ॥
तुम बनिकरि फूल न शूल बनौ, चन्दन बनिकरि न बबूल बनौ॥
लाला बनिकरि भाला न बनों, शीतल बनकर ज्वाला न बनौ॥
कंचन बनिकरि मति कंच बनौ,बनि पंच अरे न प्रपंच बनो।
रक्षक बनिकरि भक्षक न बनौ, साधक बनिकरि बाधक न बनौ॥
पंडित विद्वान प्रचारक बनि, निज खान पान को शुद्ध करौ।
'मक्खन' बनि स्वयं शुभाचरणी, पीछे पर को उपदेश करौ॥

श्री महावीर जन्मोत्सव

देशन में देश तौ प्रसिद्ध है बिहार देश,
स्वर्ग के समान सर्व सम्पदा को वास है।
तामें राजधानी श्रेष्ठ शोभनीक कुण्डलपुर,
सिद्धारथ नाम भूप भूपन में खास है॥
ताकी पटरानी सती शीलवती त्रिशला है,
रंभा रति शची किधों सरस्वति को वास है।
ताके उर आनि भगवान वीर जन्म लियो,
आतमा पवित्र दिव्यज्योति कौ प्रकाश है॥1॥
जन्मत ही तिहुँ लोक आनन्द भयो अपार,
बाजे अनहद बजे इन्द्रन के वास है।
साजि गज वाज चलि स्वर्ग का समाज आयो,
इन्द्र धरणीन्द्र वृन्द कुण्डलपुर पास है॥
फेरी तीन देय जाय सिद्धारथ गेह शची,
छिपकै अदेह गई त्रिशला के वास है।
होय कै निशंक शची लियो बाल अंक देखि,
मुखड़ा मयंक दिव्यज्योति को प्रकाश है॥2॥
लाकर के बाल शची सौंप दियो मघवा को,
निरखौ हजार नैन धरि के हुलाश है।
ले गये सुमेरू शीश पांडुक शिला पै थापि,
एक ऊन लक्ष उच्च जोजन आकाश है॥
गागर हजार आठ लाय क्षीर सागर तें,
ढारी शीश ईश के लगाय दिव्य बास है।
करि कै श्रृंगार वस्त्र भूषण सजाय शची,
देखो मुख रूप दिव्यज्योति को प्रकाश है॥3॥

एरी ए सखी री ए उजारौ कैसो भयो आज,
जाके तेज आगै सब तेजन कौ ह्रास है।
सूरज विचारो कैसो ढाक जैसो पात भयो,
चांद और तारन को रह्यो न विकास है॥
गैस की न रोशनी उद्योत है न विद्युत का,
दीपक मसाल की मिसाल तौ न पास है।
मेरे मन माहिं सखि एक बात आवत है,
वीर प्रभु की ये दिव्यज्योति को प्रकाश है॥4॥
दुनिया के ग्रंथन का सभी साधु संतन का,
धर्म के महंतन का ठीक ये विश्वास है।
एक समैं भारत में धर्म का विध्वंस भयो,
धूर्त ढोंगियों का हुआ देश में निवास है॥
चोरी झूंठ जारी बाम मारग प्रचारी क्रोध,
लोभ छलधारी देत जीवन को त्रास है।
ऐसे कुसमै में भगवान वीर आनि कियो,
सबके हृदै में दिव्यज्योति को प्रकाश है॥5॥
यज्ञ के करैया सौं पुकारि कहै दीन पशु,
चाहिये न मोहि तेरे स्वर्ग को निवास है।
छुरी से न मारौ न पजारौ मोहि पावक में,
हाथ पांव बांधिकै न देहु मोहि त्रास है॥
अरे मेरे वीर[1] मेरो कांपत शरीर तेरी,
देख शमशीर मेरो छूटो जात स्वास है।
ऐसे दीन आरत कौ भारत में शोर सुन,
आयो महावीर दिव्यज्योति को प्रकाश है॥6॥

1.मारनेवाले

भगवान का स्मरण करलो

जिस बाग में आज खिलीं कलियां कौन जानै वे काल खिली न खिली।
नवयौवन की ये भली घड़ियां कौन जाने ये फेरि मिली न मिली।
शिशु वै भी गई तरूणापो चलो ये बुढ़ापे में देह पिली न पिली।
भजिले जिन नाम अरी रसना जानै अंत समै तू हिली न हिली।
यह औसर व्यर्थ न खोय जिया फिरि मानुस देह मिली न मिली।
सर्वज्ञ प्रणीत जिनागम से करि ले निज आतम को उजली।
लिये काल कृपाण खड़ा सिरपै यमराज की चोट झिली न झिली।
भजिले प्रभु नाम अरी रसना जानै अंत समै तू हिली न हिली।

कंजूस

यद्यपि लक्ष्मी को लोक में बहुत महत्त्व दिया जाता है, तथापि यहाँ कवि ने यह कहकर कि 'वह कंजूस के घर रहती है' कंजूस की हीनता तो बताई ही है; साथ ही लक्ष्मी की भी हीनता ही प्रसिद्ध की है कि वह 'सज्जन – विद्वान, दानी, सूरवीरों को छोड़कर कंजूस के घर रहती है।'

(प्रश्न)

एक दिना लक्ष्मी प्रते, पूंछत है कवि एम।
दाता पंडित सूर तजि, रहै सूम घर केम॥

(उत्तर)

सूर घर जाऊँ तौ अकेली रहि जाऊं रांड,
वो तौ जूझि जूझि मरि जाय रण थान में।
दाता घर जाऊँ तौ मैं आदर न पाऊँ नैक,
वो तौ भरि भरि थाल फैंक देत दान में॥

पण्डित कै जाऊं सौत विद्या से लड़ाई रहै,
दोय तलवार न समाय एक म्यान में।
तातें सेठि सूमचन्द ढूंढ़ि लियो ठीक मैंने,
खरचे न खाय जोड़ि धरत मकान में॥1॥

एक मांगने वाले ने किसी सेठ से कहा, सेठजी तुम तौ कछु भी नहीं देते, सेठजी ने उत्तर में एक कवित्त कहा–

पगड़ी में पेच देत मूंछन पै ताव देत,
पौलिके किवाड़ देत तामें देत तारौ है।
रात भर पैरो देत नौकरों को गाली देत,
दीन दुखियों को धक्के दे दे कै निकारौ है॥
मंदिर शिवालय में जाय नित धोक देत,
मृतक कुटुम्बियों को देत जल खारौ है।
ऐते पर लोग कहें सेठ जी न देत कछु,
देत देत झाडू सारौ घर घिसि डारौ है॥2॥

फिर मांगने वाले ने कहा – सेठजी बड़ी जरूरत है एक रुपया तो दे, ही दो, सेठजी ने फिर उत्तर में एक कवित्त कहा–

निशदिन महनत करि कै कमायो जाय,
रुपया बनत जब सौले ताव खात है।
जामें दो अठन्नी चार चवन्नी दुअन्नी आठ,
सौले इकअन्नी लखि हिय हुलसात है॥
बत्तीस अधन्ने पैसे चौंसठ का ढेर लगै,
एक सौ अठाईस अधेला भनि जात है।
जामें बन जांय एक सौ बानवै पैया,
ऐसौ रूपै[1] कौ रुपैया भैया कैसे दयौ जात है॥3॥

1. चाँदी

झूंठे की बुराई

एक पटेबाज जब जब भोजन करने बैठता तभी उसके छज्जे पर एक कौआ बैठ कर कांउ कांउ करता, पटेवाज की खूंटी पर तलवार टंगी रहती थी, उसे अपनी औरत से मांगता, लाना मेरी तलवार औरत तलवार देती और पटेबाज तलवार लेकर दौड़ता तब कौआ उड़ जाता पटेबाज आकर बैठ जाता तब कौआ आकर फिर हल्ला मचाने लगता। कौवा समझता था कि तलवार फैंकने की चीज तो है नहीं, ये लेकर आयेगा तब मैं भाग जाऊंगा, इस तरह ये रोज का काम हो गया।

एक दिन पटेबाज ने सोचा कि इस कम्बख्त को आज मार ही देना चाहिए, ये विचारकर थम्भ की ओट में तीर कमान रख दी और अपनी औरत को समझा दिया कि जब मैं तलवार मांगू तो तीर कमान दे देना, रोज की तरह कौआ आकर बैठा और कांउ-कांउ करने लगा पटेबाज ने अपनी औरत से कहा – लाना मेरी तलवार औरत ने तलवार के बजाये तीर कमान दे दी और पटेबाज ने कौवे के तीर मार दिया कौआ गिरकर मरने लगा,

तब कौवे ने दोहा कहा –

वचन मरा सो ही मरा, काग मरा मत जान।
मुझ से पहिले तू मरा, असि कहि मारा बान॥

(इस छोटी सी रचना के माध्यम से यहाँ कवि ने यह शिक्षा दी है कि कभी भी छल नहीं करना, क्योंकि छल करनेवाला सदा दुःखी रहता है, अतः हमें कभी भी छल नहीं करना चाहिए। तात्पर्य यह है कि यहाँ 'वचन' शब्द से अभिप्राय व परिणाम के दोष को बताया गया है।)

नकली साधु ने भी धन को ठुकरा दिया

एकबार राज्यसभा में बैठे हुये अकबर बादशाह ने कहा कि कोई ऐसा है जो मुझे धोखा दे, अगर मुझे धोखा देगा तो मैं उसे एक लाख रुपये इनाम दूं। ये कहकर बादशाह चुप हो गये। सभा में बहुत देर हो गई कोई कुछ नहीं बोला तब बीरबल ने कहा कि महाराज मैं आप को धोखा दे सकता हूँ और धोखा भी ऐसा देऊँ जो आप भी याद करते रह जांय कि हाँ किसी ने धोखा दिया था।

बादशाह ने कहा – ठीक है हमें मंजूर है, आप को एक लाख रुपये इनाम मिलेंगे। बीरबल छै महीने की छुट्टी लेकर कहीं बाहर चला गया और छै महीने में अपनी डाढ़ी मूंछैं शिर के बाल खूब लम्बे लम्बे बढ़ाये और भस्म लगा साधू बनकर छै महीने बाद शहर से बाहर आकर धूनी रमा दी और दश बीस रुपयों की इकन्नी दुअन्नी चवन्नी अठन्नी तथा कुछ रुपये वृक्षों के नीचे दूर दूर गाढ़ दिये।

साधूजी को देखकर ग्वालियों ने कहा बाबाजी नमस्कार। साधू ने कहा जीते रहो बच्चो ! जाओ उस पेड़ के नीचे इकन्नी गढ़ी पाओगे, तुम बांट लेना। बच्चों ने जाकर देखा तो इकन्नी पाई, ये बात बच्चों ने सब से कह दी। थोड़ी ही देर में और बच्चे आ गये उन्हें बाबा ने दुअन्नी चवन्नी गढ़ी हुई बतला दीं, और कुछ आदमी आये तो उन्हें रुपये बता दिये।

इसप्रकार सारे शहर में साधू की शोहरत हो गई और किसी

ने अकबर बादशाह से भी जा कहा कि महाराज एक बड़े पहुँचे हुये साधू आये हैं उनके पास हजारों आदमी जाते हैं वे जमीन में गढ़े हुये धन को तथा और हजारों तरह की बातें बताते हैं महाराज ! आप भी उनके दर्शन कीजिये और कुछ पूछिये, बादशाह ने उसकी बात को मान लिया और साधू के दर्शन को गया और दूर से ही साधू को नमस्कार किया।

साधू ने कहा जीते रहो बच्चे, खुश रहो, क्या तेरा नाम अकबर है। हाँ महाराज ! हाँ कहते ही बाबा ने झड़ी सी लगादी तेरे इतनी बेगम हैं, उनके ये ये नाम हैं इतना खजाना है इतने नौकर हैं तेरे अमुक बही खाते में यह लिखा है इत्यादिक हजारों बातें कह डालीं।

बादशाह सुनकर ताज्जुब करने लगा और अगले दिन साधू को भेंट देने 5 लाख की जवाहरात लाया और साधू के आगे रख दी तब साधू ने कहा–

शहंसा अकल तेरी मारी गई है,
फकीरों को दौलत की परवाह नहीं है।
हमेशा तो दुनियां में रहना नहीं है,
कयामत में क्या मुंह दिखाना नहीं है।।
तमन्ना फकीरी में अच्छी नहीं है,
सफेदी पै धब्बा लगाना नहीं है।।

ऐसा कहकर साधू ने बादशाह की भेंट उलटी फेर दी बादशाह चला गया।

अगले दिन बीरबल ने जाकर दरबार में बादशाह से कहा कि

महाराज मैंने आपको धोखा दे दिया अब मेरे एक लाख रुपये दिलवाइये।

बादशाह ने कहा – कल पांच लाख की जवाहरात क्यों नहीं ली थी।

बीरबल ने कहा– महाराज कल भेंट लैने से दुनियां के फकीर बदनाम हो जाते।

(इससे हमें यह शिक्षा लेनी चाहिए कि जब नकली साधू भी धन नहीं लेना चाहते तो असली को तो छूना भी नहीं चाहिये।)

तुम सच्चे जिनेन्द्रभक्त हो !

एक कथा प्रसिद्ध है कि एक समय किसी व्यक्ति ने अकबर बादशाह से कहा कि महाराज एक जैन कवि हैं, वो अपने दिगम्बर देव के सिवाय और किसी के गुण नहीं गाते। आपकी चतुराई तब है जब आप उनसे अपनी तारीफ करालें। बादशाह ने कहा कि ये तो कोई बड़ी बात नहीं है लो अभी मैं बुलाकर अपनी तारीफ कराता हूँ। बादशाह ने एक नौकर भेजकर उन पण्डितजी को बुलाया और कहा कि पण्डितजी आप बड़े अच्छे कवि हैं, मैंने आपकी बड़ी प्रशंसा सुनी है, आप हमारी एक समस्या पूरी कर लावैं।

पण्डितजीने कहा महाराज समस्या दीजिये मैं कल को पूरी करके सुना दूंगा। बादशाह ने समस्या दी 'मिलि आस करौ सु अकब्बर की' बादशाह ने समझा कि इस समस्या पूर्ति से मेरी प्रशंसा तो हो ही जायेगी; लेकिन पण्डितजी किस की तारीफ करने वाले थे उन्हें तो सिवाय जिनदेव के और किसी की तारीफ

करनी आती ही नहीं थी। अगले दिन बादशाह को समस्या पूर्ति कर के सुनादी।

(सवैया31)

जिया बहुतक भेष धरे जग में,
छवि भा गई आज दिगम्बर की।
चिन्तामणि जब प्रगटौ उर में,
तब कौन जरूर अडम्बर की॥
जब तारण तरण हि सेय लियो,
परवाह करै को जब्बर की।
जिन्हें आश नहीं परमेश्वर की ,
मिलि आस करौ सु अकब्बरकी॥

इस समस्या को सुनकर बादशाह ने दांतों तले उंगली दबाई और पण्डितजी की बहुत प्रशंसा करते हुए कहा – कि **तुम सच्चे जिनेन्द्र भक्त हो।**

ज्ञानी का चिन्तन

हरौ जाऊ धन ओ बिछुर जाऊ प्रियजन,
नसि जाऊ तन क्यों न मेरे का हरज है।
ये तो कर्म उदै सारू मिलत औ बिछुरत,
अनादि की रीति कछु नई न मरज है॥
जिनके हिये में मोह करें ते हरष-शोक,
बिना मोह कौन काकी राखत गरज है।
मैं तो दृग-ज्ञानमयी ध्रुव परदेशवंत,
मेरे हानि-विरधि न मोह की लरज है॥

– मनमोदन पञ्चशती से साभार

शीलवती स्त्री की चतुराई

एक सेठजी के लड़के की नौजवान स्त्री बड़ी सुन्दर थी। एक दिन स्नान करके छतपर बैठी बाल सुखा रही थी । पास में राजा का महल था उस स्त्री को राजा के लड़के ने देख ली, राजपुत्र का ये इरादा हुआ कि किसीप्रकार से इस स्त्री को मैं भोगूं। राजपुत्र ने उस स्त्री को बहकाने के लिये एक बड़ी चतुर दूती बुलाई उससे कहा कि यदि तू इस सेठ के लड़के की स्त्री से मुझे मिला दे तो तुझे मुंह मांगा इनाम दूंगा। दूती ने हाँ करली और उस स्त्री को बहकाने के लिए सेठजी के घर गई, दूती इस काम में बड़ी चतुर थी, बहुत बहलाई फुसलाई, किंतु उस पतिव्रता स्त्री पर इसका जादू असर न कर सका।

एक दिन दूती ने स्त्री से कहा या तो तू मानजा वरना राजपुत्र तेरे ससुर और पति को मरवा देगा और तुम्हारी सारी धन सम्पत्ति छीन लेगा। इसलिए तू राजी-खुशी मेरे साथ चल राजकुमार तुझे पटरानी बना देगा, इस बनिये के घर में तू क्या लेगी, स्त्री ने कहा– अच्छा तू राजपुत्र से मेरे इस दोहे का अर्थ लिखा ला, तब मुझसे बात करना।

(दोहा)

मैं पति की झूठन भई, भोगन योग्य न आन।
जो मेरी इच्छा करै, कै कागा कै स्वान॥

दूती ने यह दोहा राजपुत्र को जाकर दिखाया और कहा महाराज इसका अर्थ लिखदो तुम कौन हो ? राजपुत्र इस दोहे को पढ़करि लज्जित हो गया और चुप बैठ रहा।

द्वितीय खण्ड : दृष्टान्त मालिका

बुरी भावना का चित्र

धरिकै हजार रुपयों की थैली कांधे पर।
वृद्धा माता जा रही थी अपने मुकाम को।
कांधे दोनों दुखि गये हाथ पाँव थकि गये।
मंजिल है दूर अभी पोंचना है शाम को॥
थैली को संभालूं या शरीर को संभालूं आज।
मिली न सवारी कोई छीन ले न दाम को।
सोच रही थी कि इतने में एक घोड़े चढ़ा।
पीछे से सवार आया जाता इसी गाम को॥
बोली वृद्धा माता बेटे जरा मेरी थैली ले ले।
पीछे से आती हूँ मैं ले लूंगी इसी गाम में।
बोला घोड़े वाला मैया मैं न लेहुँ थैली तेरी।
तू आवैगी देर में हो विघ्न मेरे काम में॥
थोड़ी दूरि चल के सवार लगा सोचने यों।
थैली लेके भागि जाता वृथा खोया दाम में।
अब जरा थमि जाऊँ आती होगी बूढ़ी माता।
थैली लेके जाऊँ खाऊं उमर तमाम में॥
इस भांति घोड़े के सवार की कुवासना का।
फोटू खिंचि गया बुढ़िया के जाय मन में।
सोचने लगी कि भला हुआ मैंने थैली न दी।
लेके भागि जाता कहा करती विपन में॥

अब जो मिलै तौ नहिं थैली मैं कदापि देहुं।
धीरे धीरे चल के पहुंचि जाऊं छन में।
आगे चल कर वो सवार मिला घोड़े वाला।
अम्माँ लाओ थैली तेरे दे दूंगा सदन में॥
बोली बूढ़ी माता बेटे थैली नहिं दूंगी अब।
कहि गया तुझे वहि मुझे भी बता गया।
तेरे मन में जु आई वहि आई मेरे मन।
तेरी बुरी भावना का भेद मुझे पा गया॥
चला जा यहाँ से घर मेरा आ गया है पास।
सुनि बात माता की सवार अकुला गया।
समै बरबाद गया धन हू न लगा हाथ।
'मक्खन' वृथा ही पाप चित्त में समा गया॥

बुरे परिणामों का चित्र

नृपति देखने चला शहर के सड़क बाजार गली कूँचे।
बाग बगीचे कुये बाबड़ी लखे महल नीचे ऊँचे॥
हर प्रकार की वस्तु बजारों में लाखों की तुलती थी।
हुआ प्रसन्न नृपति जनता के मुख से जै जै बुलती थी॥
इक पंसारी की दुकान के आगे नृप जब जाता है।
नमस्कार करि पंसारी राजा को शीस झुकाता है॥
ऊपर से तो पंसारी करता था नृप का अभिनन्दन।
किंतु हृदय में था राजा मरि जाय बिकै मेरा चन्दन॥
ये चित्रण पंसारी का नृप के दिल पर खिंच जाता है।
क्रोध जगा मन ही मन काहू को न प्रगट हो पाता है॥
करने लगा विचार नृपति इस पंसारी को मरवाके।
लुटवालूँ सब माल मसाला हुक्म देहु घर पर जाके॥

आकर के घर पर राजा ने मंत्री को बुलवाया है।
पंसारी को देखि हृदै का भाव सभी बतलाया है॥
समझदार मंत्री ने फौरन पंसारी बुलवाया है।
कहो सेठजी तुम्हें देखि नृप को क्यों गुस्सा आया है॥
क्या तुमने न दुकान सजाई क्या कुछ अविनय कीना है।
सभी लुटेगा माल मसाला हो गया मुश्किल जीना है॥
हाथ जोड़ पंसारी बोला मंत्री से घबरा करके।
अबलों सजी दुकान पड़ी है आप देखलो जाकर के॥
होकर नम्रीभूत अन्नदाता को शीश झुकाया था।
मेरा कुछ अपराध नहीं नृप को क्यों गुस्सा आया था॥
मंत्री ने गंभीर हृदय से सोचा न्याय न कच्चा है।
नृपति कभी नहीं झूंठ कहै पर पंसारी भी सच्चा है॥
बाद अनेक उलझनों के मंत्री जी को यह सूझा है।
हो न होय कुछ बात हृदय की पंसारी से बूझा है॥
नृप के स्वागत समय आपके दिल में क्या कुछ आया था।
सत्य बताओ डरो न किंचित् क्या कुछ पाप समाया था॥
बोला पंसारी मंत्री जी बात कहूँ सच्ची मन की।
दश मन चंदन पड़ा बिका नहिं मुझे जरूरत है धन की॥
देखि नृपति को मन में आई जो यह जल्दी मर जावै।
इसे जलाने को चन्दन बिकि जाय तुरत पैसा आवै॥
समझ गया मंत्री सब बातें कहा बुला भण्डारी से।
दे रुपया तुलवा लाओ सब चंदन इस पंसारी से॥

भण्डारी आज्ञानुसार रुपये दे चन्दन लाता है।
तब दुर्भाव निकलि पंसारी के दिल से सब जाता है॥
कहा नृपति से मंत्री ने अब चलो बजार दिखा लाऊँ।
था गुस्सा जिस पंसारी पर उससे आज मिला लाऊँ॥
नृप मंत्री बाजार गये तब पंसारी लखि हर्षाया।
पंसारी को देखि हृदय में नृप के प्रेम उमड़ि आया॥
इस शिक्षा का सार यही जिसके सोचो तुम मरने की।
तो वह भी तदबीर करेगा प्राण तुम्हारे हरने की॥
जो औरों का बुरा चहैगा बुरा उसी का होवैगा।
करै भलाई औरों की 'मक्खन' वो सुख से सोवैगा॥

बुरी भावना का फल

तीन चोर चले एक ग्राम से चुराने धन-
मार्ग में अशर्फियों का पाया गया ढेर है।
लाखन की सम्पदा को देखि बड़ा हर्ष हुआ-
बातन में रात गई हो गया सवेर है॥
सोचा दिन में जु चलें पुलिस पकड़ लेगी-
रात में चलेंगे जब होयगा अंधेर है।
एक जना जायके बाजार से मिठाई पूड़ी
लाओ यार खांय अब करो मत देर है॥
लेकर अशर्फी एक तस्कर गया बाजार
सोचा माल मैं ही लेहुँ दोऊन को मारिके।
मैं तो यहां खाय चलूँ उन्हें वहां लेहि जाऊँ
लाडू पूड़ी भाजियों में खूब विष डारिके॥
उधर उन्हें भी सूझी माल दोनों हमीं लेहिं-
आते ही खड्ग से लें गर्दन उतारि के।

मारि दिया आते ही दोनों ने मिल तीसरे को-
वे भी दोनों खाना खाय मरे मुँह फारिके॥
इस भांति तीनों मरि गये दुरभावना से-
पड़ा रहा धन कहो इसे को उठावेगा।
अव्वल तो चोरी करना ही बड़ा भारी पाप-
दूसरों को मारिके अवश्य नर्क जावेगा॥
धन हू न चला साथ जान से धो बैठे हाथ-
पापी जन पाप का बुरा ही फल पावेगा।
और का बुरा विचारौ होगा तुम्हारा भी बुरा-
'मक्खन' भलाई से भला ही कहलावेगा॥

शेर अपनी शक्ति को भूलिकरि गधा बनि गया

सावन भादों की अंधियारी आती आती आती है।
सुनिकरि जंतु डरे वन के भय से छाती थर्राती है॥
आपस में सब मिलिकरि बोले यार अंधेरी आवैगी।
शीघ्र उपाय करौ छिपने का नातर वो खा जावैगी॥
सबसे पहले केहरि बोला मैं खो में छिपि जाऊँगा।
भागि जायगी जब अंधेरी तब बाहर आ जाऊँगा॥
सुनिकरि यह प्रस्ताव शेर का बैठि गया सबके दिल में।
निर्भय होकर जाय छिपे सबही अपने अपने बिल में॥
इतने में घनघोर घटा उठि कारी कारी आती है।
कड़ कड़ाटकर गरजि गरजि रिमझिम पानी बरसाती है॥
उसी समय उस ही जंगल में कुम्भकार इक आता है।
निर्भय होकर के गधहों पर बोझ लादकर लाता है॥

उनमें से इक चंचल गधहा बोझ डारि करिकै भागा।
उसे पकड़ने अंधकार में कुम्भकार पीछे लागा॥
किन्तु गधा ऐसा भागा जो हाथ नहीं इसके आया।
ढूंड़त ढूंड़त कुम्भकार अति क्रोधित होकरि झुंझलाया॥
कहां गया कम्बख्त खूब हैरान किया तूने मुझको।
मारि मारि डंडों से मैं भी मजा चखा दूंगा तुझको॥
यों कहता कहता कुम्हार जंगल में दौड़ा जाता है।
जहां खोह में छिपा हुआ था शेर वहां पर आता है॥
उधर शेर भी सोच रहा था गई अंधेरी तो होगी।
बहुत देर हो गई मुझे क्या अब तक भी बैठी होगी॥
यों विचार करि शेर खोह से बाहर को निकला जब ही।
गधा समझकर कुम्भकार ने घेर लिया उसको तब ही॥
डंडे चारि जड़े टांगों पर मारि कमरि में लातैं दो।
पूंछि मरोड़ि कान को खैंचा चलि बच्चे अब आगे को॥
कांपि गया सब अंग शेर का बैठि गया दिल में ये गम।
हाय अंधेरी आय गई अब मारि मारि करि दे बेदम॥
डर के मारे कुम्भकार के शेर चला आगे आगे।
डंडे मुक्के लात खात इतरात नहीं इत-उत भागे॥
जाय गधों में लादि कमरि पर बोझ चला गधहों के संग।
भूलि गया सब चालि ढाल और कूद फांद रंग ढंग उमंग॥
जो था जंगल का राजा थी धाक विपिन भर में जिसकी।
भूलि गया निजरूप इसी से बोझ लदा कटि पै इसकी॥
जो स्वाधीन विचरता था वह आज बंधा पर बंधन में।
देखि जिसे सब रोते थे वो रोता है मन ही मन में॥

बोझ लाद कर शेर गधों संग दौड़ा-दौड़ा जाता है।
आगै चलि करि एक अपूरब दृश्य सामने आता है॥
देख रहा था एक दूसरा शेर पहाड़ी ऊपर से।
शेर लदा चलता गधहों में थरथर कांपि रहा डर से॥
भूलि गया निज शक्ति शेर की बल पौरुष निर्भयता को।
इसलिये सहनी पड़ती हैं दुसह वेदनायें याको॥
जो जाकर निज रूप दिखाऊँ तो आवे इसको निज याद।
जाय जाति उद्धार करूं पर बंधन से करदूं आजाद॥
मारि छलांग पहाड़ी पर से आगै आनि दहाड़ा है।
देखि शेर को शेर दहाड़ा रहा नहीं कोई ठाड़ा है॥
हो भयभीत गधे भागे भागा कुम्हार निज जानि बचाय।
छूटि गया पर बंधन से वह शेर मिला शेरों में जाय॥
इसी भांति हम आतम निज पद भूलि करम के बंधन में।
बंधे अनादि काल से फिरते भ्रमत चतुरगति भव-वन में॥
जो जिन बैन सुनै 'मक्खन' तो पहिचानै निज शुद्ध सरूप।
डारि परिग्रह पोट छुटै विधि बंधन से होवै शिवभूप॥

मालिन और मछियारिनि का दृष्टान्त

परम मित्रता थी आपस में मालिन और मछियारिनि में।
दो शरीर थे किन्तु एक आतम था दोनों के तन में॥
एक दूसरे के सुख दुख में दोनों आती जाती थीं।
मेले और तमाशों में दोनों मिलि खुशी मनाती थीं॥
जो न मिलैं आपस में कोई ऐसा दिन नहीं जाता था।
बिना वार्तालाप किये भोजन तक भी नहीं भाता था॥

हो गया जब विवाह दोनों अपनी अपनी सुसराल गईं।
किंतु प्रेम नहिं गया दिलों से चाहे दोनों दूरि भईं॥
एक दिना मालिनि के घर मछियारिनि मिलने आई थी।
भरा टोकरा मच्छी का और जाल साथ में लाई थी॥
देखि सहेलिन को मालिन के मन में अति उत्साह हुआ।
भोजन विविध प्रकार बनाये पूड़ी पापड़ी मालपुआ॥
सुख दुख की बातें करते दिन बीत गया और रात भई।
मछियारिनि के सोने को फूलों की सेज बिछाय दई॥
खिला पिला और सुला मछेरिन को मालिन तो जा सोई।
किंतु न आई नींद मछेरिन को घबरा करके रोई॥
अरी बहन जल्दी से आ मोहि नींद जरा नहिं आती है।
तेरे फूलों की बदबू मुझको नहिं नैक सुहाती है॥
नांक फटी जाती मेरी अरु सिर में चक्कर आता है।
दूरि फेंकि इन फूलन को अब मेरा जी घबराता है॥
बोली मालिनि अरी बहन मत घबरा जल्दी आती हूँ।
तेरी खातिर वैद्यराज को अभी शीघ्र ले आती हूँ॥
वैद्यराज की नहीं जरूरत बहन तुम्हीं यहाँ आ जाओ।
जाल टोकरा मच्छी का मेरे शिरहाने धर जाओ॥
मच्छी की अच्छी सुगंध से नींद मुझे आ जावैगी।
शिर का दर्द मिटैगा मेरी आकुलता मिटि जावैगी॥
धरा टोकरा जाल पास निद्रा मछियारिनि को आई।
ये तो है दृष्टांत सुनौ अब द्राष्टांत इसका भाई॥
काल अनंत व्यतीत भये विषयों में निशदिन खोते हैं।
जो कहिं जावैं शास्त्र सभा में तौ आते ही सोते हैं॥

मछियारिनि की रग रग में मच्छी की गंध समाई थी।
इसीलिये उसको फूलों की भी सुगन्ध नहिं भाई थी।।
दुर्व्यसनी व्यभिचारी जन की संगति जिन्हें सुहायेगी।
उन कुकर्मियों को साधुन की संगति कैसे भायेगी।।
फंसे हुये हैं आशा तृष्णा लोभ परिग्रह ममता में।
कैसे उनका चित्त लगै व्रत संयम जप तप समता में।।
जो मिथ्यामत नशै और सम्यक्त हृदय में आ जावै।
तो यह संसारी आतम'मक्खन' परमातम हो जावै।।

अन्धे की चतुराई

रैन अंधेरी में इक अंधा पानी भर कर लाता था।
दो मटके शिर ऊपर रख कर धीरे-धीरे आता था।।
एक हाथ में लालटैन ले एक हाथ से थांमि घड़े।
देख रहे थे मारग में दो युवक दृश्य यह खड़े-खड़े।।
बोला एक युवक रे अन्धे ये रचना क्या कीनी है।
तुझे दीखता नहीं भला फिर लालटैन क्यों लीनी है।।
बिन आंखों के ये प्रकाश क्या मारग तुझे दिखायेगा।
उलटा जनता की नजरों में तू पागल कहलायेगा।।
बोला अंधा रे भाई तैं भेद नहीं इसका जाना।
आवै कोई दौड़ा दौड़ा तुझसा चंचल मस्ताना।।
मैं अंधा अंधियारी में कहिं धक्का उसका लगि जावै।
वो उठि भागि जाय पर मेरा चूरा-चूरा हो जावै।।
इसीलिये ये लालटैन मैं औरों को दिखलाता हूँ।
मुझ से बचिकरि चलैं सभी मैं धक्के से घबराता हूँ।।

मेरे कर की लालटैन आफत से मुझे बचाती है।
और राह चलने वालों को सीधा मार्ग दिखाती है।।
यों निज-पर का भला समझ कर मैं यह कारज करता हूँ।
खुद आफत से बचता हूँ औरों की आफत हरता हूँ।।
युक्तियुक्त वच सुन अंधे के नौजवान यों बोला है।
वाह वाह रे सूरदास तेरी बुद्धी अनमोला है।।
ज्ञानी की हर एक बात में तत्त्व भरा ही होता है।
शिक्षित शिक्षा लेते हैं 'मक्खन' मूरख खो देता है।।

दीपक ने परोपकार की शिक्षा दी

छोटा सा मिट्टी का दीपक और रुई की बाती है।
तेल डालकरि बहिन जरासा उसकी ज्योति जगाती है।।
उसे देखकरि सारे घर का अंधकार मिटि जाता है।
शीघ्र प्रकाशित उससे फिरि कोना-कोना हो जाता है।।
चुप-चुप वह बेचारा यों ही सारी निशि भर जलता है।
अपने दुख को भूलि और के दुख में सदा पिघलता है।।
वह सच्चा उपकारी बनकर पावन मार्ग दिखाता है।
पर के लिये स्वयं मिटि जाना हमको यही सिखाता है।।
बनकरि दीपक तुल्य अरे तुम भी पर का उपकार करो।
सहकरि कष्ट अनेक स्वयं पर औरों की आपत्ति हरो।।
निष्कलंक-अकलंक ब्रह्मचारी अति कष्ट उठाये थे।
सत्य दिगम्बर पंथ दिखाकरि बौद्धों के गढ़ ढाये थे।।
मानतुङ्ग भक्तामर रचि अड़तालिस ताले तोड़े थे।
मिथ्यादृष्टी अभिमानी राजा के मान मरोड़े थे।।

स्वामि समन्तभद्र मुनिवर ने प्राणों की परवाह न की।
शिवपिंडी को फाड़ निकाली प्रतिमा चन्द्रप्रभु जिन की॥
पण्डित टोडरमल्ल धर्म पर प्राण निछावर कर दीने।
तुच्छ उमरि में जिन शासन सागर गागरि में भरि दीने॥
विपति पड़ी राणा प्रताप पर भामाशाह निवारी थी।
दे अशर्फियां लाखों मेवाड़े की आपद टारी थी॥
गांधी बोस पटैल जवाहर ने क्या कम दुख पाया है।
पड़े जेल में बहुत बार पर देश स्वतन्त्र कराया है॥
धर्म हेतु कोई देश हेतु कोई स्वात्म हेतु तप करते हैं।
'मक्खन' वे इस भव यश पाकर परभव में सुख भरते हैं॥

सुगन्ध का लोभी भौंरा प्राण खो बैठा

एक समय इक गंध लोलुपी अंबुज पर भौंरा आया।
सूंघत सूंघत गंध कमल की उड़ने को नहिं जी चाहा॥
अस्त हुआ सूरज निशि आई पङ्कज भी मुँदि जाता है।
मुँदा हुआ भौंरा उसमें क्या-क्या संकल्प बनाता है॥
धन्य भाग मेरे मैं इस पङ्कज में रात्रि बिताऊँगा।
उदै होय रवि कंज खिलें मैं प्रातकाल उड़ि जाऊँगा॥
वेला कुन्द गुलाब केतकी कमलों का रस पीऊँगा।
हो स्वच्छन्द फिरूँ पराग बन बहुत कालतक जीऊँगा॥
इत्यादिक नाना प्रकार सङ्कल्प-विकल्प उठाता है।
बैठा-बैठा पङ्कज में आशा के महल चिनाता है॥
नहीं जानता मूरख ये सब मिटि जायेंगी आशायें।
सब सङ्कल्प-विकल्प मिटैंगे निकसि जायगी साँसायें॥

एक मदोन्मत्त हाथी फिरता-फिरता तहाँ आता है।
तोड़ि कमल की नाल सूंडि से मुंह में देकरि खाता है॥
गज की दाड़ तलै दबिकरि भौंरे का बना चबैना है।
कौन बचा सकता पकड़ै जब आनि काल की सैना है॥
देखो क्षणभर में भौंरे की टूटी जीवन प्याली है।
जो गति हुई भ्रमर की वो गति सबकी होने वाली है॥
आँखि खोलि देखो जग प्राणी सदा यहाँ नहिं रहना है।
आखिर जाना सबको 'मक्खन' ये सद्गुरु का कहना है॥

पुण्योदय से कबूतर बाल-बाल बच गए

एक विपिन में वृक्ष साख पर बैठे युगल कबूतर थे।
निर्भय होकर के वे दोनों करते प्रेम परस्पर थे॥
करते नहीं बिगाड़ किसी का चुग-चुग दाना खाते थे।
परम अहिंसक भोले-भाले काहू को न सताते थे॥
इन्हें मारने हेतु बाज ऊपर से उड़कर आता है।
नीचे से निर्दयी शिकारी इन पर तीर चलाता है॥
किंतु और से और हुआ मारनहारे मर जाते हैं।
जिन्हें मारना चाहते थे वे बाल-बाल बचि जाते हैं॥
मारा था जो तीर शिकारी ने इन दीन कबूतर पर।
चूंकि निशाना लगा बाज कै बाज गिरा धरणी ऊपर॥
उधर शिकारी के पग को जहरीला विषधर खाता है।
चढ़ा अङ्ग में जहर शिकारी तुरत वहीं मर जाता है॥
जिसका रक्षक दैव होय उसको कोई मार न सकता है।
जिसका रक्षक दैव नहीं उसको कोई राख न सकता है॥

पुण्योदय से जग में जिस प्राणी को दैव बचाता है।
वो वन रण गिरि शत्रु अग्नि जल में भी मर्ण न पाता है॥
निर-अपराधी युगल कबूतर पर तो आँच न आता है।
मारनहारे बाज शिकारी को यम आकर खाता है॥
जो औरों को खांडा खोदै वो कूये में पड़ता है।
जो औरों को शूल बुबै वो ही शूली पर चढ़ता है॥
जो औरों पर फूल बिखेरै उस पर फूल बिखरते हैं।
जो औरों पर प्राण देय प्राणी उस पर ही मरते हैं॥
नेकी का फल नेक बदी का बद फल सबको मिलता है।
बदी छोड़ नेकीकर 'मक्खन' यही साथ में चलता है॥

चूहे ने शेर की जान बचाई

एक शेर एक गहन विपिन में सोता था निर्भय होकर।
कूद रहा था एक बड़ा चंचल चूहा उसके ऊपर॥
खुली शेर की आंख झपटिकर पकड़ लिया उस मूसे को।
बार-बार धमकाता नाहर दिखा-दिखा कर घूंसे को॥
ओ मूरख नादान चुहे क्या मेरे ऊपर फिरता है।
मुझे देखकर हाथी जैसों का मद तुरत उतरता है॥
बहुत दिनों से लोगों का तैं माल-मशाला खाया है।
निकल जायगा आज यार मेरे पंजे में आया है॥
हाथ जोड़ बोला चूहा हे कृपा सिंधु मेरी अरजी।
एक बार सुनलो करना फिर होय आपकी जो मरजी॥
हे महराज आप इस जंगल के राजा कहलाते हो।
हाथी घोड़े गाय भैंस नित मार-मार कर खाते हो॥

नहीं भरेगा पेट तुम्हारा मुझ चूहे के खाने से।
बड़ा लाभ होगा प्रभु तुमको मेरे प्राण बचाने से॥
मुझे छोड़ दोगे तो मैं भी तुमको कभी छुड़ा दूँगा।
प्राण बचाने के एवज में मैं भी प्राण बचा दूँगा॥
ये उपकार तुम्हारा स्वामी नहीं उमर भर भूलूँगा।
पड़ी विपति में कभी आनकर मैं इसका बदला दूँगा॥
सुन चूहे की बात शेर मन ही मन में मुस्काता है।
देखो तो छोटा सा मुँह क्या बातें बड़ी बनाता है॥
मेरे पर क्या विपति पड़ेगी क्या उपकार करेगा ये।
जरा दवा देने पर ही बिन आई मौत मरेगा ये॥
मैं बलवान शेर मुझ से सारा जंगल दहलाता है।
ये छोटा-सा जन्तु मुझे क्या बातों में फुसलाता है॥
किन्तु दया आती है इसकी सुन-सुन मीठी वानी को।
भरे न मेरा पेट वृथा फिर क्यों मारूँ इस प्रानी को॥
समझ अनुपयोगी नाहर ने चूहे को छुटकाया है।
नमस्कार कर धन्यवाद दे चूहा भी घर आया है॥
अल्प समय के बाद एक दिन विपति शेर पर पड़ती है।
रहें नहीं दिन सदा एक से छाँह उतरती चढ़ती है॥
जहाँ बैठता शेर बधिक वहाँ जाल बिछाया जा करके।
बैठ गया शेर भी नित्य की तरह वहाँ ही आकर के॥
खैंचा रस्सा बधिक जाल का शेर तुरत फंसि जाता है।
कीने यत्न अनेक शेर ने किन्तु निकल नहिं पाता है॥
बंधा जाल में शेर पड़ा सर धुनि-धुनि कर डकराता है।
सुनकर रुदन शेर का चूहा तुरत दौड़कर आता है॥

घबराओ मत नाथ आ गया सेवक सेवा करने को।
अभी जाल काटे देता हूँ कष्ट तुम्हारा हरने को॥
काटा जाल तुरत चूहे ने बाहर शेर निकलता है।
बार बार दे धन्यवाद नाहर चूहे से मिलता है॥
ये दृष्टांत हमें देता है सीख वृथा न अकड़ने की।
होकर आप समर्थ कभी असमर्थों से नहिं लड़ने की॥
कभी बड़ों का काम समय पर छोटों से चल जाता है।
पड़ै सुई का काम वहाँ फावड़ा नहीं कर पाता है॥
फसे जाल में नाहर की चूहे ने जान बचाई है।
'मक्खन' कभी न मान करौ यह मान महा दुखदाई है॥

रूठी जवानी

रोग ग्रसित अतिवृद्ध नर खटिया पर बिललात।
एक हितैषी मित्र से कहता मन की बात॥

जो कुछ करना है सो करलो सुकृत तरुण अवस्था में ।
पैसा पास निरोगी काया इन्द्रिय ठीक व्यवस्था में॥
करि न सकोगे वृद्धापन में बल पौरुष थकि जाने से।
आगि लगी कुटिया में फिरि क्या होता कूप खुदाने से॥
वृद्धा सौति सतावेगी तब रोओ तरुणा रानी को।
हाय कहाँ अब ढूंढू मैं उस रूठी हुई जवानी को॥
समय एक-सा सदा न रहता ढलती फिरती छाया है।
आज धनी वह काल निरधनी आनी जानी माया है॥
तरुण समय की गौरव गाथा अपनी तुम्हें सुनाता हूँ।
धर्म कर्म कुछ किया न मैंने अब पीछे पछिताता हूँ॥

बार बार धिक्कार रहा हूँ इस अपनी नादानी को।
हाय कहाँ अब ढूंढूँ मैं उस रूठी हुई जवानी को॥
सौलह से चालीस बरष तक चढ़ती हुई जवानी में।
कूदि जाऊँ था निर्भय होकर बाँसों गहरे पानी में॥
मारि छलांग पेड़ पर चढ़ि टहनों को खूब हिलाता था।
बातों की बातों में ऊँचे पर्वत पर चढ़ि जाता था॥
सह न सकूँ था कभी किसी की किंचित् कड़वी बानी को।
हाय कहाँ अब ढूंढूँ मैं उस रूठी हुई जवानी को॥
दौड़ भाग में सब से आगे अव्वल नम्बर पाता था।
रस्साकसी पटेबाजी लाठी भी खूब चलाता था॥
कुस्ती में अपने से दूने पहलवान को ढाता था।
ताल ठोक कर बड़े बड़े योधाओं को डरपाता था॥
बेधि देहुँ था कठिन निशाना लेकरि तीर कमानी को।
हाय कहाँ अब ढूंढूँ मैं उस रूठी हुई जवानी को॥
मेरे थप्पड़ से दुश्मन का निकल जवाड़ा आता था।
मेरे सर से सर दुश्मन का नरियल सा फटि जाता था॥
मेरी कुहनी से दुश्मन का चूर चूर हो जाता था।
मेरी टेढ़ी नजर देखि दुश्मन का दिल थर्राता था॥
मुक्के से सीधा करता था बड़े-बड़े अभिमानी को।
हाय कहाँ अब ढूंढूँ मैं उस रूठी हुई जवानी को॥
भरा जवाड़ा था मुंह में बत्तीसौं दांत चमकते थे।
कश्मीरी सेवों के सदृश गाल सुर्ख दमकते थे॥
उन्नत मस्तक गोल चाँदसा नयना दिव्यज्योति वाले।
घूंघर वाले केश सीस पर नागिन से काले-काले॥

तनी हुई मूंछे मुँह पर जतलाती थी मर्दानी को।
हाय कहाँ अब ढूंढूँ मैं उस रूठी हुई जवानी को॥
हृष्ट-पुष्ट था बदन गठीला सुन्दर सुदृढ़ सजीला था।
गज की सूंडि समान भुजायें हृदयस्थल जोशीला था॥
सिंह समान पराक्रम था सब अंग-अंग फुर्तीला था।
थम्भ समान पुष्ट जंघायें कोई अंग न ढीला था॥
देता था निकालि पृथ्वी से लात मारकर पानी को।
हाय कहाँ अब ढूंढूँ मैं उस रूठी हुई जवानी को॥
दूरि दूरि के पहलवान भी मुझे देखने आते थे।
गुजराती पंजाबी सिन्धी सरहद्दी शरमाते थे॥
वाह-वाह करते थे मेरी देखि सलौनी सूरत को।
रची विधाता ने आकर क्या ऐसी सुन्दर मूरत को॥
नीची अचकन चुस्त पजामा साफे के रंग धानी को।
हाय कहाँ अब ढूंढूँ मैं उस रूठी हुई जवानी को॥
जैसा था मैं बली साहसी वैसा ही था व्यौपारी।
पुरुषारथ से धन संचय करि भरि देता था अलमारी॥
नारि सुता-सुत पोता-पोती आज्ञा में थे घरवाले।
नाते रिश्तेदार करें थे स्वागत सब जीजा साले॥
सबको राखि प्रसन्न किया करता अपनी मनमानी को।
हाय कहाँ अब ढूंढूँ मैं उस रूठी हुई जवानी को॥
जोश जवानी का रंग फीका पड़ने लगा पचासा में।
साठि बरष का शठ कहलाया इस जीवन की आशा में॥
सत्तर में सब कहन लगे हत्तेरे की धुत्तेरे की।
वे ही करने लगे बदी जिनके संग में की थी नेकी॥

अपने हुये बिगाने अब तो करि-करि खैंचातानी को।
हाय कहाँ अब ढूंढूँ मैं उस रूठी हुई जवानी को॥
सत्तर के लगभग अब तन पर सही बुढ़ापा छाया है।
किधों काल ने मुझे पकड़ने को यमदूत पठाया है॥
पग खूंटा दो हालन लागे चरखा हुआ पुराना है।
बिगड़ि गई पेट की आतड़ियाँ होता हज्म न खाना है॥
सभी रोग आये करने मुझ बूढ़े की मिजमानी को।
हाय कहाँ अब ढूंढूँ मैं उस रूठी हुई जवानी को॥
शीश भया सब श्वेत मुरादाबादी जेम पतीली है।
बैठि गये हैं गाल बदन की खाल भई सब ढीली है॥
रौनक जाती रही भई चेहरे की रंगत पीली है।
टप टप टपकै नाक सिड़क से मूछें रहती गीली है॥
हंसते हैं सब आँख देखि अंधी चुन्दी धुँधलानी को।
हाय कहाँ अब ढूंढूँ मैं उस रूठी हुई जवानी को॥
टूटि गये सब दांत बना मुंह सांपों का सा भट्टा है।
बोला जाता नहीं ऐंठि करि जीभ बनी ज्यों लट्ठा है॥
खाँसत-खाँसत धड़क उठा दिल बलगम हुआ इकट्ठा है।
अंग-अंग में वायु भरी सब चीसत रग रग पट्ठा है॥
अरे करूँ कैसे मैं सीधी अब इस कमर कमानी को।
हाय कहाँ अब ढूंढूँ मैं उस रूठी हुई जवानी को॥
जो करते थे प्यार वही अब टेढ़ी आँख दिखाते हैं।
नारि यार परिवार सुता-सुत भाई पास न आते हैं॥
खाना-पीना औषधादि भी नहीं समय पर मिलती है।
हाथ-पांव असमर्थ हुये कमबख्त न काया हिलती है॥

पड़ा खाट पर काट रहा इस मौति सदृश जिंदगानी को।
हाय कहाँ अब ढूंढूँ मैं उस रूठी हुई जवानी को॥
जो धन माल पास था मेरे सबने मिलि करि बांटा है।
फिर भी मैं इनकी आँखों में खटकूँ जैसे काँटा है॥
गाली दे दे कहते मुझ से खून हमारा पीवेगा।
ये खूँसठ बूढ़ा नहिं मरता जाने कबतक जीवेगा॥
हृदय फटा जाता है मेरा सुन-सुन तीक्षण बानी को।
हाय कहाँ अब ढूंढूँ मैं उस रूठी हुई जवानी को॥
मन में था उत्साह पास में पैसा तरुण अवस्था थी।
सब मेरे खाने-पीने की घर में ठीक व्यवस्था थी॥
तब न किया आतमहित मैंने भोगों में फँस जाने से।
चोर निकल भागा घर से फिर क्या हो शोर मचाने से॥
खड़ा शीश पर काल लूटने इस नरभव रजधानी को।
हाय कहाँ अब ढूंढूँ मैं उस रूठी हुई जवानी को॥
कहते थे गुरु बारबार मैं समझा नहिं समझाने से।
जप तप संयम नेम धरम व्रत सीखा नहीं सिखाने से॥
चिड़िया चुग गई खेत अरे अब कहा होत पछिताने से।
बीता समय हाथ नहीं आता गीत पुराने गाने से॥
'मक्खन' छोड़ चलौ अब जल्दी इस झोंपड़ी पुरानी को।
हाय कहाँ अब ढूंढूँ मैं उस रूठी हुई जवानी को॥

लक्ष्मी के सुत चार हैं, धर्म अग्नि नृप चोर।
जेठे को आदर नहीं, तो तीन करें भरफोर॥
लक्ष्मी की गति तीन हैं, दान, भोग अरु नाश।
दान-भोग जो करो तो, निश्चय होय विनास॥

नई जवानी

ओ मदमस्त छोकरे ये दो दिन की नई जवानी है।
उतरि जायगा तांबे पर से ज्यों सौने का पानी है॥
धूम-धाम से चला घूमने नौजवान इक जंगल में।
इठलाता कूंदता उछलता था तल्लीन उदंगल में॥
भूलि विपिन में रहा घूमता मर्घट में आ जाता है।
पड़ी हुई थी मुर्दों की खोपड़ी उन्हें ठुकराता है॥
ठोकर खाकर एक खोपड़ी जोरों से चिल्लानी है।
ओ मदमस्त छोकरे ये दो दिन की नई जवानी है॥
अरे मूढ़ अभिमानी मानव क्या मुझको ठुकराता है।
जो ठुकराता औरों को वह भी ठुकराया जाता है॥
थोड़े दिन में मौत पकड़ि करि तुझे यहाँ ही लायेगी।
मेरी तरह खुपड़िया तेरी पड़ी ठोकरें खायेगी॥
धन यौवन प्रभुता के मद में अंध बना अज्ञानी है।
ओ मदमस्त छोकरे ये दो दिन की नई जवानी है॥
मलि मलि साबुन तेल खूब कलशों पानी से न्हाया है।
चोबा चंदन इतर लगाकर करी सुगंधित काया है॥
चुन्नट डारि पहनि रेशम का कुरता क्या इतराया है।
डारि आँख में अंजन मुँह में बीड़ा पान चबाया है॥
पौडर पोति कपोलों पर क्या वटि-वटि मूछें तानी है।
ओ मदमस्त छोकरे ये दो दिन की नई जवानी है॥
घूंघर वाले बाल काढ़ि करि टेड़ी मांग निकाली है।
चंपा जुही चमेली की क्या फूलमाल गल डाली है॥

धोती पटलीदार बांधि पैरों में बूट चढ़ाया है।
चश्मों पै चश्मा मुंह से सिगरेट का धुआं उड़ाया है॥
बांधि हाथ में घड़ी छड़ी ले चलता चालि दिवानी है।
ओ मदमस्त छोकरे ये दो दिन की नई जवानी है॥
ओ मानव तेरा ये तन मिट्टी का एक खिलौना है।
बिहँसि रहा है आज इसे लखि काल इसे लखि रोना है॥
जोश जवानी का रंग फीका कुछ दिन में पड़ि जायेगा।
आयेगी तब वृद्ध अवस्था हाहाकार मचायेगा॥
होय पुरानी जीरन काया मिट्टी में मिल जानी है।
ओ मदमस्त छोकरे ये दो दिन की नई जवानी है॥
हाड़ मांस चमड़े की मूरति पर क्यों इतना फूला है।
उड़ि जायेगी काल पवन से ज्यों राख का तूला है॥
राधि रुधिर मल मूत्र थूक बलगम की यही पिटारी है।
दाद कोड़ फोड़ा फुनसी दुरगंधमयी घिनकारी है॥
अशुचि अपावन ये पुतली भी तेरे साथ न जानी है।
ओ मदमस्त छोकरे ये दो दिन की नई जवानी है॥
किसी समय में मैं भी तुझसा जोश जवानी वाला था।
मेरे मात-पिताजी ने मुझको भी लाला पाला था॥
मेरी तरुण अवस्था में सुवरणसी सुन्दर काया थी।
किसी बात की कमी न थी घर में बहुतेरी माया थी॥
किन्तु छोड़ने पड़े सभी विधिना ने एक न मानी है।
ओ मदमस्त छोकरे ये दो दिन की नई जवानी है॥
क्या दुनियाँ में सर्वोपरि तेरा ही रूप निराला है।
क्या दुनियाँ में सबसे ज्यादा तू ही पैसे वाला है॥

क्या दुनियाँ में सबसे ऊँची तेरी हाट हवेली है।
क्या दुनियाँ में सबसे सुन्दर तेरी नारि नवेली है॥
मानि कुबेर आपको पर को गिनता कौड़ी कानी है।
ओ मदमस्त छोकरे ये दो दिन की नई जवानी है॥
जिनके ऊंचे महल सतखने बात गगन से करते थे।
हाथी घोड़े रथ बग्गी मोटर में बैठे फिरते थे॥
जिनके घर में अगणित लक्ष्मी पड़ी ठोकरें खाती थी।
जिनकी सुन्दर नारि निरख करि रतिरम्भा शरमाती थी॥
वे भी आये इसी भूमि पर करी न आना कानी है।
ओ मदमस्त छोकरे ये दो दिन की नई जवानी है॥
रहे नहीं रावण से जिसने गिरि कैलाश उखारा था।
इन्द्र सरीखे भूपतियों को पकड़ जेल में डारा था॥
रहे न राम-लखन जिनने रावण का मान मरोड़ा था।
रहे नहीं हनुमंत जिन्होंने लंका का गढ़ तोड़ा था॥
सदा रहा न रहेगा कोई दुनियाँ आनी जानी है।
ओ मदमस्त छोकरे ये दो दिन की नई जवानी है॥
जिन श्रीकृष्ण नृपति ने रण में जरासिंधु को मारा था।
शेषनाग के फण पर पग धर कालीदह मथि डारा था॥
पाँव पकड़ि चानूर सुभट को पृथ्वी माहिं पछारा था।
छाती पर चढ़ि कंस दुष्ट को प्राण रहित कर डारा था॥
वे साधारण मरे तीर से प्यासे मिला न पानी है।
ओ मदमस्त छोकरे ये दो दिन की नई जवानी है॥
रहे नहीं चक्रेश आज जो षट्खण्डेश कहाते थे।
रहे नहीं तीर्थेश जिन्हों के इन्द्रादिक गुण गाते थे॥

रहे नहीं वे शालभद्र जो अगणित धन के स्वामी थे।
रहे नहीं वे कामदेव जो सुन्दरता में नामी थे॥
रहे न भामाशाह दान में हुआ न जिनका शानी है।
ओ मदमस्त छोकरे ये दो दिन की नई जवानी है॥
इन्द्र चन्द्र धरणेन्द्र फणीन्द्र नरेन्द्र सदा न रहे जग में।
दानव दैत्य सुरासुर सबको आना है इस ही मग में॥
वैद्य धनत्तर जन्त्र मन्त्रवादी सब पचि पचि हारे हैं।
काल बली ने साधु सन्त गुनवन्त महन्त पछारे हैं॥
समझ समझ 'मक्खन' मूरख तू क्या करता मनमानी है।
ओ मदमस्त छोकरे ये दो दिन की नई जवानी है॥

घसियारा स्वपने में राजा हो गया

देखो स्वपने में घसियारे ने क्या नृप पद पाया है।
आँखि खुली कुछ भी न रहा तब हाहाकार मचाया है॥
एक घसेरा घास खोदने को जंगल में आया है।
खोदत-खोदत घास धूप में गरमी से अकुलाया है॥
देखि पास में सघन वृक्ष की छाया में उठि आता है।
धरि सिरहाने ईंट हवा ठण्डी लगते सो जाता है॥
मुंदे चैन से नैन सैन में देखी अद्‌भुत माया है।
देखो स्वपने में घसियारे ने क्या नृप पद पाया है॥
देखा एक शहर अति सुन्दर ऊँचे महल अटारी हैं।
वन उपवन अति सघन मनोहर फूलि रही फुलवारी हैं॥
चौपड़ के बाजारों में लाखों घूमैं नर-नारी हैं।
धनकन से भरपूर दुकानों पर बैठे व्यौपारी हैं॥

ऐसा अनुपम नगर देखि करि फूला नहीं समाया है।
देखो स्वपने में घसियारे ने क्या नृप पद पाया है॥
बड़े प्रतिष्ठित लोग नगर के इसे पकड़ि ले जाते हैं।
भक्ति भाव से हर्षित होकर इसको नृपति बनाते हैं॥
नीर सुगंधित भरि सुवरण कलशों से इसे नहाते हैं।
वस्त्राभूषण पहना करि सिंहासन पर बैठाते हैं॥
धरा शीस पर ताज राज का माथे तिलक लगाया है।
देखो स्वपने में घसियारे ने क्या नृप पद पाया है॥
पलटन फौज रिसाले वाले दैन सलामी आते हैं।
सेनापति मंत्री दरबारी सब ही शीस झुकाते हैं॥
साहूकार सेठ रत्नों की भरि-भरि थाली लाते हैं।
नमस्कार करि पुरजन सब चरणों में भेंट चढ़ाते हैं॥
राजतिलक के समय नगर में सबने हर्ष मनाया है।
देखो स्वपने में घसियारे ने क्या नृप पद पाया है॥
बड़े-बड़े भूपतियों ने अपनी कन्या परणाई हैं।
सुरा अप्सरा रति रंभा सी सुन्दर नारी पाई हैं॥
बेटे पोते हुये बहुत बढ़ि गया कुटुम्ब कबीला है।
क्षणभरि के स्वप्ने में देखी चक्रवर्ति की लीला है॥
प्रबल अनेक नृपतियों को रण में कर युद्ध हराया है।
देखो स्वपने में घसियारे ने क्या नृप पद पाया है॥
हुक्म न लोपि सकैं कोई सब ही जन आज्ञा मानै हैं।
ढुरैं शीस पर चमर भाट विरदी जन विरद बखानै हैं॥
हाथी घोड़े रथ बग्गी मोटर में बैठा फिरता है।
खेल तमाशे राव रंग में सुख से समय गुजरता है॥

हास्य विनोदानंद सहित इम लाखों वर्ष बिताया है।
देखो स्वपने में घसियारे ने क्या नृप पद पाया है॥
हुआ मदोन्मत्त प्रभुता लखि तुच्छ सभी को माने है।
राज्य तख्त पर बैठि घमण्डी वटि वटि मूंछैं ताने है॥
ये नहिं जाने मूरख क्षण में यह प्रभुत्व नश जायगा।
आँखि खुली तो जंगल में वह घास खुरपिया पायेगा॥
इतने में इक राहगीर ने आकर इसे जगाया है।
देखो स्वपने में घसियारे ने क्या नृप पद पाया है॥
आँखि खुली देखा जंगल तो राज नजर नहिं आता है।
लगी सिराने ईंट पास में घास खुरपिया पाता है॥
मलि-मलि हाथ विलाप करे विधिना तें यह क्या कीना है।
दिया हुआ वह राजपाट उलटा क्यों मुझ से छीना है॥
हाय जगाने वाला वो कम्बख्त कहाँ से आया है।
देखो स्वपने में घसियारे ने क्या नृप पद पाया है॥
जो यह आँखि नहीं खुलती तो मेरा राज्य नहीं जाता।
बार-बार आखें मीचे पर सपना लौट कहाँ आता॥
घसियारे की दुखद दशा दुनियाँ को यह सिखलाती है।
स्वपने सम जग वस्तु विनश्वर क्षणभर में नशि जाती है॥
गगन नगर धन पटल तुल्य 'मक्खन' ये काया माया है।
देखो स्वपने में घसियारे ने क्या नृप पद पाया है॥

अपनी निधि तो अपने में है बाह्य वस्तु में व्यर्थ प्रयास।
जग का सुख तो मृगतृष्णा है झूँठे हैं उसके पुरुषार्थ॥

स्वपने में साधू के लड़का पैदा हो गया

जेठ मास की धूप दुपहरी में तीक्षण लू चलती थी।
अण्डा चील छोड़ती गरमी ज्वाला तुल्य धधकती थी॥
ऐसी गरमी में पशु पक्षी नर नारी नहिं चलते थे।
भूमि गगन सब गरम हुये मारग में पैर पजलते थे॥
उसी समय इक साधु तृषातुर गरमी से है अकुलाया।
फिरे शीतल स्थान ढूढता उपवन एक नजर आया॥
सघन वृक्ष फल फूल युक्त बल्ली मण्डप ठण्डी छाया।
पक्का कूप सुधासम पानी देखि साधु अति हर्षाया॥
बैठि कुये पर पीकर पानी हाथ पांव मुँह धोता है।
करि के ठण्डा फरस कुये का पड़िकरि साधू सोता है॥
शीतल मंद सुगंध वायु लगते ही निद्रा आई है।
पांच मिनट के स्वपने में साधू ने प्रभुता पाई है॥
हुआ विवाह साधु का घर में सुन्दर नारी आई है।
वस्त्र रेशमी बढ़िया भूषण रत्न जड़ाऊ लाई है॥
शशि वदनी मृग नैनी पिक बैनी गज गमनी नारी को।
खुशी हुआ लखि शची अप्सरा रतिरम्भा सी प्यारी को॥
छूटि गया सब साधुपना अब साहूकार कहाता है।
दैन लैन लाखों के हुन्डी परचौं को भुगताता है॥
विषय भोग में मस्त होय करि धर्म कर्म सब भूला है।
हाट हवेली धन दौलत लखि मूरख मन में फूला है॥
पुत्र एक हो गया खुशी में दौलत खूब लुटाई है।
बाजे बजैं अनेक शहर की जनता न्योति जिमाई है॥

साधु साधुनी कहैं कहैं क्या इनको सेठि सिठानी जी।
एक दिना सो रहे सेज पर दोनों राजा रानी जी॥
साधु कुये की ओर पड़ा बगिया की तरफ लुगाई थी।
पड़ा बीच में बच्चे को गरमी से नींद न आई थी॥
दे दे मारे हाथ पांव शिशु गरमी से अकुलाया है।
माता करती हवा पुत्र की पति को शीघ्र जगाया है॥
हे पतिदेव हटो पीछे को बच्चे को सो लेने दो।
गर्मी से घबराता बालक हवा मुझे कर लेने दो॥
एक बलिश्त हटा साधू पर नारि और झुंझलाती है।
थोड़े और हटो तुमको बच्चे पर दया न आती है॥
नारी को नाराज देखि करि थोड़ा पीछे सरका है।
धम्म गिरा कूये में साधू हुआ एकदम खरका है॥
भागि गया सब स्वप्न साधु का बच्चा रहा न नारी है।
गोते खाने लगा कूप में जान बचाना भारी है॥
सुनिकरि शब्द शीघ्र ही आया माली बगिया वाला है।
आओ साधु निकल आओ रस्सा कूए में डाला है॥
साधू ने पकड़ा रस्सा माली ने ऊपर खींचा है।
बाहर निकल साधु ने लज्जा से मुंह कीना नीचा है॥
चुपके से बोला साधू बगिया पतिजी यहाँ आओ तो।
साधू हो कि गृहस्थी हो तुम सच्ची बात बताओ तो॥
बोला बागवान स्वामी मैं तो गृहस्थ कहलाता हूँ।
बीस वर्ष से बगिया के फलफूल बेचिकरि खाता हूँ॥
सुनकरि चौंकि उठा साधू स्वप्ने में गृहस्थी हूआ मैं।
पांच मिनट की झंझट में गिर गया धम्म से कूआ में॥

जे गृहस्थ वीसियों बरस से लाखों झंझट सहते हैं।
क्या जाने भगवान किस तरह वे दुनियाँ में रहते हैं॥
स्वपने की दुनियां में फँसिकरि कूप पतन दुख पाना है।
तो इस दुनियां में फंस 'मक्खन' नर्ककूप गिरि जाना है॥

साधु ने राजा की नाक पर पैसा मारा

साधू एक लगाकर धूनी सड़क किनारे तपता था।
नेत्र मूंदि कर में ले माला घट में ईश्वर जपता था॥
राहगीर एक देखि साधु को मन में अति हर्षाता है।
हाथ जोड़ि करि साधू को इक पैसा भेंटि चढ़ाता है॥
बोला साधू अरे बच्चे पैसा हमको क्या करना है।
रूखे सूखे भोजन से कम्बख्त उदर ये भरना है॥
हम वन वासी साधु हमें पैसे की नहीं जरूरत है।
ये पैसा ही दुनिया में आशा तृष्णा की मूरति है॥
जंगल के फल फूल खाय करि नीर नदी का पीते हैं।
ले जाओ अपना पैसा इस झंझट से हम रीते हैं॥
कहा साधु ने बार-बार पर पैसा नहीं उठाता है।
नमस्कार करि राहगीर अपने रस्ते को जाता है॥
लगा सोचने साधु खैर अब तो रख लूं इस पैसे को।
जिसे बहुत आवश्यकता होगी दे दूंगा ऐसे को॥
उसी समय एक भारी पलटन चली सड़क पर जाती थी।
धूम धाम से उछलि कूदकरि पृथ्वी को कम्पाती थी॥
पूछा एक सिपाई से साधू ने किस की सेना है।
क्या किसने नुक्सान किया क्या दंड किसी को देना है॥

कहा हवालदार ने पलटन इसी शहर में जायेगी।
राजा का धन माल खजाना सभी लूटिकरि लायेगी॥
है सहजोर हमारा राजा ये कमजोर विचारा है।
रहना चाहे स्वतंत्र नहीं ये मानै हुक्म हमारा है॥
इसीलिये हम सब लड़ने को आगे आगे जाते हैं।
देखो वो महाराजा भी पीछे हाथी पर आते हैं॥
कर विचार साधु इस नृप को बड़ी जरूरत है धन की।
लूटि पराये धन से क्या तृष्णा मिटि जायेगी मन की॥
ये पैसा भी मुझे इसी लोभी राजा को देना है।
निरपराध को चला लूटने लेकरि इतनी सेना है॥
इतने में राजा का हाथी पास साधु के आता है।
फैंका पैसा साधु नाक पै राजा की लगि जाता है॥
लगते ही पैसे के राजा क्रोधित हो हुँकारा है।
पकड़ि लेहु इस पाजी को क्यों पैसा इसने मारा है॥
ऊपर से तो बना हुआ क्या साधू भोला-भाला है।
लेकिन भीतर से पापी मक्कार बड़ा मतवाला है॥
सारी पलटन चील बाज सी साधू पर पड़ि जाती है।
होय निर्दयी राजा तो फिरि दया कौन को आती है॥
कहा किसी सज्जन ने राजा अभी न मारो रहने दो।
पास बुला कर के पूछो इसको भी तो कह लेने दो॥
पूछा राजा ने तूने मेरे पैसा क्यों मारा है।
ठीक बतादे तू जल्दी से क्या अपराध हमारा है॥
बोला साधु किसी ने मुझ को पैसा भेंटि चढ़ाया था।
बहुत मना करने पर भी पीछे उसने न उठाया था॥

बहुत विचार किया मैंने पैसे का क्या करना चाहिये।
जिसे बहुत आवश्यकता हो उसको दे देना चाहिये॥
ठीक आपको समझा मैं धन की आवश्यकता वाला।
इसीलिये न्योछावरि में मैंने तुमको पैसा डाला॥
आप सबल होकर निरबल पर इतनी फौज चढ़ाओगे।
निरपराध निरबैर पुरुष का द्रव्य लूटिकरि लाओगे॥
उसी लूटि के धन में मेरा पैसा आप मिला देना।
बढ़ी हुई आशा-तृष्णा की ज्वाला भूप बुझा लेना॥
पैसे के लगने पर तुमको इतनी गुस्सा आई है।
कितना होगा दुक्ख उसे जिसपर ये फौज चढ़ाई है॥
सरसौं सम तुम अपने दुख पर तो इतने घबराते हो।
मेरु समान और के दुख पर जरा रहम नहिं खाते हो॥
ये धन साथ गया न किसी के नहीं किसी के जावेगा।
अन्याई अत्याचारी दुनियाँ में अपयश पावेगा॥
सुनि उपदेश साधु का राजा मन ही मन पछिताया है।
नमस्कार करि साधू के चरणों में शीश झुकाया है॥
अहो साधु उपदेश तुम्हारा मेरे मन को भाया है।
लेकरि उलटी फौज राय 'मक्खन' अपने घर आया है॥

साधु ने दुनिया को झूठा दिखला दिया

एक पुरुष के सात पुत्र थे छह कुछ नहीं कमाते थे।
एक पुत्र धन लाता था वो सब घर वाले खाते थे॥
डांकेजनी चोरियाँ बेईमानी से धन ठगता था।
इसीलिये ये सारे घर वालों को प्यारा लगता था॥

जेबें कतरि सैंकड़ों रुपये लाकर घर में धरता था।
मात-पिता भाई भावज सारा घर आदर करता था॥
पुण्योदय से लड़के के इक शब्द कान में आता है।
श्रवण सुखद उपदेश भरा सुनने को बाहर जाता है॥
गली-गली गाता फिरता साधू एक महा गुनियाँ।
झूठी है दुनियाँ रे बाबा झूठी है सारी दुनियाँ॥
झूठे मात पिता सुत भाई झूठी है नातेदारी।
झूठा है सब कुटम कबीला झूठी है प्यारी नारी॥
हो प्रसन्न लड़के ने पूछा बाबाजी क्या गाते हो।
झूठी है दुनियाँ ये झूठा क्या उपदेश सुनाते हो॥
मेरे सुख में सुखी सभी जन दुख में दुखिया होते हैं।
मेरे हँसने पर सब हँसते रोने पर रो देते हैं॥
मुझे खिलाकर खाते हैं सब मुझे सुलाकर सोते हैं।
मैं स्नान करूं तो भाई पांव आनकर धोते हैं॥
भाभी भोजन लाती है तो नारी नीर पिलाती है।
देते पिता अशीस मात करि करि के हवा सुलाती है॥
तुम कहते हो दुनियाँ झूठी मैं कैसे ये मानूँगा।
झूठी मुझे दिखादो तो मैं तुमको सच्चा जानूँगा॥
बोले साधू रे बच्चे तू जाकर के घर सो जाना।
खाना-पीना छोड़ खाट पर पड़ मुर्दा-सा हो जाना॥
आँख मींचकर बोल बन्द कर साँस घोट कर पड़ जाना।
कोई कितना उलटे-पलटे पर तू खूब अकड़ जाना॥
करना तू ये स्वांग रात भर प्रात होत मैं आऊँगा।
तब तुझको दुनियाँ है झूठी ये करके दिखलाऊँगा॥

सुन साधू की बात युवक घर वालों के अजमाने को।
बनकर के बीमार खाट पर पड़ा न खाया खाने को॥
अरे मरा रे मरा पेट में दर्द बड़ा सर फटता है।
हाथ पाँव टूटे छाती में धड़कन सांस अटकता है॥
यों कह सांस घोट चुपका हो पड़ा मृतक सा बन करके।
मरा जानि सारे घर वाले रोते हैं सर धुनि धुनि के॥
मात-पिता रोते तेरे बिन हमको कौन खवावेगा।
भाभी रोती देवर तुम बिन कौन साड़ियाँ लावेगा॥
भैया रोते हैं भैया तुम ही तो एक कमाऊ थे।
हम सब तो घर वाले तेरे पीछे बैठे खाऊ थे॥
रोती नारि नाथ तुम बिन अब जेवर कौन घढ़ावेगा।
बिना तुम्हारे मुझ दुखिया को घर में को अपनावेगा॥
अरे मरे हम हाय मरे सब यों कह रुदन मचाते हैं।
उसी समय वे साधु वहाँ पर वैद्यराज बनि आते हैं॥
कोई इलाज करवालो हमसे फीस नहीं हम लेते हैं।
एक खुराक दवा से मुर्दे को जिन्दा कर देते हैं॥
पड़ा शब्द कानों में इनके तुरत दौड़ कर आते हैं।
बड़ी विनय से वैद्यराज को अपने घर ले जाते हैं॥
हे हकीम जी या तो इस मुर्दे को शीघ्र जिला दीजे।
वरना हम मर जाँय सभी हालाहल जहर पिला दीजे॥
अच्छा कह कर वैद्यराज ने क्या तरकीब निकाली है।
लोटा एक मंगाकर पानी राख जरा-सी डाली है॥
लो इस लौटे का पानी पीले वो तो मर जावेगा।
किन्तु अभी सबके आगे मुर्दा जिन्दा हो जावेगा॥

छक्के छूट गये सब के सुन वैद्यराज की वानी को।
हुये सभी चित्राम सरीखे कोई न पीवे पानी को।।
छहों भ्रात से कहा वैद्य ने जो पानी पी जायेगा।
वो तुरन्त मर जाय किन्तु भ्राता जिन्दा हो जायेगा।।
सूख गये सुन प्राण छहों के हमसे मरा नहीं जाता।
हम न पियेंगे हरगिज पानी चाहे मरो जियो भ्राता।।
इसी प्रकार भावजें भी नटि गईं छहों जल पीने से।
हम क्यों खोवें प्राण फायदा क्या देवर के जीने से।।
अब वारी नारी की आई तू मरजा जल पीकर के।
पती बिना तू रांड अकेली कहा करेगी जी करके।।
बोली नारि रांड रहकर के ही मैं समय बिताऊँगी।
पती मरै या जिये मुझे क्या जब मैं ही मर जाऊँगी।।
मात पिता से कहा वैद्य ने तुमको सुत अति प्यारा है।
तुम्हीं मरो अब पीकर पानी जीवे पुत्र तुम्हारा है।।
बहुत जमाना देख लिया अब कहा करोगे जी करके।
किन्तु साफ नट गये वैद्यजी हम न मरें जल पीकर के।।
एक पुत्र मरता है तो मर जाने दो न हमें कुछ गम।
छै बेटों को देख-देखकर जी राजी कर लेंगे हम।।
बोले वैद्य हमी जल पीकर मर जायें तो राजी हो।
हाँ हाँ हाँ हाँ कहा सभी ने तुम अच्छे बाबाजी हो।।
मुस्कराय कर बाबाजी ने हाथ पुत्र पर फेरा है।
उठकर देख अरे लड़के अब को दुनियाँ में तेरा है।।
उठकर बैठ गया लड़का घर वालों को धिक्कारा है।
सभी मतलबी हो घरवाले झूँठा प्यार तुम्हारा है।।

झूठी दुनियाँ दिखला कर के साधूजी तो जाते हैं।
लड़का भी हो लिया साथ तब घरवाले पछताते हैं।।
ये दृष्टान्त सभी संसारी जन को ये सिखलाता है।
'मक्खन' सब सुख के साथी दुख में कोई काम न आता है।।

दाँतों की और जीभ की लड़ाई

(दोहा)

दांतन की और जीभ की भई एक दिन रारि।
बोले दांत जवान से तुझे देहिंगे मारि।।
बड़े बोल मत बोल मूखें चबड़ चबड़ क्यों करती है।
हम बत्तीस अकेली तू क्या मरने से नहिं डरती है।।
बीच हमारे होकर पागल तू हरदम आवे जावे।
एक बार जो धरि मसकैं तो तेरा पता नहीं पावे।।
हम हड्डी के दांत बड़े मजबूत बज्र की शानी है।
पत्थर तक को चाबि जांय तो तेरी कौन कहानी है।।
तू ढिलमिली पिलपिली जिह्वा छै मासे की चमड़ी की।
जो घर में से काढ़ि देंहि तो कोई न पूछै दमड़ी की।।
तू है बड़ी दुष्ट अन्यायनि वृथा हमें धमकाती है।
मेहनत करैं रात दिन हम तू बैठी बैठी खाती है।।
चना चबैना करड़ा भोजन तो हम से रुथवाती है।
आप मुलायम दूध मलाई रबड़ी हलवे खाती है।।
गन्ने और आम की गुठली हमें चूसने देती है।
जो रस निकले मीठा मीठा उसे स्वयं पी लेती है।।
हमें खड़े करि दरवाजे पर आप चैन से सोती है।
सारे घर को घेरि अकेली फिर भी मुँडो रोती है।।

सुनि अपमान जनित दांतों की बातें जिह्वा भी भड़की।
क्रोधित हो आपेसे बाहर इकदम बिजली सी कड़की॥
अरे मदोन्मत्त मूर्खो तुम सब मुझ से क्यों लड़ते हो।
मुझे अकेली पाकर क्यों बत्तीसौं वृथा अकड़ते हो॥
तुम्हें नहीं मालूम जगत में सब से बढ़िकरि मेरा बल।
एक बार जो बिगडूँ तो दुनियाँ में मचा देहुँ हलचल॥
जिस पर मैं नाराज हुई करती उस की बरबादी हूँ।
तोप तेग बन्दूक छुरी मैं एटमबम की दादी हूँ॥
बड़े बड़े राजाओं के मैंने ही शीस कटाये हैं।
हिटलर चर्चिल मुसोलिनी स्टालिन को मैं हि जुटाये हैं॥
मैंने ही तो रावण के क्या खट्टे दांत कराये थे।
मैंने ही कौरव पांडव को आपस में लड़वाये थे॥
मैंने ही तो सीताजी का जंगल वास कराया था।
मैंने ही तो लवणांकुश के दिल में जोश दिलाया था॥
तुम बत्तीस अकेली मैं तुम में नित आऊं जाऊंगी।
एक बात ऐसी कह दूं तो बत्तीसौं तुड़वाऊंगी॥
सुनि जिह्वा की बात दांत थर थर कांपे डर के मारे।
अरी बहन तू हमें माफकर हम सब तुझ से हैं हारे॥
तू है बहन हमारी सच्ची हम सब तेरे भाई हैं।
रहें परस्पर मिलकर दोनों घर की बुरी लड़ाई हैं॥
जीभ और दांतों का झगड़ा ये हमको सिखलाता है।
कभी किसी से लड़ो न 'मक्खन' जो चाहो सुख साता है॥

चेले ने गुरु का डर भगा दिया

एक महा लोभी साधू सारे दिन मांगा करता था।
मांगि मांगि कर रुपये पैसे जोड़ि जोड़ि कर धरता था॥
ले अशर्फियां मैली सी गुदड़ी में सींता जाता था।
वो गुदड़ी डर के मारे चेले को भी न दिखाता था॥
ले न जाये गुदड़ी कोई दिन रात यही डर रहता था।
सावधान रहना रे ये हरदम चेले से कहता था॥
बिछा कमरि के नीचे गुदड़ी साधु राति को पड़ता था।
देखि देखि अन्धियारी साधू को बुखार सा चढ़ता था॥
बार बार कहता चेले तू सोता है या जगता है।
अरे जागते रहना भैया मुझे बड़ा डर लगता है॥
इसी तरह साधू चेले को सारी राति जगाता था।
दिन निकले बस्ती में साधू दान मांगने जाता था॥
एक दिना सोचा चेले ने क्यों इसको डर लगता है।
सारी राति जगाता मुझको आप राति भर जगता है॥
है कुछ माल पास बाबा के इसीलिये ये डरता है।
पड़ै रातभर चैन न इसको जागो जागो करता है॥
मौका पाकर एक दिना चेले ने कुटिया खोली है।
बिछी हुई थी एक पुरानी गुदड़ी उसे टटोली है॥
गोल गोल कुछ लगा तुरत गुदड़ी की सीमन तोड़ी है।
निकलि पड़ी सारी संपति जो साधू जी ने जोड़ी है॥
समझि गया चेला बस येही डर साधू को लगता है।
इन ही के भय से लोभी कम्बख्त रातभर जगता है॥

बांधि पोटली अशर्फियों की डालि कुयें में आया है।
भगा दिया बाबा का डर चेला मन में मुस्काया है॥
घूमि घाम करि साधु नित्य की तरह शाम को आता है।
दिन छिपते ही घुसि कुटिया में गुदड़ी पर पड़ि जाता है॥
गई रात थोड़ि सी साधू उसी तरह चिल्लाता है।
अरे न सो जाना चेले तू आज बड़ा डर आता है॥
बोला चेला बाबाजी अब निर्भय होकर सो जाओ।
फैंकि दिया डर कूये में निश्चिन्त आज से हो जाओ॥
जो डर तुम्हें सताता था वो आज पकड़ि मैं पाया हूँ।
कभी न आवै पास तुम्हारे ऐसा मारि भगाया हूँ॥
सुनकर चौंक उठा बाबा गुदड़ी को देखी-भाली है।
रही नहीं एक भी अशर्फी पड़ी गुदड़िया खाली है॥
बोला साधु अरे चेले तैं ये हरकत क्या कीनी है।
जुड़ी उमर भरि की दौलत तैं फैंक कहाँ अब दीनी है॥
कहा गुरुजी अब तो इस पापी डर को भग जाने दो।
आप चैन से सोओ मुझको भी सुख से सो जाने दो॥
'मक्खन' चेले की शिक्षा दुनियाँ को यह सिखलाती है।
बहु आरंभ परिग्रह वालों को निद्रा नहीं आती है॥

पाप का बाप

लोभ पाप का बाप बखाना ये सब सुनते आते हैं।
उसका एक अनूपम हम तुमको दृष्टान्त सुनाते हैं॥
एक विप्र का पुत्र बनारस से पढ़ि करि कै आया था।
चारों वेद पुराण अठारै कंठ याद कर लाया था॥

तर्क छन्द व्याकरण कोष का पूरा पंडित ज्ञानी था।
वैदिक ज्योतिष सामुद्रिक में और न जिसकी शानी था॥
एक दिना नारी यों बोली प्राणनाथ यहाँ आओ तो।
क्या क्या पढ़िआये काशी से मुझको जरा सुनाओ तो॥
बोला तर्क छंद व्याकरणादिक सब ही पढ़ि आया हूँ।
हुआ परीक्षोत्तीर्ण सभी में अव्वल नम्बर लाया हूँ॥
कहा नारि ने ऐसे कहने से तो मैं नहीं मानूंगी।
कौन पाप का बाप बताओ तब मैं पण्डित जानूंगी॥
लगे सिटपिटाने पण्डितजी ये तो पढ़ा नहीं मैंने।
नहीं किसी ने मुझे सिखाया बात नई पूछी तैने॥
बोली नारि इसे पढ़ि आऔ तब पीछे घर में आना।
पढ़ा पाप का बाप न जिसने वो पंडित किसने माना॥
सुनि नारी की बात चला ब्राह्मण पढ़ने विद्यालय में।
किंतु मिला न पढ़ाने वाला विंन्ध्यप्रदेश हिमालय में॥
शहर शहर और ग्राम ग्राम में फिरता फिरता हारा है।
एक दिना एक बड़ी चतुर वेश्या ने इसे निहारा है॥
करि प्रणाम बोली वेश्या तुम कौन कहाँ से आये हो।
नौजवान सुन्दर खुबसूरत क्यों इतने घबराये हो॥
सुनि वेश्या की बात विप्र ने सारा किस्सा बतलाया।
सब कुछ पढ़ा न पढ़ा पाप का बाप उसे पढ़ने आया॥
बोली वेश्या ये पुस्तक है मेरे पास पढ़ा दूंगी।
आओ मेरे चौबारे पर अभी तुम्हें समझा दूंगी॥
तू वेश्या मैं ब्राह्मण होकर तेरे घर नहीं आऊँगा।
चाहे पढ़ूँ न पढ़ूँ किंतु तुझसे शिक्षा नहिं पाऊँगा॥

नहीं नहीं आओ भगवन् सौ रुपये भेंट चढ़ाऊँगी।
तुम्हें पढ़ाने से मैं पापिनि भी पवित्र हो जाऊंगी॥
सुनत नाम सौ रुपये का ब्राह्मण को लालच आता है।
खट खट खट खट वेश्या के चौबारे पर चढ़ि जाता है॥
ले अब मुझे पढ़ा दे जल्दी बहुत समय न लगाऊँगा।
लेकरि सौ रुपये की थैली मैं अपने घर जाऊँगा॥
अजी जरा कुछ खा तौ लो पीछे मैं पाठ पढ़ाऊँगी।
सौ रुपये क्या देहुँ तुम्हें ढ़ाई सौ भेंटि चढ़ाऊँगी॥
हाय हाय रंडी के घर क्या मैं खाने को खाऊँगा।
धर्म कर्म सब बिगड़ि जाय दुनियाँ में भ्रष्ट कहाऊँगा॥
बोली वेश्या डरौ नहीं सूखा सामान मंगाऊँगी।
आप बनाकर पहले खालो तब मैं पीछे खाऊँगी॥
ढ़ाई सौ का नाम सुनत लालच की झोली खोली है।
विप्र बनाने लगा रसोई तब वेश्या यों बोली है॥
क्यों करते हो कष्ट न्हाय करि मैं हि रसोई बनादूंगी।
मैं हो जाउं पवित्र आज रुपये पाँच सौ चढ़ादूंगी॥
ज्ञान नैन फूटे उर के तृष्णा अंधियारी छाई है।
करि लीनी स्वीकार रसोई वेश्या से बनवाई है॥
खाने को बैठा ब्राह्मण वेश्या ने परसी थाली है।
भरि करि एक हजार रुपे की थैली आगे डाली है॥
बोली वेश्या हाथ जोड़िकरि एक वचन दे देना जी।
मेरे कर से एक ग्रास अपेन मुँह में ले लेना जी॥
कौन पाप का बाप आप को जब ये सबक पढ़ाऊंगी।
तब हजार की थैली मैं चरणों भेटि चढ़ाऊंगी॥

देखि थैलिया ब्राह्मण की हो गई भ्रष्ट मति मैली है।
कौन देखता है मुझको ले जाऊं घर को थैली है॥
ग्रास उठाया वेश्या ने पण्डितजी ने मुँह बाया है।
दे टुकड़ा वेश्या ने मुँह पर चाँटा एक जमाया है॥
बोला विप्र अरी वेश्या मेरे थप्पड़ क्यों मारा है।
लोभ पाप का बाप पढ़ौ ये ही तो सबक तुम्हारा है॥
धन के लालच में फंसिकरि खाया तैं रंडी का टुकड़ा।
यही पाप का बाप 'लोभ' जो देता दुनियाँ को दुखड़ा॥
'मक्खन' लज्जित होय विप्र निज आपे को धिक्कारै है।
हाय हाय यह लोभ पाप का बाप नर्क में डारै है॥

लोभ पाप का ताऊ है

एक साधु जंगल में रहकर कठिन कठिन तप तपता था।
बैठि शिला पर लेकर माला नाम प्रभू का जपता था॥
तन ढ़कने को वृक्ष तुचायें जोड़ि जोड़ि कर सींता था।
जंगल के फल खाकर झरनों का जल पीकर जीता था॥
कभी कभी बस्ती में से भी जाकर भिक्षा लाता था।
जो मिलता था अन्न उसे एकान्त बैठिकरि खाता था॥
सोचा करता बहुत दिनों तप करते करते बीत गये।
किन्तु नहीं मेरे ऊपर अबलों भगवान प्रसन्न भये॥
सुनते थे भगवान भक्त की हो प्रसन्न भरदें झोली।
नहीं समझ में आता क्या अंधेर बात निकली पोली॥
अबलों हुई न कोई सिद्धी और न बढ़ी वचन शक्ती।
क्या झूठे भगवान हुये क्या झूठी है मेरी भक्ती॥

बार-बार ऐसा विकल्प साधू के मन में होता था।
दिनभर इधर-उधर फिर निश में आन शिला पर सोता था॥
एक दिना उस ही जंगल में एक मुसाफिर आता है।
बैठि शिला पर खाकर खाना बढ़िया पान चबाता है॥
तेज तम्बाकू कत्था चूना वर्क एक चांदी का धर।
खाते पान लगा मुंह जलने थूक दिया उस पत्थर पर॥
पड़ा शिला पर थूक छोड़ि वह राहगीर तो जाता है।
सांझ समय वह साधु बैठने उसी शिला पर आता है॥
पड़ा थूक का ढेर चांदनी में वह लाल दमकता था।
श्वेत वर्क के टुकड़ों से वह चमचम श्वेत चमकता था॥
देखि साधु हरषा मन में यह लाल कहाँ से आया है।
हो न होय मेरी खातिर प्रभु ने यह रत्न पठाया है॥
बहुत दिनों के बाद आज भगवान भक्त की टेर सुनी।
लाखों की संपति पाई मैं हुआ आज धनवान गुनी॥
इस प्रकार हर्षित हो साधु ने वह लाल उठाया है।
पान पीक में सना हाथ तब साधु देख पछिताया है॥
हाय-हाय मैं बड़ा अभागा पुण्यहीन लोभी गंदा।
बुरा गले में डाला मेरे आशा तृष्णा ने फंदा॥
बनकर साधु किया न आत्महित नरभव वृथा गमाया है।
बार-बार धिक्कार आपको साधु बहुत पछिताया है॥
ये दृष्टांन्त बताता हमको लोभ पाप का ताऊ है।
साधु-सन्त ऋषि मुनियों पर छा जाता ये हाऊ है॥
होय लोभ के वशीभूत नर क्या-क्या पाप न करता है।
'मक्खन' हिंसा झूठ कपट से औरों का धन हरता है॥

सुख भोगों में नहीं, किंतु त्याग में है।

घर की फूट लंका ढावै

खाती[1] लिये जा रहा था भरि औजारों की गाड़ी को।
जंगल काटन हेतु सैंकड़ों आरी और कुल्हाड़ी को॥
कहा किसी ने मिस्त्री ये औजार काम क्या आयेंगे।
बोला इन से इस जंगल के वृक्ष काटि ले जायेंगे॥
सुनि यह बात वृक्ष सब रोये हाहा हम कटि जायेंगे।
रक्षक नहीं हमारा कोई शरण कौन की जायेंगे॥
जल थल गगन गुफा गिरि में अब कहां छिपैं हम जाकर के।
है जिन्दगी एक दो दिन की काटेगा ये आकर के॥
तब एक बूढ़ा वृक्ष लगा कहने सबको समझा कर के।
बच सकते हो जब तुम में से मिलैं न इनमें जाकर के॥
जब तक लकड़ी का बैंटा न पड़ैगा इन औजारों में।
तब तक काटि न सकता हो यदि प्रेम तुम्हारों में॥
जब तक अपने घर का कोई गैरों में न मिलै जाके।
तब तक दुश्मन अपने घर को नहीं लूट सकता आके॥
लंका लुटी फूट से घर की 'मक्खन' कथन पुरानों में।
त्यों लकड़ी को लकड़ी काटै यही बात इन्सानों में॥

चांदी और मुलम्मे की अंगूठियों की लड़ाई

चांदी की अंगूठी पै जो सौने का चढ़ा झोल।
ओछी थी लगी बोलने इतराके बड़े बोल।
चांदी की अंगूठी के न मैं साथ रहूंगी।
वह और है मैं और ये जिल्लत न सहूंगी॥

1. बढ़ई

मैं कौम की ऊँची हूँ बड़ा मेरा घराना।
वो जाति की घटिया है नहीं इसका ठिकाना।
मेरी सी चमक उसमें न मेरी सी दमक है।
चांदी है कि है राँग मुझे इसमें भी शक है॥
मेरी सी नहीं चासनी मेरा सा नहीं रंग।
वो तोल में अरु मोल में मेरे नहीं पासंग।
अय देखने वालो जरा इन्साफ से कहना।
चांदी की अंगूठी भी है कुछ गहनों में गहना॥
ये सुनते ही चांदी की अंगूठी भी गई जल।
ओ हो री मुलम्मे की अंगूठी तेरे छल बल।
सोने के मुलम्मे पै न इतरा मेरी प्यारी।
दो दिन में भड़क इस की उतरि जायगी सारी॥
कुछ देर हकीकत को छिपाया भी तौ फिर क्या।
झूंठों ने जो सच्चों को चिढ़ाया भी तो फिर क्या।
मत भूल कभी अपनी असल को अरी अहमक।
जब ताव दिया जायगा हो जायगा मुंह फक॥
साँचे की तो इज्जत ही बढ़ेगी जो करै जांच।
मशहूर मस्ल है कि नहीं साँच को कुछ आँच।
अय देखने वालो जरा अगनी पै तपाओ।
सच्चा है कौन कौन है झूठा ये बताओ॥
तब एक परीक्षक ने ले अगनी पै जाँच की।
सब उड़ गया मुलम्मा लखि शक्ल आँच की।
सब खुल गई ये पोल अंगूठी है झोल की।
बिकती नहीं बाजार में चांदी के मोल की॥

(बस ! ठीक इसीतरह दुनियाँ में झूँठ अधिक समय तक नहीं टिकता, जब भी उसका सामना सत्य रूपी अग्नि से होता है तो झूँठ की पोल खुल ही जाती है, फिर उस झूँठे की बात पर कोई भरोसा नहीं करता। अतः **हमें अपने किसी भी कार्य की सिद्धि के लिए कभी भी झूँठ का सहारा नहीं लेना चाहिए**।)

पुत्र वियोगिनी वृद्धा की दशा

एक अकेली वृद्धा का इकलौता सुत अति प्यारा था।
था दिल का टुकड़ा वृद्धा के घर का वही उजाला था॥
बड़ी कठिन से वृद्धा ने बचपन से लाला पाला था।
बीस बरस का अरुण तरुण अति सुन्दर रूप निराला था॥
कमी नहीं कुछ की शिक्षा में पैसा खूब लगाया था।
पढ़ा लिखाकर माता ने अति योग्य सपूत बनाया था॥
शीलवान गुणवान व्रती धर्मज्ञ यती कहलाता था।
सज्जन सौम्य विनीत विवेकी सबका चित्त लुभाता था॥
सच पूछो तो वृद्धा माता की आंखों का तारा था।
उसे देखि करि जीती थी जीवन का वही सहारा था॥
अकस्मात बुढ़िया के बेटे को बुखार आ जाता है।
इकदम हो बेहोश खाट पर पड़ि करि के सो जाता है॥
ममता से माता बेटे के पास दौड़ि करि आती है।
पड़ा अचेत देखि करि वृद्धा शीघ्र वैद्य को लाती है॥
बोला वैद्य अरी माता इसका बुखार जहरीला है।
हुआ खून का पानी सारा बदन पड़ि गया पीला है॥

शीत ज्ज्वर हो गया इसे ठंडा आ रहा पसीना है।
करना हो सो करले इस का अल्प समय का जीना है॥
रुक रुक आती सांस चल रही धीमी धीमी नाड़ी है।
आंखें फाड़ दई जिह्वा क्या मुंह से बाहर काढ़ी है॥
ठंडे पड़ि गये हाथ पांव हो गई नाशिका टेड़ी है।
अब न बचै मैया तेरा सुत पड़ी काल की बेड़ी है॥
किन्तु न छोड़ा साहस माता दौड़ी दौड़ी जाती है।
वैद्य धनंतर औ लुकमान हकीम सभी को लाती है॥
पीर फकीर पुजारी पंडे जंत्र मंत्र जो जानै थे।
व्यंतर भूत भवानी दुर्गा शेडू शैयद मानै थे॥
हौम्योपैथिक और डाक्टर नाना भांति चिकित्सक थे।
रमल फैंकने वाले ज्योतिष विद्या में जो तत्पर थे॥
खोलि खोलि रुपयों की थैली सब के आगे डाली है।
ले जाओ चाहै जितना धन देती भरि भरि थाली है॥
हाथ जोड़ि कहती सब से मोहि भीख पुत्र की दे दीजे।
चाहे मेरी हाट हवेली धन दौलत सब ले लीजे॥
सुन बुढ़िया की आह त्राह सब ही को करुणा आई है।
बढ़िया से बढ़िया औषधि सब ही ने घोलि पिलाई है॥
जपिआ जपने मंत्र पुजारी पंडे पूजा करने को।
श्याने श्यानपती करने ज्योतिषी ग्रहों के हरने को॥
देवी दुर्गा शेडु शीतला बैठे सभी मनाने को।
लगा रहे डाक्टर इञ्जेक्शन शिशु के प्राण बचाने को॥
किन्तु न बच्चा बचा सभी ने काफी जोर लगाया है।
जीव हंस उड़ि गया रही मिट्टी की मुर्दा काया है॥

करते हैं अफसोस सभी यम से नहिं पार बसाती है।
करलो लाखों यत्न काल की घड़ी न टाली जाती है॥
देखि मृतक बच्चे को मैया हाहाकार मचाती है।
लूटि लई विघना ने मुझको रोती धुन धुन छाती है॥
करि करि याद पुत्र की बुढ़िया हाय हाय करि रोती है।
खानपान सब त्याग दिया दिन-रात न किंचित् सोती है॥
मृत बच्चे का चूमि चूमि मुख गोदी में ले लेती है।
तीन दिन हो गये किन्तु नहिं ल्हास उठाने देती है॥
लखि बुढ़िया की दुखित दशा इक महापुरुष यों कहता है।
हे माता इस जंगल में एक महारिषीश्वर रहता है॥
तू जा उस के पास तेरे बच्चे को वही जिला देगा।
वो निरग्रंथ दिगम्बर संतोषामृत तुझे पिला देगा॥
सुनि सज्जन की बात गई बुढिया दौड़ी दौड़ी वन में।
देखि रिषी से बोली दुःखित हृदय भरा जल नयनन में।
हे ऋषि मरे हुये मानव को तुम जिन्दा कर देते हो॥
है तुम में यह शक्ति दुखीजन के तुम दुख हर लेते हो॥
मुझ वृद्धा के इकलौते सुत को हे नाथ जिला दीजे।
खोये हुये लाल मेरे को स्वामी पुनः मिला दीजे॥
बोले साधु अरी माता तू अभी दौड़ि करि जल्दी जा।
जिस घर में कोई मरा न हो उस घर से मुट्ठी सरसों ला॥
जहां न कोई मरा होय उस घर की सरसों लायेगी।
तौ तू भी हे माता अपना बच्चा जीवित पायेगी॥
हो बेहोश मोह बश बुढ़िया सरसों लेने जाती है।
किन्तु जहाँ न मरा हो कोई ऐसा घर नहिं पाती है॥

कोई कहता बाप मरा कोई कहता मेरी मैया।
कोई कहता नारि मरी कोई कहता मेरा भैया॥
मरा किसी का ताऊ चाचा काहू के बाबा दादी।
कोई कहता पुत्र मरा गत वर्ष हुई जिसकी शादी॥
मरी किसी की बहन बुआ काहू का मरा दहोता है।
मरी किसी की पुत्रवधु मरि गया किसी का पोता है॥
कहा सभी ने हे माता तू ऐसा घर नहिं पायेगी।
जहां न कोई मरा होय उस घर से सरसों लायेगी॥
जो जग में जनमा आकर वो अवसि मरण को पावैगा।
बालक हो या तरुण वृद्ध यमराज सभी को खावैगा॥
धनी निर्धनी राव रंक नहिं काल किसी को छोड़ेगा।
कोट किले गढ़ पलटन में से गर्दन आनि मरोड़ेगा॥
तेरे से प्यारे बेटे दुनिया में कितने मरते हैं।
बड़े बड़े घर वालों के लाखों घर रोज उजरते हैं॥
है मैया क्यों बनी बावली अब न जियै तेरा लाला।
सुना न देखा जग में मुर्दों को जिन्दा करने वाला॥
ऐसी बातें वृद्धा ने जब सुनी सभी के घर घर में।
पश्चाताप किया मन में वैराग्य जगा उसके उर में॥
लौटि आनि घर मुर्दे का संस्कार दाह करवाती है।
तजिकरि के घरवार सभी बुढ़िया साधुनि बन जाती है॥
ये दृष्टांत सभी संसारी जन को यह सिखलाता है।
कोटिक यत्न किये 'मक्खन' कोई मरणे से न बचाता है॥

विषयासक्त संसारी

एकसमय एक पथिक विपिन में राह भूलकर फिरता था।
सघन वृक्ष कंटकाकीर्ण निर्जन बन लखिकर डरता था॥
सिंह भेड़िये चीते गज रीछादि जानवर फिरते थे।
वन मानुष बाराह जंगली शब्द भयानक करते थे॥
हो भयभीत पथिक बेचारा इधर उधर को जाता था।
बहुत समय हो गया किन्तु सीधा मारग नहीं पाता था॥
इतने में उन्मत्त एक गज पीछे दौड़ा आता है।
उसे देखिकरि पथिक बिचारा मन ही मन घबराता है॥
हे भगवन् ये काल सदृश गज भी क्या पीछे लागा है।
जानि बचाने हेतु पथिक भी खूब जोर से भागा है॥
दौड़ि भागि करि अंध कूप में बड़ का वृक्ष निहारा है।
उसकी डाल पकड़ि पंथी लटका विपदा का मारा है॥
डरे हुये ने ऊपर को जब दृष्टि उठा देखा बड़ को।
काटि रहे उस डाली की दो श्याम श्वेत चूहे जड़ को॥
घबरा करि फिर नीचे को कूये की ओर निहारै है।
चारि सर्प फुंकार रहे बैठा अजगर मुंह फारै है॥
टूटी डाल गिरा कूये में ये पांचों खा जायेंगे।
पड़ा मौत के मुंह में अब ये प्राण नहीं बचि पायेंगे॥
ये विचार करता ही था एक और उपद्रव आया है।
पकड़ि सूंडि से टहने को हाथी ने खूब हिलाया है॥
तरु के ऊपर मधु मक्खी का एक बड़ा छत्ता भारी।
टहना हिलने से उड़ि मक्खी लिपटि गई इसके सारी॥

काटि रहीं मधु मक्खी तन में दुक्खित हो चिल्लाता है।
दे दे मारै पांव पेड़ से हाहाकार मचाता है॥
इतने में मधु छत्ते से इक बूंद शहद की टपकी है।
ऊपर से आती लखि इसने शीघ्र फाड़ि मुंह लपकी है॥
मधु की बूंद चाटकरि मूरख अत्यानन्द मनाता है।
एक बूंद गिरि जाय और इस आशा से मुंह बाता है॥
इतने में क्रोधित हो गज ने टहना फेरि हिलाया है।
भिनिभिनि कर उड़ लिपटी मक्खी पथिक खूब चिल्लाया है॥
बढ़ी वेदना अधिक अंग में हाहाकार मचाता है।
उसी समय पत्नी युत नभ में विद्याधर इक आता है॥
बोली नारि अहो पति देखो ये नर क्या दुख पाता है।
मारि मारि करि पांव वृक्ष से भारी रुदन मचाता है॥
कृपा करो हे नाथ इसे इस दुख से शीघ्र छुड़ा दीजे।
बैठाकर विमान में इसको इसके घर पहुँचा दीजे॥
हे प्यारी ये नहीं चलैगा इसी कष्ट में राजी है।
चाटि शहद की बूंद सभी दुख भूलि जाय ये पाजी है॥
नहीं नहीं हे नाथ भला को दुख में रहना चाहेगा।
देहु इसे आवाज अभी ये साथ तुम्हारे जायेगा॥
इस संकट से इसे छुड़ावो ये ही धर्म तुम्हारा है।
भला होय इस दुखिया का कुछ बिगड़े नहीं हमारा है॥
प्रिये तुम्हारे कहने से मैं इस को अभी बुलाता हूँ।
किन्तु नहीं चलने का ये मैं तुम्हें ठीक बतलाता हूँ॥
बोला विद्याधर रे दुखिया तेरा कष्ट मिटा देंगे।
बैठि चलौ जल्दी विमान में तेरे घर पहुँचा देंगे॥

कहा दुखित ने नाथ अभी इक बूंद और चखि लेने दो।
बड़ा मजा आता है इसमें थोड़ी देर ठहरने दो॥
थोड़ी देर बाद विद्याधर बोला अब आता भाई।
जरा ओर थमि जाउ शहद की बूंद अभी मुंह में आई॥
पुनः मक्षिकाओं ने काटा तब धुनि धुनि सिर रोता है।
फिर टपकी इक बूंद शहद की उसे चाटि खुश होता है॥
यह कौतुक लखि विद्याधर विद्याधरनी तो जाते हैं।
ये तौ है दृष्टांत सुनो तुमको द्राष्टान्त सुनाते हैं॥
भव-वन अन्धे कूये में यह **संसारवृक्ष** अति भारी है।
चार असी लख **योनि बड़ी शाखायें** न्यारी न्यारी है॥
चहुँगति चारि सर्प बैठे **अजगर निगोद** मुँह फारे है।
काल बली गज खड़ा शीश पर चीख चीख हुँकारे है॥
आयुकर्म डाली को पकड़े लटक रहा संसारी नर।
उसी डाल की काट रहे हैं **रात दिना दो चूहे जर**॥
टूट जायगी क्षणभर में अब टहनी ये गिरि जायेगा।
अजगर या इन चारों सापों में से कोई खायेगा॥
विषयभोग मधु छत्ता मधु की **बूँद विषय की आशा** है।
मधु मक्खी परिवार कुटुम्बी देते निशदिन त्राशा है॥
श्री गुरु विद्याधर सच्चे **विद्याधरनी जिनवानी** है।
बार-बार कहने पर भी विषयी नर एक न मानी है॥
दीन दयाल दयानिधि गुरु समझा-समझा कर हारे हैं।
पर हमने मानी न एक 'मक्खन' दुर्भाग्य हमारे हैं॥

हमारी मूर्खता

एक भक्त राजा का सेवक सेवा निश दिन करता था।
कष्ट न होने देता नृपको दुक्ख शोक सब हरता था॥
हे नृप मिलै पारितोषिक कुछ हमकों यों नित कहता था।
किन्तु महालोभी नृप इसको शुष्क टालना चहता था॥
ढूँढ़ि निकाला एक बहाना नृप ने शुष्क टालने का।
सेवक लो मैं देता हूँ अवसर अटूट धन पाने का॥
खोल देहूँ रत्नों का कोठा सुबह छै बजे आ जाना।
ढुले तीन घंटे में तुम से ले जाओ धन मन माना॥
श्रवण सुखद सुनि बात नृपति की सेवक घर को भागा है।
खुशी खुशी में नींद न आई सारी निशिभर जागा है॥
होत प्रभात छै बजे सेवक राजा के घर आया है।
राजा ने भी रत्नराशि वाला कोठा खुलवाया है॥
हुक्म दिया चपरासी को चाहै जितना ले जाने दो।
किंतु नौ बजे बाद इसे इक पाई भी न उठाने दो॥
करि प्रवेश रत्नालय में सेवक ने क्या क्या देखा है।
हीरा मोती लाल जवाहर पड़े असंख्य न लेखा है॥
और गौर करि इधर उधर देखा तौ अजब तमाशा है।
भांति भांति के खेल खिलौने चिड़िया घर ये खासा है॥
उलटि पलटि करि लगा देखने यह घटिया ये आला है।
नो बजि गये टना टन चपरासी ने आनि निकाला है॥
बोला चपरासी से मैं कुछ भी नहीं लेने पाया हूँ।
एक पुटलिया बांध लैन दो आशा कर के आया हूँ॥

चपरासी कैसे मानै जब हुक्म दिया राजा जी ने।
खेल तमासों में खोये घंटा तीनों इस पाजी ने॥
रोता गया नृपति पै हे प्रभु मैं ने कुछ नहिं पाया है।
खेल खिलौनों में शुभ अवसर सारा व्यर्थ गमाया है॥
बोला नृप कुछ बात नहीं चपरासी को बुलवाता हूँ।
दूजा कोठा सौने का तत्काल तुम्हें खुलवाता हूँ॥
एक पहर में जितना ढो सकते हो ढो ले जाओगे।
बारह बजे बाद रती भर भी नहिं लैने पाओगे॥
सुनकर हुआ प्रसन्न कोठरा सौने का खुल जाता है।
सेवक भीतर धसा स्वर्ण के ढेर देखि हर्षाता है॥
आगे देखा महिलायें स्वागत करने कुछ आती हैं।
शची अप्सरा रति रंभा सी हंसि हंसि चित्त लुभाती हैं॥
भोग विलासों की बातों में सारा समय व्यतीता है।
टन-टन बारह बजे निकाला चपरासी ने रीता है॥
हाय हाय क्या हुआ यहाँ से भी मैं खाली जाता हूँ।
फूट गई तकदीर कहीं से भी कुछ ले नहिं पाता हूं॥
रोता धुनता शीस दौड़ि करि पास नृपति के आया है।
अपनी मूरखता का राजा को सब हाल सुनाया है॥
फिर तीजा कोठा भूपति ने चांदी का खुलवाया है।
तीन बजे तक ढो ले जाओ चाहे जितनी माया है॥
हर्षित होकर चांदी के कोठे में भीतर जाता है।
वहाँ सामने एक अपूरव गोरख धंधा पाता है॥
जरा देख लूं ये क्या जिसमें उलझी सुलझी कड़िया हैं।
हाथ लगाते गोरख धंधे की खिसकी सब लड़ियां हैं॥

बोला चपरासी जैसा था वैसा इसे करा लूंगा।
तब चांदी लेने को कोठे के भीतर जाने दूंगा॥
ज्यों ज्यों करता ठीक इसे त्यों त्यों ही और उलझता है।
हुये तीन घंटे पर गोरखधंधा नहीं सुलझता है॥
टन-टन तीन बजे चपरासी कहाँ मानने वाला है।
कान पकड़ि रीते हाथों कोठे से तुरत निकाला है॥
गिड़ गिड़ाय करि बोला चपरासी कुछ तौ ले लेने दो।
राजी खुशी चला जा नातर जडूं कमरि में लातें दो॥
करता पश्चाताप पास राजा के जाकर रोया है।
मुझ शठ ने ये अवसर भी गोरख धंधे में खोया है॥
बोला नृप हंसि करि तू मूरख कुछ नहिं लेने पायेगा।
अब तांबा पीतल वाला चौथा कोठा खुलि जायेगा॥
ये आखीर समय तांबे पीतल का भी मत खो देना।
जितना ढोया जाय तीन घंटे में उतना ढो लेना॥
अच्छा कहकर जाय धसा तांबे पीतल के कोठे में।
धरा सामने भरा हुआ देखा ठंडा जल लोटे में॥
हलवा पुड़ी कचौड़ी लड्डू पेड़े बालूसाई के।
भरे धरे थे थाल कटोरे रबड़ी दूध मलाई के॥
सोचा दिन भर का भूखा हूँ पहले तो खाना खाऊँ।
पीछे जो कुछ माल मिले बोरे भरि भरि ढो ले जाऊं॥
भोजन किया पिया ठंडा जल बिछा हुआ पलका पाया।
जरा लेटि तो लूं दिनभर का थका हुआ हूँ घबराया॥
पड़ा पलंग पर लगी हवा सो गया न अब जगने वाला।
बजे ठीक छै चपरासी ने पांव पकड़ि बाहर डाला॥

रत्न सुवर्ण रजत तांबा पीतल कुछ ले नहिं पाया है।
खेल विषय गोरख धंधा भोजन में समय बिताया है॥
इसी तरह से हम भी नर भव के चारोंपन खोते हैं।
लिया नहीं कुछ साथ हाथ मलिमलि कर पीछे रोते हैं॥
बालकपन पढ़ने का था सो खेल कूद में खोया है।
तरूणापन में तरूण तरूणी के संग में सोया है॥
मध्य अवस्था खोई फंसि कै घर के गोरख धन्धे में।
पौरुष थके बुढ़ापे में पड़ि गया काल के फंदे में॥
नरभव सुकुल सलिल जिनवाणी बारबार नहिं पायेगा।
जो ये अवसर खोया तो 'मक्खन' पीछे पछितायेगा॥

हम भी हैं ऐसे ही शेखचिल्ली

एक शेखचिल्ली को आशा-तृष्णा की बीमारी थी।
फटे चीथड़े टूटी खटिया कुटी फूंस की प्यारी थी॥
सारे दिन मांगे फिर भी नहिं लालच पूरा होता था।
बनूँ किस तरह धनी फिकर में नहीं रात भर सोता था॥
मांगि अनेक घरों से गाढ़ा गाढ़ा मठा पिया करता।
मूंछों में चिपटी नोनी को पोंछि पोंछि करके धरता॥
नित्य पोंछ लेता मूंछों से नोनी माशा दो माशा।
भरि लूंगा कुछ दिन में गागर थी मन में ऐसी आशा॥
बूंद बूंद जल से कुछ दिन में भर जाता है सागर भी।
फिर माशे माशे नोनी से क्यों न भरेगी गागर भी॥
कुटी फूंस की थी छोटी सी टंगा बीच में था छींका।
उसही छींके पर लोभी ने टांग दिया मटका घी का॥

बिछा गुदड़िया खटिया पे पड़ि ओढ़ी फटी रजाई है।
लगा कड़ाके का जाड़ा तब इसने आग जलाई है॥
हाथ पांव सेंके गरमाई आई चैन पड़ा तन में।
पड़ा खाट पर देख मटकिया सोच रहा मन ही मन में॥
बेचूंगा मैं एक रुपये में कल को घी ताकर के।
ओटूंगा कपास चरखी से उस रुपये का ला करके॥
बेच-बेचकर रुई बिनौले रुपये तीन उठाऊँगा।
उनकी लाय कपास ओंटि करके नौ रुपये लाऊँगा॥
करत करत व्यौपार इस तरह बड़ा धनी बन जाऊँगा।
इक दो गांव खरीद फौज रख के राजा कहलाऊँगा॥
पहले तो छोटे छोटे राजाओं पर चढ़ि जाऊँगा।
जीत युद्ध में छीन सम्पदा बड़ा भूप बन जाऊँगा॥
फौज चढ़ाकर बड़े नृपतियों पर फिर करूँ चढ़ाई मैं।
भूप सैकड़ों को जीतूंगा करके बड़ी लड़ाई मैं॥
इसी तरह जय पाते पाते चक्रवर्ति बन जाऊँगा।
सकल विश्व के राजाओं से नमस्कार करवाऊँगा॥
परणि अनेक नरेशों की कन्याएँ खुशी मनाऊँगा।
जो सबमें होगी सुन्दर पटरानी उसे बनाऊँगा॥
बुला पलंग पर पटरानी से पग अपने दबवाऊँगा।
तू क्या जाने पैर दबाने लात मार धमकाऊँगा॥
लात उठाते ही मटकी में लगी जोर से जाकर के।
छींके पर से उचट मटकिया पड़ी आग में आकर के॥

घी पड़ते ही आग धधकने लगी जली कुटिया सारी।
जली शेखचिल्ली के संग आशा-तृष्णा की बीमारी[1]॥
इसी भांति सोचा करते सब कौन भांति धन पाऊँ मैं।
ऊँचे-ऊँचे कोठी बंगले महल मकान चिनाऊँ मैं॥
पुत्र-पुत्रियों की शादी में अगणित द्रव्य लगाऊँ मैं।
हीरा मोती रत्नजड़ित बढ़िया जेवर गढ़वाऊँ मैं॥
यों दिन-रात विकल्प जाल में सारा समय गमाते हैं।
धर्म ध्यान आतम हित में नहीं किंचित् समय लगाते हैं॥
आखिर एक दिना 'मक्खन' यमदूत पकड़ ले जाते हैं।
आरत रौद्र ध्यान से मर नरकादिक के दुख पाते हैं॥

१. इस पर्याय के नाश की अपेक्षा ही यह कहा है कि उसके साथ उसकी आशा तृष्णा की बीमारी भी जल गई। परन्तु जबतक इस संसरण रूप संसार पर्याय का अभाव होकर मुक्त नहीं होता, तबतक आशा-तृष्णा की बीमारी मिटने वाली नहीं है।

फिर और फुर्र का हिसाब

एक नृपति पूछा करता था वादी और प्रतिवादी से।
फिर क्या हुआ हुआ क्या फिर यों फिर फिर फिर फरियादी से॥
लोग आ गये तंग मुकदमा निबटै नहीं फिसादी से।
रोज अदालत में जाने से पैसे की बरबादी से॥
एक मुकदमेबाज बड़ा हुशियार भिड़ा राजा जी से।
हरा दिया फिर फिर वाले राजा को फुर फुर बाजी से॥

महाराज उस झगडू ने मेरी सब खेती काटी है।
फिर क्या हुआ-हुआ क्या समझाने पर मारी लाठी है॥

फिर क्या हुआ-काटि खेती सब अपने घर में लाया है।
फिर क्या हुआ-खोदि गड्ढे में सारा अन्न दबाया है॥
फिर क्या हुआ-हवा जाने को एक सुराख बनाया है।
फिर क्या हुआ-अन्न चिड़ियों ने सारा घुसि-घुसि खाया है॥
फिर क्या हुआ-छेद में चिड़ियां घुसैं फुर्र उड़ि जाती हैं।
फिर क्या हुआ-छेद में चिड़ियां घुसैं फुर्र उड़ि जाती हैं॥
फिर क्या हुआ-छेद में चिड़ियां घुसैं फुर्र उड़ि जाती हैं।
फिर क्या हुआ-छेद में चिड़ियां घुसैं फुर्र उड़ि जाती हैं॥
बोला राजा फुर फुर तेरी कभी खतम भी होवेगी।
फिर होवेगी खतम आपकी तभी खतम फुर होवगी॥
इसी तरह सब कहते हैं फिर कर लेंगे फिर कर लेंगे।
फिर क्या करलेंगे 'मक्खन' जब यम के दूत पकड़ि लेंगे॥

बाल विधवा की धार्मिक भावना

एक बाल अवस्था की है विधवा की कहानी,
माँ बाप ने जब उसके पुनर्व्याह की ठानी।
करने लगे मति भर्म से जब धर्म की हानी,
कहने लगी मुँह तक कै वो भोली सी निमानी॥
मैं राँड हूँ और बाप को उत्साह ये कैसा,
पति तो गये परलोक में अब व्याह ये कैसा।
विधवा को कभी पुत्र तो जनते नहीं देखा,
दुल्हन तो किसी राँड को बनते नहीं देखा॥
मर जायेगा पति धर्म पै तो भी न मुड़ैगी,
जो टूट चुकी चूड़ियाँ अब कैसे जुड़ैंगीं।

किस मुँह से कहूँगी नये पति से पतिव्रता,
मुझसे निभा न धर्म एक पहले ही पति का॥
किस सर से नई सासु के मैं पांव पडूंगी,
अर्थी की जगह क्या नये डोले में चढूँगी।
दीने उतारि जेवर बिछुये रु मुन्दरिया,
अब किस तरह ओढूँ नई रंगीन चुनरिया॥
उतरे हुये श्रृंगार को क्या फिर से करूँगी,
उजड़ी हुई क्या मांग में सिंदूर भरूँगी।
सब फैंकि दीं उतारि कै माँथे की बिंदियाँ,
अब तो न रचाऊँगी मैं हाथों में मैंदिया॥
अब मैं नहीं पहनूँगी बनारस की साड़ियाँ,
टाकूँगी नहीं गोटे टप्पे किनारियाँ।
है कौन जिसने ये नया सिद्धांत निकाला,
जो धर्म पतिव्रत का कभी देखा न भाला॥
एक बेटी को दूजी जगह देते नहीं देखा,
किसी दान को तो लौट के लेते नहीं देखा।
अय जाति के बुजुर्गो जरा तुम भी खबर लो,
ले सकते हो सत्धर्म की उपमा को अगर लो॥
संसार का सब पाप कटै नाम ही खो दो,
विधवाओं को भरवा कै जहाजों में डुबो दो।
ऐसे बुरे रिवाज को दुनियाँ से भगाओ,
सतियों के सर कलंक का टीका न लगाओ॥
हे मात तात भाई मुझको न सताओ,
संसार से उद्धार का सत्मार्ग बताओ।

बनिकरि कै अर्जिका मैं केश लोंच करूँगी,
करि करि के तपश्चर्ण पाप कर्म हरूँगी॥
घर छोड़ि अर्जिकाओं के मैं साथ रहूँगी,
जंगल में शीत उष्ण की बाधायें सहूँगी।
यह पराधीन त्रियालिंग छेद ही डारूँ,
स्वर्गों में जाय हो मनुष्य मुक्ति पधारूँ॥

क्या यही राम राज्य है

सुना करें थे राम राज्य में हम छब्बे कहलायेंगे।
किंतु न था मालूम कि चौबे से दुब्बे रह जायेंगे॥
अन्न वस्त्र घृत दुग्ध मिलै नहिं तरस गये सब भारत में।
चोरी ब्लैक घूंसखोरी से हैं सब के मन आरत में॥
शासक ही हो गये विनाशक फिर क्या पार बसायेगी।
नये नये कानून बने जनता कैसे सुख पायेगी॥
चढ़ा भूत कंट-ोल शीश पर क्या क्या नाच नचायेगा।
चार छटांक अन्न राशन में कौन पेट भर खायेगा॥
छह सौ वर्ष पूर्व के स्वपने जैसी बात बताता हूँ।
स्वर्णधरा इस वसुंधरा के वस्तु भाव बतलाता हूँ॥
पौंने दो आने मन गेहूँ जौ मन भर एक आने में।
ज्वारि बाजरा मक्की मिलती थी मन भर पौन आने में॥
चने उड़द और मूंग पांच पैसे के मन भर आते थे।
तेल सवा रुपये मन चावल तीनाने मन लाते थे॥
सवा तीन आने मन गुड़, मन खांड पंदरै आने में।
तीसाने मन घी बिकता था फीरोजशाह जमाने में॥

और भाव तुम सुनौ समय थे बादशाह जो अकबर के।
उतर रहे हैं भाग्य दिनौ दिन भारत के नारी नर के॥
आठाने मन चावल गेहूँ पांच आने अरु नौ पाई।
साताने मन दाल उर्द की घी ढाई अरु छै पाई॥
ज्वार बाजरा हूंठाने मन जौ तीनाने दो पाई।
डेढ़ रुपये मन तेल खांड मन बाइस आने छै पाई॥
हल्दी धनियां नमक मिर्च सब पांच आने मन आते थे।
एक कमाता था घर में सब बैठ कुटुम्बी खाते थे॥
सत्तर साठि वरष की बातें हमें तुम्हें मालूम सभी।
उससे पहली बातें पूर्वज कहा करें थे कभी-कभी॥
एक रुपये का चार सेर घी पिता हमारे खाते थे।
हम भी बचपन में रुपये का दोय सेर घी लाते थे॥
सवा रुपये मन बेझड़। गेहूँ डेढ़ रुपये मन मिलते थे।
ज्वारि बाजरा मक्की जौ सब सवा रुपये मन तुलते थे॥
दो ढाई रुपये मन दालें। चावल तीन रुपये मन में।
बढ़िया गुड़ ढाई रुपये मन खाँड आठ रुपये मन में॥
वर्तमान के भाव देखकर सबका दिल थर्राया है।
सभी लोग कहते हैं ऐसा कठिन समय नहीं आया है॥
सत्तर रुपये मन चावल, मन गेहूँ के रुपये तीस।
उड़द मूंग बाजरा मक्की मन के लगते रुपये चौबीस॥
डेढ़ रुपये की सेर खाँड, गुड़ सेर मिलै दश आने में।
छह रुपये का एक सेर घी भी नहिं अच्छा खाने में॥
दस आने में सेर दूध में भी चौथाई पानी है।
'मक्खन' राम राज्य में कपड़े की बन गई कहानी है॥

काटना छुड़ाया है फुंकार मारना नहीं

एक सर्प था बड़ा भयंकर सबको काटा करता था।
भय के मारे राहगीर उस ओर निकलता डरता था॥
जिसकी फुंकारों को सुन कर कोई पास न आता था।
बड़े बड़े गारूडुओं को फण दिखला कर डरपाता था॥
पुण्योदय से उस जंगल में एक ऋषिश्वर आ करके।
सामायिक सन्ध्या करने को बैठे ध्यान लगा करके॥
फुंकारों से धूलि उड़ाता सर्प उस तरफ आता है।
दर्शन करि मुनि वीतराग के नाग शान्त हो जाता है॥
बैठि गया चुपके चरणों में फण भी नहीं हिलाया है।
तब मुनिवर ने धीरे-धीरे वृष उपदेश सुनाया है॥
मुनि पधारे नगरी में सुनकर सब दर्शन को आये।
सर्प पास बैठा मुनिवर के देख सभी जन घबराये॥
तब मुनिवर ने धीरे-धीरे सब को पास बिठाया है।
कहा सभी से नागराज भी धर्म श्रवण को आया है॥
सुनि करि हुये प्रसन्न सभी मुनिवर को शीस झुकाया है।
मुनिवर ने भी जनता को आतमहित पंथ बताया है॥
सत्य अहिंसा का मुनिवर ने सबको नियम लिवाया है।
सबके आगे नागराज से भी काटना छुड़ाया है॥
गये शहर के लोग मुनीश्वर भी विहार कर जाते हैं।
मिटा सर्प के डसने का भय सुनकर सब हर्षाते हैं॥
अब नहिं काटे सर्प जानकर मूरख लोग सताते हैं।
बच्चे फैंकें कंकड़ पत्थर ऊपर धूलि उड़ाते हैं॥

पकड़ैं छोड़ैं बार-बार बच्चों ने बहुत सताया है।
किंतु सर्प ने क्षमा धार कर अपना नेम निभाया है॥
कुछ दिन में फिर वे ही मुनिवर उसी ठौर पर आये हैं।
देख सर्प ने मुनिवर को सब अपने कष्ट सुनाये हैं॥
नहीं काटना कभी किसी को नियम आप दिलवाया है।
सो अपना वापिस लेलो अब मेरा जी घबराया है॥
बोले मुनि काटना छुड़ाया न कि फुंकार मारना भी।
फूं फूं करके आने वालों को चाहिये डरपाना भी॥
भय बिन प्रीत न होय बावले कुछ तो भय दिखलाया कर।
पास न आवेगा कोई फुंकारें खूब लगाया कर॥
किया सर्प ने ऐसा ही तब कोई पास न आता है।
सिद्ध हुआ अति भोले भाले को जग वृथा सताता है॥
'मक्खन' ऐसा भोला भाला भी न वनो जु डरावैं सब।
बनों नहीं खूंख्वार लड़ाकू डाकू जो डरि जावैं सब॥

ज्ञानी का चिन्तन

एक राज्य का यही नियम था पांच वरष राजा बनि के।
हो स्वतन्त्र इच्छानुसार नृप के सुख भोगे बनि ठनि के॥
पांच वर्ष के बाद दूरि करि के उसको सिंहासन से।
छोड़ दिया जाता था निर्जन वन में कठिन कुशासन से॥
पांच वर्ष में जो सुख भोगे वो छिन में मिटि जाते थे।
निर्जन वन में सिंह भेड़िये रीछ उसे खा जाते थे॥
पछिताता था हाय न करता राज न ये दुख पाता मैं।
नहीं भोगता भोग वहाँ नहिं पड़ता यहाँ असाता में॥

इस प्रकार सैकड़ों राज्य करि गये उसी निर्जन वन में।
जो हँसते थे यहाँ, वहाँ वो रोते थे मन ही मन में॥
अबकी बार पकड़ि बस्ती वाले लाये इक ज्ञानी को।
ये देते थे राज न लेता वो इस कौड़ी कानी को॥
मंत्री प्रोहित प्रजा जनों ने बहुत इसे समझा कर के।
बांधि दिया सिर ताज राज का सिंहासन पधरा करके॥
करता राज्य न्याय से था पर रोग समझता भोगन को।
माल खजाने महल अटारी व्यर्थ समझता था धन को॥
समझाते थे सभी भोग लो भोग सुअवसर आया है।
पांच वरष का राज्य आपने बड़े पुण्य से पाया है॥
पर इसने नहिं सुनी किसी की दृष्टि धरम पर डाली है।
इस नगरी से उस जंगल तक पक्की सड़क निकाली है॥
कटवा करके सारा जंगल बढ़िया नगर बसाये हैं।
बाग बगीचे सड़कें नहरें कूप तलाब बनाये हैं॥
बड़े नगर के मध्य सात मंजिल का महल बनाया है।
राजभवन धरि नाम शिखर पर झंडा ओम चढ़ाया है॥
था धन माल खजाना वो भरि-भरि गाड़ी पहुँचाया है।
पांच वर्ष में स्वर्ग तुल्य यह राजस्थान बनाया है॥
अंतिम दिन हो विदा यहाँ से पहुंच गया उस नगरी में।
जहां भयंकर जंगल था चलता न कोई उस डगरी में॥
करते थे आश्चर्य सभी उस ज्ञानी की चतुराई पर।
दानी धर्मी पुण्णी जन की चर्चा थी सबके घर-घर॥
ये दृष्टांत बताता हम को जो देगा सो पावेगा।
पाकर धन न धर्म में खरचे वो पीछे पछितावेगा॥

पुण्योदय से पाकर धन अय्यासी माहिं लुटावेगा।
दान पुण्य के बिना कहो वो क्या परभव में पावेगा॥
धर्म बैंक में जमा करा कर पुण्य ड-ाफ्ट बनवा लीजे।
इसभव या परभव में 'मक्खन' चाहे जहाँ भुना लीजे[+]॥

[+] यहाँ कवि ने सिद्धान्त के रूप में धन के सदुपयोग करने की प्रेरणा दी है; वह सच्चा धन है वीतरागी धर्म। अतः इस मनुष्य भव रूपी राज्य को प्राप्त कर सच्चे वीतरागी धर्म रूपी धन को समझकर नरक-निगोद रूपी भयंकर जंगल के दुःखों से बचने की प्रेरणा प्राप्त कर हमें धर्म में लगना चाहिए।

काल की गति

छांह चढ़ती उतरती है भाग्य की जग में सदा,
एक से रहते नहीं हैं किसी के दिन सर्वदा।
आज जिनके नाम की है बोलती तूती यहाँ,
हाय कल वे कालवश जाते न जानै हैं कहाँ॥
वाद्य नाना भांति के हैं बज रहे जहाँ पर अभी,
घोर हाहाकार क्रन्दन होयगा वहाँ पर कभी।
धूम जिनके नाम की थी कल जगत में मच रही,
देखलो उनके लिए ही है चिता यह रच रही॥
सोचने और जानने पर शोक है संसार में,
समय का बदला हमें हा है न इस भव धार में।
अतः मित्रो बन्धुओ जागो उठो होओ खड़े,
यह समय जाता चला देखो सभी ऊँचे चढ़े॥

करनी का फल

एक लुटेरा राहगीर चलतों को लूटा करता था।
बड़ा प्रबल था डाकू पक्का काहू से नहिं डरता था॥
लेकर तीक्षण शस्त्र जंगलों में वह पहरा देता था।
देख अकेले मालदार को लूट प्राण हर लेता था॥
एक धनी हज्जार बीस की लिये असर्फी आता है।
चढ़ा ऊंट पर बियावान जंगल में दौड़ा जाता है॥
चढ़ि घोड़े पर डाकू ने उस मालदार को घेरा है।
बहुत देर दौड़े भागे आखिर हो गया अंधेरा है॥
पटकि ऊंट से डाकू ने सब माल सेठ का छीना है।
धरि तलवार कंठ पर बोला तेरा मुश्किल जीना है॥
बोला वैश्य मुझे मत मारौ माल आप सब ले लीजे।
हाथ जोड़ मैं करूं प्रार्थना प्राणदान मोहि दे दीजे॥
बार-बार कहने पर भी डाकू को रहम न आया है।
मारि सेठि को ले दौलत डाकू अपने घर आया है॥
आह त्राह करता धन वाला मरा निदान बांधि करि के।
मैं भी इससे बदला लूंगा मारूंगा तड़फा कर के॥
उधर चित्त बदला डाकू का घर आकर पछिताया है।
हाय-हाय मुझ पापी ने ये कैसा पाप कमाया है॥
अब मैं नहीं किसी को मारूं नहीं लूटि धन लाऊंगा।
किसी शहर में जाकर धंधा करके द्रव्य कमाऊंगा॥
बड़े शहर में जाकर बढ़िया कारखाना खोला।
झूठ कपट चोरी तजि पहना सत्य अहिंसा का चोला॥

धंधा तो चल गया किन्तु घर में नहिं था कोई बेटा।
कहता था वह मन ही मन में मैं तो हूँ किस्मत का हेटा॥
कुछ दिन में इक पुत्र हुआ धन दौलत खूब लुटाई है।
ये नहिं समझा मूरख बदला लैने किस्मत आई है॥
हुआ वर्ष सोले का लड़का आने लगी सगाई है।
धूमधाम से शादी कर दी पुत्रवधू घर आई है॥
होते ही विवाह लड़के को बीमारी लग जाती है।
दर्द पेट में शिर में चक्कर नींद जरा नहिं आती है॥
ज्यों-ज्यों करे इलाज दिनों दिन त्यों-त्यों बढ़ती बीमारी।
हुआ सूखि कर ठांठड़ लड़का खत्म हुई संपति सारी॥
इधर न होता लड़का अच्छा उधर आ गया टोटा है।
खाने को मुहताज न सिर पर टोपी रहा लंगोटा है॥
एक दिना बोला लड़का बापू मैं कौन बताओ तो।
बोला तू मेरा बेटा है क्या कहते फरमाओ तो॥
गर्दन हिला कहा लड़के ने तुमने नहिं पहचाना है।
लेकरि के बदला बापूजी मुझे यहाँ से जाना है॥
भूलि गये तुम उसको जिससे जंगल में धन छीना था।
संपति छीन हजार बीस की प्राण रहित करि दीना था॥
बहुत प्रार्थना करने पर भी तुमने एक न मानी थी।
जिस रस्ते आई संपत्ति उस ही रस्ते से जानी थी॥
होय दरिद्री दुखिया तुम मरि करि नर्कों में जाओगे।
मैं मरता हूँ छोड़ि रांड को देखि-देखि दुख पाओगे॥

ये कह करि मरि गया पुत्र डाकू अति रुदन मचाता है।
पुत्र गया धन गया रांड को देखि-देखि पछिताता है॥
कुछ दिन में अपनी औरत अरु पुत्रवधू मरि जाती है।
पाप कर्म में उदै जीव पर ऐसी आफत आती है॥
रहा अकेला पास न पैसा भोजन का भी लाला है।
तड़फ-तड़फ के मरा मिला कोई न उठाने वाला है॥
जो जैसा करता है 'मक्खन' वो वैसा फल पाता है।
दीर्घकाल या अल्प समय में अवशि उदय में आता है॥

विशेष – *वर्तमान में लोग ऐसा कहते कहीं भी मिल जाएँगे कि तुम्हारा धर्म-कर्म किस काम का ? तुम्हारे तो कितनी-कितनी शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, सामाजिक, पारिवारिक परेशानी हैं और किसी पापी की मिसाल देते हुए कहेंगे कि वह देखो, कैसे मजे मार रहा है, करोड़ों का व्यापार है, समाज में प्रतिष्ठा है, परविार में अनुकूलता है, सब प्रकार से सुखी है।*

यह कथानक इस मिथ्या चिन्तन को दूर कर चिन्तन को एक सही दिशा देता है कि वास्तव में वर्तमान में तो पूर्वकृत कर्म का फल प्राप्त हो रहा है। वर्तमान के कर्मों का फल तो भविष्य में मिलेगा। जिसे अभी दु:ख मिल रहा है, निश्चित ही उसने पूर्व में कोई महापाप किया था । और जिसे अभी सुख मिल रहा है, उसने अवश्य ही पूर्व में सत्कार्य किए होंगे। अत: हमें सदा ही सत्कार्य में संलग्न रहना चाहिए।

सेठ सुदर्शन की शील प्रतिज्ञा

सेठ सुदर्शन शीलवान गुणवान व्रती कहलाते थे।
सज्जन सौम्य विनीत विवेकी काहू को न सताते थे॥
दीनबन्धु दुखियन दुख हर्ता पर-उपकारी दानी थे।
रूपवान मनमथसम सुन्दर जिनमत के शरधानी थे॥
बार-बार इनके सरूप की सुनी प्रशंसा रानी ने।
धोखे से जेवर खरीदने बुलवाया मस्तानी ने॥
गये सेठ रानी के घर नाना प्रकार के ले गहने।
तब रानी लखि रूप सेठ का हो आसक्त लगी कहने॥
अहो सेठ आपने आज मेरा मन हर लीना है।
बिना किये सम्बन्ध आपसे मेरा मुश्किल जीना है॥
बोले सेठ अहो माताजी मैं हिजड़ा हूँ मर्द नहीं।
सुना न देखा नारि नपुंसक का जग में सम्बन्ध कहीं॥
तब रानी खिसियानी होकर करती है अफसोस घना।
जेवर लेकर सेठ गये घर धर्म बचा कर के अपना॥
कुछ दिन बाद शहर में भारी महिलाओं का मेला था।
रानी भी वहाँ गई देखने भारी भीड़ झमेला था॥
सेठ सुदर्शन की सेठानी भी मेले में आई थी।
सुन्दर नन्हासा प्यारा बेटा गोदी में लाई थी॥
गोरा-गोरा चंचल बच्चा उछल कूद मुस्काता था।
खड़ी पास में राजा की रानी का चित्त लुभाता था॥
रानी ने निज सखियों से पूछा ये बच्चा किसका है।
धन्य धन्य वह नारि धन्य वो नर यह बच्चा जिसका है॥

कहा किसी ने सेठ सुदर्शन की ये सुन्दर नारी है।
उन्हीं सेठजी का यह बेटा ये इसकी महतारी है॥
सुन रानी के लगा एकदम छाती में मुक्का जैसा।
सेठ सुदर्शन तो हिजड़ा है ये उनका बच्चा कैसा॥
कहा किसी ने धन्य सुदर्शन सेठ महा बलधारी को।
बन जाते हीजड़ा नपुंसक देख पराई नारी को॥
यह सुन दुश्चरित्र रानी कामातुर हो घर आती है।
बड़ी चतुर चालाक कुट्टनी दूती को बुलवाती है॥
हे दूती तू किसी तरह यहाँ लादे सेठ सुदर्शन को।
मुँह मांगा दूंगी इनाम करदे प्रसन्न मेरे मन को॥
बोली दूती सेठ सुदर्शन का लाना क्या भारी है।
तीन लोक की वस्तु मंगा दूं लगे तुम्हें जो प्यारी है॥
कहो भूमि आकाश चढ़ादूं गगन हिलादूं लातों से।
गागर में सागर भरदूं जीत लूं वृहस्पति बातों से॥
यों समझा कर दूती लग गई अपना काम बनाने में।
सफल होंहुँ किस तरह सेठ को रानी के ढिंग लाने में॥
सेठ अष्टमी चतुर्दशी को मुर्द घटों में जाकर के।
सारी रात खड़े रहते हैं आतम ध्यान लगा करके॥
ये अच्छा है मौका उनको कांधे पर धरि लाने का।
किन्तु न रोके द्वारपाल कुछ यत्न करूँ धमकाने का॥
सोच समझ मिट्टी के पुतले सात बनाये पुरुषाकार।
इक पुतला कांधे धरि लाई अर्ध निशा में पहले द्वार॥
बोला द्वारपाल क्या लेकर राज भवन में जाती है।
चुप्प रही नहिं बोली तब धमकाई क्यों न बताती है॥

पटक जमी पर तोड़ पूतला गुस्से में बोली तुतला।
रानी ने पूजा की खातिर मंगवाया था ये पुतला॥
मौन सहित मैं लिये जाउं थी तूने मुझको बुलवाकर।
सोन बिगाड़ दिया रानी का छोडूं तुझे निकलवाकर॥
द्वारपाल डरकर घबराकर पकड़ लिये पग दूती के।
बोली दूती अब रोकी तो फोडूं शीश निपूती के॥
क्षमा माँगि कर द्वारपाल बोला मैं अब नहीं रोकूंगा।
चाहे जब आओ-जाओ मैया मैं तुम्हें न टोकूंगा॥
इस प्रकार सातों द्वारों पर अपना रौब जमा करके।
बार आठमी सेठ सुदर्शन को लाई काँधे धरिके॥
निर्भय होकर के रानी की शय्या पर जा डाला है।
हाय हाय रे पाप कर्म तू हालाहल का प्याला है॥
किये अनेक विकार रात भर नंगी होकर रानी ने।
किन्तु न शील प्रतिज्ञा तोड़ी सेठ दृढ़व्रती ज्ञानी ने॥
वीति गई निशि हुआ सवेरा अब क्या पार बसाती है।
अंग उपंग खोंसि अपने क्या त्रिया चरित्र दिखाती है॥
हाय-हाय रे दौड़ो-दौड़ो मारौ सेठ सुदर्शन को।
पापी ने घायल कर डाला खोंसि खोंस मेरे तन को॥
पड़ा सामने वो शय्या पर बुलवाओ राजाजी को।
कह दो कोतवाल से शूली पर धर दें इस पाजी को॥
जाहिर करता दुनिया को मैं शीलवान मैं त्यागी हूँ।
लेकिन मैं इस दुश्चरित्र से शील बचा कर भागी हूँ॥
राजा ने आकर क्या देखा सेठि सुदर्शन शय्या पर।
क्रोधित हो चाण्डालों को बुलवाया धर दो शूली पर॥

पकड़ ले गये चांडाल शूली पर सेठ सुदर्शन को।
चढ़े सेठ शूली पर हर्षित हो कर शुद्ध हृदय मन को॥
जपा मंत्र नवकार हृदै में सिद्धों को पधराया है।
उसी समय सौधर्म इन्द्र का सिंहासन थर्राया है॥
जान अवधि से सेठ सुदर्शन शीलवान सम्यक्ती है।
देव-शास्त्र-गुरु का श्रद्धानी सत्य धर्म की भक्ती है॥
कहा इन्द्र ने देवों से दुख मेटो जाय सुदर्शन का।
शील धर्म की विजय होय संदेह मिटै सबके मनका॥
जाय अमरगण शूली का सिंहासन तुरत बनाया है।
भक्ति भाव से सेठ सुदर्शन को उसपै बैठाया है॥
ढरै चंवर शीश पर सुरगण करैं गगन में जै जै कार।
धन्य धन्य सब कहैं सेठको राजा रानी को धिक्कार॥
पुष्प वृष्टि हो रही दुंदुभी बजैं देवियाँ गावैं गान।
देखि अपूर्व धर्म की महिमा हुआ हजारों को श्रद्धान॥
राजा लज्जित होय पगों पड़ि क्षमा सेठ से माँग रहा।
कहा सेठ ने अशुभोदय मेरा था तेरा दोष कहा॥
राजा ने रानी दूती दोनों को गधहों पर धर के।
'मक्खन' दिया निकाल राज्य से बाहर काला मुंह करके॥

वादिराज मुनीश्वर का कोढ़ मिटा

एक नृपति के दो मन्त्री थे एक अजैन एक जैनी।
दोनों की आपस में चलती रहती थी पैनी छैनी॥
ऊपर से था प्रेम किन्तु भीतर हालाहल का प्याला।
भीतर से काले काले ऊपर कहते लाला लाला॥

मौका पाकर एक दूसरे को नीचा दिखलाते थे।
हँसी-हँसी बातों-बातों में विन्ध्याचल को ढाते थे॥
चली एक दिन राजसभा में साधु सन्त ऋषियों की बात।
कहा जैन ने वीतराग निरग्रंथ दिगम्बर मुनि-विख्यात॥
तब अजैन मन्त्री बोला जैन मुनि कोढ़िया होते हैं।
आती है बदबू शरीर से कभी न नहाते धोते हैं॥
बोला राजा कहो जैन क्या कोढ़ी गुरू तुम्हारे हैं।
नहीं-नहीं महाराज स्वर्ण सम सुन्दर गुरू हमारे हैं॥
राजा से बोला अजैन चलकरि तुम को दिखला दूंगा।
कोढ़ी हैं या स्वर्ण तुल्य सच झूंठ सभी बतला दूंगा॥
नृप ने कहा जैन साहब अब क्या है सब बतला दीजे।
वरना अपने जैन धरम अरू अपनी खैर मना लीजे॥
निकला मुंह से यही नहीं कोढ़ी गुरुदेव हमारे हैं।
तब सब ने तय किया प्रात चल देखें गुरू तुम्हारे हैं॥
आकर के घर मंत्री ने कुछ मित्रों को बुलवाये हैं।
पूछा आजकाल नगरी में जैन मुनी कोई आये हैं॥
कहा सभी ने वादिराज मुनि परम दिगम्बर योगी हैं।
ज्ञानी ध्यानी परम तपस्वी किन्तु कोढ़ से रोगी हैं॥
कोढ़ी हैं मुनि यह सुनकर मंत्री का दिल थर्राया है।
हाय-हाय मेरे द्वारा उपसर्ग धर्म पर आया है॥
प्रातकाल होते सब जाकर देखेंगे मुनि कोढ़ी हैं।
जैन धरम बदनाम हुआ मेरी अब आयु थोड़ी है॥
सन्ध्या का था समय दौड़ मंत्री मुनिवर पर जाता है।
नमस्कार कर मुनिवर के चरणों में शीस झुकाता है॥

लखि मुनि मंत्री के नयनों से बही अश्रु जल की धारा।
तब मुनिवर ने धर्मवृद्धि देकर मंत्री को पुचकारा॥
अरे भव्य क्या दुक्ख तुझे क्यों रो-रो कर घबराता है।
कर्मोदय से आती सबको साता और असाता है॥
बोला मंत्री महाराज थी राजसभा में यह चर्चा।
साधु संत ऋषि मुनियों में किसकी करनी पूजा अर्चा॥
मैंने कहा जैन मुनि जग के पाप पंक को धोते हैं।
जैनेतर ने कहा जैनियों के गुरु कोढ़ी होते हैं॥
राजा ने मुझसे पूछा मैं कहा स्वर्णसम काया है।
तब अजैन ने कहा चलो दिखला लाऊं यहाँ आया है॥
प्रातकाल सब लोग देखने प्रभू आपको आयेंगे।
मुझे नहीं मरने का भय जिनमत की हंसी उड़ायेंगे॥
थमि कर थोड़ी देर कहा मुनिवर ने अब तुम घर जाओ।
हम अब बैठे सामायिक में प्रातकाल सबको लाओ॥
चला गया मंत्री घर पर नहिं नींद रात भर आई है।
प्रात होत मंत्री अजैन ने संकल आ खड़काई है॥
जागो उठो जैन साहब सब नृपति आदि भी कहते हैं।
स्वर्ण समान तुम्हारे गुरु का दर्शन करना चहते हैं॥
जपि नवकार मंत्र मंत्री बोला मैं फौरन आता हूँ।
जैसे हैं मुनिराज आपको दर्शन अभी कराता हूँ॥
खोल द्वार देखा मंत्री ने जनता में काफी हल चल।
चले देखने मुनियों को मच गया नगर में कोलाहल॥
उधर रात में वादिराज मुनि एकीभाव बनाया है।
वीतराग अरहंत देव को हृदय माहिं पधराया है॥

यह श्लोक[1] रचा मुनिवर ने भक्ति भाव युत शुद्ध स्तवन।
कोढ़ तुरत मिट गया हो गया सुवरण सा चमकीला तन॥
प्रात हुआ पौ फटी मिटा अंधियार भानु उग आया है।
बाहर निकल वस्तिका ने मुनि तरु तल ध्यान लगाया है॥
भानु किरण से मुनिवर का तन विद्युत तुल्य दमकता था।
आकर देखा जनता ने तो स्वर्ण समान चमकता था॥
अकस्मात सबके मुख से जय जय की ध्वनी निकलती है।
धर्मीजन संतुष्ट हुये पापी की छाती जलती है॥
स्वर्ण तुल्य मुनि लख नृप ने जैनी मंत्री पुचकारा है।
द्वेषी मंत्री को भूपति ने बुरी तरह धुतकारा है॥
तब मुनिवर ने नृप आदिक को समझाया मृदुबाणी से।
करो न बैर विरोध किसी से प्रेम करो सब प्राणी से॥
कल तक तो था कोढ़ आज मिट गया धर्म की शक्ति से।
कौन वस्तु जग में दुर्लभ है जो न मिलै जिनभक्ति से॥
जैनेतर मंत्री का कुछ अपराध नहीं है चुगली में।
अब तक देखो कोढ़ निशानी बनी हुई इस उंगली में॥
ये आश्चर्यजनक बातें सुन जै जै कार उचरते हैं।
निर्विरोध निष्पक्ष मुनी को नमस्कार सब करते हैं॥
शत्रु मित्र अहिमाल कांच कंचन निन्दक बन्दक इक से।
धन्य धन्य निरग्रन्थ जैन मुनि वीतराग सच्चे निकसे॥

---

1. जब आप आये स्वर्ग से चय गर्भ माता के सही।
षट् मास प्रथमहि देव आकर करी कंचनमय मही॥
अब ध्यान द्वार तुम्हें प्रभू निज हृदय में पधरा लिया।
तब होय स्वर्ण समान तन नीरोग तो आश्चर्य क्या॥

दोनों मन्त्री नृपति आदि सब ही मुनिवर ढिंग जाते हैं।
हाथ जोड़ कर नमस्कार अपराध क्षमा करवाते हैं॥
तब मुनिवर ने धर्मवृद्धि कहि हित उपदेश सुनाया है।
मृदुल मनोहर अमृत तुल्य वृष सबही के मन भाया है॥
दे उपदेश मुनीश्वर तो आहार निमित उठ जाते हैं।
हर्षित होकर पुरवासी अपने-अपने घर आते हैं॥
'मक्खन' मंत्री मुनिवर की चर्चा घर-घर में होती थी।
वादिराज मुनिवर के द्वारा जगी धर्म की ज्योती थी॥

विशेष *– इस कथानक से यह स्पष्ट झलकता है कि वीतरागी दिगम्बर सन्त अपने शरीरजन्य रोग को दूर करने का प्रयास भी नहीं करते, वे तो अपने आत्मधर्म की सामर्थ्य से अपने में ही लीन रहकर शरीरजन्य रोग की परवाह नहीं करते, फिर भी उनके साता वेदनीय कर्म के निमित्त से स्वयमेव वह रोग दूर हो जाता है। इसप्रकार इसमें धर्म की निश्चय-व्यवहार शक्ति को बताया गया है।*

सेठ धनंजय की पूजा

सेठ धनंजय शुद्ध भाव से पूजा नितप्रति करते थे।
निर्विकल्प निःशंक होय जिनभक्ति हृदय में धरते थे॥
वीतराग नाशाग्र दृष्टि निर्ग्रन्थ दिगम्बर मूरति पै।
धरि एकाग्र दृष्टि बाहर अंतर शुद्धातम मूरति पै॥
जीवन मरण अलाभ लाभ का हर्ष विषाद छोड़ करिके।
प्रातकाल जिनमंदिर जाते सबसे स्नेह तोड़ करिके॥

घंटे भर सामायिक दो घंटे पूजन घंटे स्वाध्याय।
निर्विवाध था नित्य नियम ये पीछे और करें व्यवसाय॥
एक दिना पूजा करते-करते क्या विपदा आई है।
दुखद भयंकर खबर एक नौकर ने आन सुनाई है॥
सेठ आपका नौजवान बेटा विषधर ने काटा है।
चढ़ा अंग में जहर पड़ा बेहोश मचा सन्नाटा है॥
रोय-रोय सेठानी छाती पीटि-पीटि घबराती है।
जल्दी चलो न देर करौ सेठानी तुम्हें बुलाती है॥
कहा सेठ ने मैं तो पूजा करके ही घर चालूंगा।
करो उपाय बने जो तुमसे मैं क्या प्राण बचा लूंगा॥
नौकर ने जा कहा श्रवण कर सेठानी गुस्सा होती।
नंगे पैरों दौड़ी आई मंदिर में रोती-रोती॥
हे पतिदेव चलो जल्दी तुमको तो पूजा भाती है।
मृत शय्या पर पड़ा लाल मेरी छाती थर्राती है॥
कहीं न जावैगा मन्दिर भगवान कहीं नहिं जावेंगे।
निकल गये जो प्राण लाल के फेरि लौट नहिं आवेंगे॥
रुकि-रुकि आती सांस चल रही धीमी-धीमी नाड़ी है।
आंखें फाड़ दई जिह्वा भी मुंह से बाहर काड़ी है॥
नीला पड़ि गया अंग कांचसा जहर भरा है रग रग में।
हाय-हाय इकलौता बच्चा फेरि मिले न हमें जग में॥
सभी आपकी पूजा भक्ति मिल जावेगी मिट्टी में।
शीघ्र इलाज करो बेटे को झोंक रहें क्यों भट्टी में॥
किन्तु न मानी बात सेठ ने कहा न पूजा छोडूंगा।
पूजा ही मेरा इलाज है इससे मुंह नहिं मोडूंगा॥

ये जिनेन्द्र की भक्ति ही मेरे सब संकट टालेगी।
अशुभ कर्म की सांकल को ये काट छिनक में डालेगी॥
प्रभु से अधिक जहर का हर्ता और न जग में पायेगा।
वैद्य हकीम मन्त्रवादी मरने से नहीं बचायेगा॥
तुझे नहीं श्रद्धान इसलिये पूजा व्यर्थ समझती है।
लेकिन श्रीजिनेन्द्र की पूजा ही संकट को हरती है[1]॥
प्रभु की पूजा से बढकरि दुनियां में और इलाज नहीं।
मेरे तो श्रद्धान यही है इन्हें छोड़ नहिं जाउँ कहीं॥
सुन सेठानी रोती-रोती उलटी घर को जाती है।
बच्चे को कंधे पर धरिकरि मंदिर में ले आती है॥
अगणित भीड़ साथ में सबके नयनों से आंसू झरते।
कैसा है कठोर दिल वाला सेठ सभी निन्दा करते॥
हाय-हाय अफसोस जिसे बच्चे पर दया न आती है।
यों कहती-कहती जनता सेठानी के संग जाती है॥
क्रोधित हो माता ने बच्चा वेदी आगे डाला है।
कहा बचाले पूजा करके पड़ा मृतक यह लाला है॥
देखूं कैसी पूजा तेरी जहर हरेगी बच्चे का।
लग जायेगा पता सभी को तेरे झूठे सच्चे का॥
किन्तु भक्त ने उत्तर में कुछ भी नहिं शब्द निकाला है।
भक्ति भाव युत प्रभु की नजरों पर आँखों को डाला है॥
बड़ी लगन से पूजा में तन्मय हो ध्यान लगाया है।
क्या होगा क्या हुआ हो रहा सब विकल्प बिसराया है॥
मन वच तन कर शुद्ध श्री अरहंत सिद्ध गुण गाये हैं।
लगा उतरने जहर सांस बच्चे को फौरन आये हैं॥

श्रीजिनेन्द्र स्मरण मात्र से विष निर्विष हो जाता है।
डाकिनी शाकिनि भूत प्रेत वैताल व्याल न सताता है॥
ज्यों रवि उदै भगै तम त्यों जिन भक्ति से विष भागा है।
बैठ गया उठिकै कुमार मानो निद्रा से जागा है॥
बैठा देख कुँवर को जनता ने जै जै जै कारों से।
गुंजा दिया पाताल गगन सब धन्य-धन्य के नारों से ॥
धन्य धन्य जिनधर्म धन्य जिन पूजा धन्य पुजारी को।
पूजा के प्रसाद से जीवित लाल मिला महतारी को॥
ये आश्चर्यजनक घटना सब शहर देखने आया है।
वाह वाह कहते सबके नयनों में आनन्द छाया है॥
जिनपूजा सम पुण्य न दूजा ये जिन आगम में वरना।
तातें 'मक्खन' कोटि काम तजि श्रीजिन की पूजा करना॥

विशेष – *इसमें सच्चे भावों से की गई जिनपूजा करने का और जहर के उतरने का निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध दर्शाया गया है। पुत्र के पूर्व पुण्य का उदय, आयुकर्म का उदय तो इसमें अन्तरंग कारण था और सेठ द्वारा सच्चे भावों से की गई जिनेन्द्र भगवान की पूजा बहिरंग कारण। अतः बाहर में दिखाई देने वाले कारण को ही कार्य का श्रेय दिया गया है, तथा उसे ही करने की प्रेरणा दी गई है ; परन्तु इसमें भी हमें अन्तरंग कारण नहीं भूलना चाहिए। यहाँ मात्र सच्चे भावों से की गई पूजन का महत्व बताकर वैसी ही पूजन करने की प्रेरणा दी गई है। लौकिक कार्यों की कामना से की गई पूजन कभी हितकर नहीं हो सकती ; क्योंकि लौकिक कामना का भाव स्वयं ही पापभाव है। अतः हमें पूजन करते समय एकमात्र वीतरागी देव-शास्त्र-गुरु के प्रति बहुमान पूर्वक उनके गुणानुवाद का भाव मुख्य रखना चाहिए।*

परिशिष्ट-१

विविध विषय

रावण की सेना का प्रमाण

गज रथ आठ कोड़ि परमाणं लाख चौहत्तर असी हजार।
घोटक छब्बीस कोड़ि लाख चौबीस सहस चालीस विचार॥
सुभट कोड़ि चालीस तीन हैं लाख चौहत्तर करौ सुमार।
तथा कुटुम परिवार सर्वमिलि दशमुख को कोई न राखनहार॥

रामचन्द्र की सेना का प्रमाण

चारि कोड़ि सेंतीस लाख चालीस सहस गज रथ उर आन।
तेरै कोड़ि लाख द्वादश युत बीस सहस घोटक धरि ध्यान॥
कोड़ि इक्कीस लाख सत्तासी श्रेष्ठ सुभट योधा जु महान।
ऐसे रामचन्द्र दशरथ सुत ते भी काल ग्रसित भये आन॥

बलाबल

द्वादश अज बल एकजु गर्दभ दश गर्दभ बल इक हय जान।
द्वादश हय बल एकजु महिषा पांच सै महिषा गज एक आन॥
पांच सै गज बल एक केशरी पंच शतक अष्टापद जान।
अष्टापद दश लाख कोड़ि बलभद्र कोड़ि बल इक नारान॥
नव्वै नारायण बल चक्री कोटि नरेन्द्र जु बल इक देव।
कोटि देव बल एक इन्द्र में अनन्त इन्द्र तीर्थंकर देव॥
तीर्थंकर की चट्टी उंगली ताके बल को नाहिं अछेव।
तो शरीर बल कौन कहै कवि थके कथित गणधर बहु देव॥

जगत में महापुरुष कौन है

दुखित भुखित परदेशी दुर्बल अन्ध पंगु कोढ़ी भयवान।
राज चोर अहि सिंह सतायो अरु दुरभिक्ष दुष्ट बलवान॥
तथा मित्र अरु भ्रातृ गुरूजन साधर्मी जन स्थिती करान।
बहन बुआ बेटी रु भानजी विधवा भोजन वस्त्र मकान॥
जे पहले परतिष्ठित थे नर फेरि दरिद्री होय गये।
सर्व वस्तु तिनकी जो बिक गई स्त्री सुत हैं छूट गये॥
ओछा काम करा नहिं जावे फिरें विदेश हि रंक भये।
तिन सज्जन की करै जु सेवा तेही जग जन पूज्य भये॥

दुर्जन लक्षण

बिन कारण संसार में, बैर करै अघ पुष्ट।
सुख माने पर हानि में, सो है दुर्जन दुष्ट॥
दुर्जन पर सुख में दुखी, पर दुख देखि सिहाय।
व्याह देखि बंझा झुरै, घाड़ि देखि विहसाय॥
दुर्जन और सलेषमा, ए समान जग माहिं।
ज्यों-ज्यों मधुरौ दीजिये, त्यों अति कोप करांहि॥
जो खल कुवचन नहिं कहै, तदपि बैर तिय संग।
तजै कदाचित कांचली, विष नहिं तजत भुजंग॥
सब की औषधि जगत में, खल की औषधि नाहिं।
चूर होंहि सब औषधी, पड़ि कै खल के माहिं॥
दुरजन जन की प्रीति सों, कहो कैसे सुख होय।
विषधर भेंटि पयूष की, प्रापति सुनी न कोय॥
दुरजन जन कौ मुख धनुष, कुवचन पैने बान।
क्षमा खड़ग सौं जीतिए, ये सद्गुरु का ज्ञान॥

दुरजन को मुख बांबई, बोलत वचन भुजंग।
जाकी औषधि मौन है, विष नहिं व्यापै अंग॥
दुरजन जन सौं प्रीति जे, करि हैं नर अविचार।
ते मंत्री मरुभूति सम, दुख पावैं निरधार॥

दुर्जन सर्प के समान है (छप्पै)

करि गुण अमृतपान दोष विष विषम समप्पै।
बंक चालि नहिं तजै जुगल जिह्वा मुख थप्पे॥
तकै निरंतर छिद्र उदै परदीप न रुच्चै।
बिन कारन दुख करै बैर विष कबहुँ न मुच्चै॥
वर मौन मन्त्र सौं होय बस संगत की ये हान है।
बहु मिलत बान यातें सही दुर्जन सांप समान है॥

दुर्जन भैंसे के समान है (छप्पै)

आग्रह और अभिमान सींग दोनों अभिमानी।
कलह कीच सौं प्रीति मलिन मूरति ठहरानी॥
क्षमा खांड नहिं रुचै कलुष खलता खल भावै।
सजन सभा सर विमल समल करि ताहि दिखावै॥
यह विधि अनेक लक्षण मिलै गुण दोषी जिस वान है।
परवाद पूंछि सों परखिये दुरजन महिष समान है॥

दुर्जन से सर्प अच्छा है

दुर्जनस्य च सर्पस्य, वरं सर्पों न दुर्जनः।
सर्पो दंशति कालेतु, दुर्जनस्तु पदे-पदे॥

दुर्जन से सर्प अच्छा है, क्योंकि सर्प तो किसी एक समय ही डसता है पर दुर्जन समय समय काटता है।

दुर्जनः परिहर्तव्यो, विद्ययालंकृतोपिसन्।
मणिना भूष्यते सर्पः, किमसौ न भयंकरः॥

दुर्जन यदि विद्वान भी हो तो भी उसे छोड़ देना चाहिये, क्यों कि सांप यदि मणि से भूषित हो तो भी भयंकर होता है।

सकटं पः।हस्तेन, दस हस्तेन वाजिनम्।
हस्ती हस्त सहस्रेण, देश त्यागेन दुर्जनः॥

यदि गाड़ी आती हो तो पांच हाथ से बच जाना चाहिये। घोड़े से दस हाथ से। हाथी से हजार हाथ से तथा दुर्जन जहाँ रहता हो उस देश को ही छोड़ देना चाहिये।

तक्षकस्य विषं दंते, मक्षिकायाः विषं शिरे।
वृश्चिकस्य विषं पुच्छे, सर्वाङ्गे दुर्जनाः विषम्॥

सांप के दांत में विष रहता है, मक्खी के शिर में विष है, बीछू की पूंछ में विष है, पर दुर्जन का सर्वांग विष ही विष से भरा है।

दुर्जनं सज्जनं कर्तुं, सुपायो नहिं भूतले।
अपानं शतधा धौतं, न श्रेष्ठमिन्द्रियं भवेत्॥

दुर्जन को सज्जन बनाने का दुनियां में कोई उपाय नहीं है अपान(गुदा) को सौ बार भी धोओ तो भी शुद्ध नहीं हो सकती।

न दुर्जनः साधुदशामुपैति, बहु प्रकारैरपि शिक्ष्यमाणः।
आमूल शिक्तः पयसा घृतेन, न निम्ब वृक्षा मधुरत्वमेति॥

अनेक प्रकार की शिक्षा देने पर भी दुर्जन सज्जन नहीं होता। निम्ब के वृक्ष को चाहे दूध घी से भी सींचो, पर मीठा नहीं होता कड़वा ही रहता है।

दुर्जनं प्रथमं वन्दे , सज्जनं तदनन्तरम्।
मुखं प्रक्षालनात्पूर्वं , गुदा प्रक्षालनम् वरम् ।।

एक कवि ने यहाँ तक कह दिया कि पहले दुर्जन को नमस्कार करना चाहिये, सज्जन को बाद में, क्योंकि कि मुँह धोने से पहले गुदा का धोना अच्छा है।

आलसी का प्रश्न

वीतराग देव सो तौ बसत विदेह क्षेत्र ,
सिद्ध जो कहावै शिवलोक मध्य लहिये।
आचारज उवझाय दोऊ में न कोऊ यहाँ ,
साधु जो कहावैं सो तो दक्षिण में कहिये ।।
श्रावक पुनीत सोऊ विद्यमान यहाँ नाहिं ,
सम्यक के संत कोऊ जीव सरदहिये।
शास्त्र की सरधा तामें बुद्धि अति तुच्छ रही ,
पंचम समें में कहौ कैसे पंथ गहिये ।।

गुरु द्वारा उत्तर

तू ही वीतराग देव राग द्वेष छांड़ि देखि ,
तू ही तो कहावै सिद्ध अष्टकर्म नाशतैं।
तू ही तौ आचरज है आचरै जो पंचाचार,
तू ही उवझाय जिनवानी के प्रकाश तैं ।।
पर सौं ममत्व त्यागि तू ही है सुरिषिराज ,
श्रावक पुनीत व्रत एकादश भाष तैं।
सम्यक स्वभाव तेरा शास्त्र पुनि तेरी वानी ,
तू ही भैया ज्ञानी निज रूप के निवास तैं ।।

कौन-कौन किस-किस पर क्रोध करता है ?

सज्जन को देखि करि दुर्जन करत कोप ,
ब्रह्मचारी देखि कामी कोप करै मन में।
निशि के जगैया को देख चोर कोप करै ,
धर्मवंत देखि पापी जलि उठै तन में ।।
सूरिमा को देखि करि कायर करत कोप ,
कवियों को देखि मूढ हांसी करै जन में।
धन के धनी को देखि निर्धन करत कोप ,
बिना ही निमित्त खाक डारैं तीनों पन में ।।
कुँजर को देखि करि रोष करे भूखो स्वान ,
रोष करै निर्धन विलोकि धनवन्त को।
रैन के जगैया को विलोकि चोर रोष करै ,
मियामति रोष करै सुनत सिद्धान्त को ।।
हंस को विलोकि जैसे काग मन रोष करै ,
अभिमानी रोष करै देखत महंत को।
सुकवि को देखि ज्यों कुकवि मन रोष करै ,
त्यों ही दुरजन रोष करै देखि सन्त को ।।

पुरुषार्थी- काल करै सो आज करि , आज करै सो अब्ब।
औसर बीता जात है , फेरि करेगा कब्ब ।।

आलसी- काम आज का कल करलेंगे , कल का करलैं परसों।
जल्दी जल्दी क्या करते हो ,अभी पड़ी हैं बरसों ।।

एकेन्द्री के दुःख वर्णन

थिति निगोद में नादि कालसूं जन्म मरण अष्टादश स्वास।
भूमि नीर अरु अग्नि पवन तरू इन में दुःख सहे बहु त्रास॥
खोदन फोरन रगरन सोखन ज्वलन पछारन पशु नर प्यास।
जल विष तेल क्षीर घृत दावन वृक्ष बीज ना भीत विनास॥
चूटन काटन भक्षणं, छेदन रांधन ज्वाल।
तेल क्षार पीसन किरन, सुख न दुःख विशाल॥

विकलत्रय के दुःख

कफ मल मूत्ररू कूड़ा जल घृत तेल दुग्ध मधु अग्नि समीर।
उपल ठीकरा माटी दीपक आंधी मेह गुड़ा गुड़ सीर॥
भूख प्यास करि शीत उष्ण धरि पादत्राण पछारन चीर।
चलन हलन पीसन घस खोदन रांधन कटन सही बहु पीर॥
सींग पूछ खुर घोड़ा बैल रु गाड़ी बैल तलै दबि जाँहि।
फल तरु फूल अन्न मेवा कर तथा चलित रस मोरी माहिं॥
सर्प विषमरा चिड़िया काक रु जल थल नभ के जीव चुगांहि।
इत्यादिक विकलत्रय के दुख जीव दया बिन बहुविधि पांहि॥

जलचर जीवों के दुःख

धीवर जाल यंत्र कांटा कर, जीव सहित काटैं झुलसान।
धूप सुखावन राधन छोंकन, भय अरु भूख करें संघान॥

वनचर जीवों के दुःख

वनचर जीव छुधा तिरषाकर शीत उष्ण वरषा ओलान।
तड़ित शिकारी पारधीन करि सिंह व्याघ्र चीता अरू स्वान॥
मारन चीरन काटन रांधन मरता मरम स्थान विदार।
पग अरू जीभ पूँछ काटन कर तथा दंत तन चर्म उपार॥

यन्त्र जाल फांसीरु पींजरा रस्सी साँकल विष हरतार।
रोग शोग भय करके अहनिश छिपे रहें गिरि कोटर खार॥

नभचर जीवों के दुःख

नभचर जीव बाज शिकरा कर बागल घूघू स्वान मार्जार।
शीत उष्ण बरषा अरु बिजली ओला चोट बैठि तरू डार॥
तथा शिकारी पारधीन कर मारन चीरन पंख उखार।
तथा अचार तेल में तलकर वा धर थैली बेचि बजार॥

घरेलू पशु के दुःख

पशू घरेलू हाथी घोड़ा ऊंट बलध भैंसा खर जान।
बधिया डाहर नाक फोड़ कर कड़ी जंजीरन रज्जूवान॥
शीत उष्ण वरषा अरु बिजली ओला चोट सहैं बंधान।
लादन जोतन आदि चामठी लाठी चाबुक मरमस्थान॥
पीठरू कंधा नाक गलन कर जरा रोग मंजिल कर दूर।
नून लोह अरु पत्थर चूना ईट बोझकर तन चकचूर॥
हाथ पांव टूटन कर वन में गिरिखांडा दल-दल जल पूर।
वग मच्छर माखी अरु बीछू काटैं स्वान अरु पंखी कूर॥

मनुष्यगति के दुःख

मनुष्य गति में गर्भ दुःख अरु जनमत मात पिता मरि जाहिं।
पर उच्छिष्ट क्षुधा तिरषाकर दासपना अपमान लहाहिं॥
नौन तेल घृत धातु मृत्तिका उपल काष्ठ त्रय स्थान धराहिं।
भूख प्यास करि बीस कोस की दीर्घ भार धरि मजल कराहिं॥
पेट भरन के कारन उद्यम वस्तर धोवै छापै रंग।
सीमै तूमै बुनै रु पीसै दलै रु खाटैं बुनें पलंग॥

गर्भाशय में जिय आवै नारक सम अति दुख पावै।
साढ़े त्रय कोडि सुई को करि तप्त छेदै तन कोई को॥
जो दुःख होय तन माहीं तातें अठ गुण दुख पाही।
मल मूत्र स्थान विच रहता मुख अधो दुःख बहु सहता॥
घासरु लकड़ी कण्डा भांडै बेचैं ढेर लगाय उतंग।
चीरै फाड़ैं काष्ठ बुहारै धोवै मल मूतर जन अंग॥
स्वर्णकार कुंभार लुहाररू भड़भूजा भट्टी चलवान।
चोरी छल अरु झूठन चुगली घर घर मांगत रुदन करान॥
रस्ता लूटन करि संग्रामरु विषभवनी अरु उदधि महान।
चित्रकार वादित्र नृत्य गीत नीच राज्य सेवाजु करान॥
केई पुरुष अत्यन्त दुखी हैं रस नीरस अध उदर भरान।
तथा एक अरु दोय तीन दिन अन्तर भोजन मिलै अखान॥
भाई दुष्ट महा बैरी अरु दुष्ट पड़ोसी हों बलवान।
लोभी दुष्टी क्रोधी कृपणी औगुनग्राही स्वामि मिलान॥
दुष्ट कृतघ्नी चोर अधर्मी सेवक आज्ञाकारी नाहिं।
राजा मंत्री कोतवाल अन्याय मार्गी दुःख लहाहिं॥
अन्धी लूली लंगड़ी पुत्री और कुरूपी अति दुखदाय।
तथा गुणवती पुत्री का गुणवान जमाई मरन कराय॥
मात पिता के मरने का भय धन होते निर्धनता थाय।
माथे ऋण अरु सुत हो व्यसनी तथा गुणी सुत मरन कराय॥
मित्र होय करि छिद्र प्रकाशै अरु कलंक अपयश लगि जाय।
देश निकाला राज दंड अरु पंच दंड हो मरन लहाय॥
इत्यादिक ये मनुष गती के बहु दुख पाये धरि पर्याय।
तातें भवि समता उर धारो कर्मनाश हो सुक्ख लहाय॥

और भी

रोजगार बनै नाहिं धन तौ न घर माहिं,
खाने की फिकरि बहु नारि चाहै गहना।
लैनेवाले फिरि जांय मिलत उधारौ नाहिं,
साझी मिलै चोर धन आवै नाहिं लहना॥
एक पुत्र ज्वारी भयो घर में कुपूत ठयो,
दूजौ पुत्र मरि गयो ताको दुख सहना।
पुत्री वर जोग भई व्याही सो तौ जम लई,
ए दुख सुख मानै तासों कहा कहना॥

देवगति के दुःख

देवन के भी मानसिक दुख अन्य महर्द्धि देखि दुख होय।
मित्र वल्लभा वियोग को दुख इष्ट वियोग शोक दुख जोय॥
वाहन अरु अपमान होन का आज्ञा अरु ऐश्वर्य न होय।
एक स्थान पर खड़े होन का इन्द्र सभा परवेश न जोय॥
अवधि विक्रिया रिद्धि विभव को देखै हीन अधिक उर मांहि।
मुरझावै षटमास प्रथम ही माला ताकर रुदन कराहिं॥
देवलोक तें चवन होनकर थावर पशु मनुष गति मांहि।
इत्यादिक दुख देवगति के कहूँ नहीं सुख चहुँ गति मांहि॥

नरकगति के दुःख

मारन ताड़न छेदन भेदन औटावन रांधन झुलसान।
पेलन चीरन काटन पीसन गोदन भक्षन भार भुनान॥
पाक पकावन देह विदारन नेत्र उपाड़न डाह लगान।
कूटन और पछारन बांधन लटकावन और फांसी तान॥

नर्क शस्त्र

मुद्गर मूसल भाला फर्सी चक्र करौंत छुरी तलवार।
बाण वसूला और कुल्हाड़ी गदा दंड और बरछी धार॥
कोल्हू घानी घट्टी पट्टी लोह पूतली ऊखल भार।
जल अग्नी समीर गिर शाल्मलि सिंह स्वान पक्षी भयकार॥

नर्क में महासंकट भोगता हुआ नारकी पिछली बातों को यादकर किस प्रकार विलाप और पश्चाताप करता है।

(दोहा)

मैं मानुष पर्याय धरि, धन योवन मद लीन।
अधम काज ऐसे किये, नर्कवास जिन दीन॥
सरसौं सम सुख हेत तव भलो लंपटी जान।
ताही को अब फल लग्यो, यह दुख मेरु समान॥
मद्य मांस मधु उदंबर, और अभक्ष अनेक।
अक्षन बस भक्षण किये, अटक न मानी एक॥
जल थल नभ वासी विविध, विलवासी बहु जीव।
मैं पापी अपराध बिन, मारे दीन अतीव॥
नगर दाह कीनौ निठुर, गाम जलाये जान।
अटवी में दीनी अगनि, हिंसाकरि सुख मान॥
अपनी इन्द्री लोभ करि, बोल्यो मृषामलीन।
कलपित ग्रन्थ बनाय कै, बहकाये बहु दीन॥
दाव घात परपंच सौं, पर लक्ष्मी हरलीन।
छल बल हठ बल दरव बल, पर वनिता बस कीन॥
अन छानौ पानी पियो, निशि भुंजौ आहार।
देव दरव खायौ सही, रौद्र ध्यान उरधार॥

कीनी सेव कुदेव की, कुगुरुन को गुरु मान।
तिन ही के उपदेश सों, पशु होमे बिन ज्ञान॥
दियो न उत्तम दान मैं, लियो न संजम भार।
पियो मूढ़ मिथ्यात मद, कियो न तप जग सार॥
पूरव संतन यों कही, करनी चालै लार।
सो आंखन देखी अबै, तब न करी निरधार॥
जिस कुटंब के हेत मैं, कीनौ बहुविधि पाप।
ते सब साथी बीछुरे, पर्यौ नरक में आप॥
मेरी लक्ष्मी खान को, सीरी हुते अनेक।
अब इस विपति विलाप में, कोई न दीखै एक॥
सारस सरवर तजि गये, सूखे नीर निराट।
फल बिन वृक्ष विलोकि कै, पक्षी लागै बाट॥
पंच करन पोषण अरथ, अनरथ किये अपार।
ते रिपु ज्यों न्यारे भये, मोहि नर्क में डार॥
ऐसी चिंता करि तहाँ, बढ़ै वेदना एम।
घीव तेल के जोगतें, पावक प्रजलै जेम॥

दुर्जन की आदत

सरल को शठ कहै वक्ता को धीट कहै,
विनय करैं तासों कहै धन के आधीन है।
क्षमी को निबल कहै दमी को अदत्ती कहै,
मधुर वचन बोलै तासौं कहै दीन है॥
धरमी को दम्भी निसप्रेही को गुमानी कहै,
तृष्णा घटावै तासौं कहै भाग्यहीन है।
जहाँ साधु गुण देखे तिनको लगावै दोष ,
ऐसौ कछु दुर्जन को हिरदौ मलीन है॥

प्राचीन कवियों के उपदेशी कवित्त

जे नर जैन पुरानन के रस स्वाद बिना दिन वादि गवावैं।
सींगरु पूँछि नहीं जिन कै पर हैं पशु ही नर नाम धरावैं ॥
जो वह घास गिरास करैं तब तौ मन में कछु और हि आवै।
भाग्य बड़े तिरयंचन के तिस कारणतें तृण याहि न भावै ॥1॥

वे दिन क्यों न चितारहु चेतन मात कि कोखि में आय बसे हो।
ऊरध पांव टगें निशिवासर रंच उसासन को तरसे हो॥
आयु संयोग बचे कहुँ जीवित लोगन की तब दृष्टि लसे हो।
आज भये तुम यौवन के रस भूलि गये कितर्ते निकसे हो ॥2॥

मात पिता परलोक गये बिछुरो वर नारि सदा सुधि आवै।
तैसे हि पूत सपूत गयो पुनि पास परौस कि कौन चलावै॥
यों जग जात चलौ निरखै अपनौ मरनौ मन में न दृढ़ावै।
राज विथा जग माहिं बड़ी यह है कोई वैद्य इलाज बतावे ॥3॥

पाप कलाप किये धन कारन सो परभौ पथ पैंड़ न चालै।
जा तन को निशिवासर पोषत सो न कछू उपकार संभालै॥
मात पिता सुत बांधव वनिता अन्त दिना कोई प्रीति न पालै।
एक करी करणी संग होय धरा धरणी कोई साथ न चालै ॥4॥

हे मन मूढ़ कहा तुम भूले हो हंस बिसारि लगे पर छाया।
यामें सरूप नहीं कछु तेरौ जु व्याधि कि पोट बनाई है काया॥
सम्यक् रूप सदा गुण तेरो तु और बनी सबही भ्रम माया।
देखत रूप अनूप विराजत सिद्ध समान जिनेन्द्र बताया ॥5॥

चेतत क्यों नहिं चेतन हारै

केवल रूप विराजत चेतन, ताहि विलोकि अरे मतवारे।
काल अनादि व्यतीत भयो, अजहूं तोहि चेतन होत कहा रे॥
भूलि गयो गति को फिरि वौ, अवतौ दिन चारि भये ठकुरारे।
लागि कहा रह्यौ अक्षनि के संग, चेतत क्यों नहिं चेतन हारे॥

बालक है तब बालकसी बुधि, जोवन काम हुताशन जारे।
वृद्ध भयो तन अङ्ग रहे थकि, आये हैं श्वेत गये सब कारे॥
पांव पसारि पर्‌यौ धरती महि, रोवै रटै दुख होत महा रे।
बीतियो बात गयो सब भूलि तू, चेतत क्यों नहिं चेतनहारे॥

बालपनै नित बालन के संग, खेले हो ताकी अनेक कथा रे।
जोवन आप रमौ रमनी रस, सोउ तौ बात व्यतीत यथारे॥
वृद्ध भयो तन कंपत डोलत, लार गिरै मुख होत व्यथारे।
देखि शरीर के लक्षण भैया तू, चेतत क्यों नहिं चेतन हारे॥

तूहि जु आय बसौ जननी उर, तू ही रमौ नित बालक तारे।
जीवनता जु भई पुनि तोहि कौ, ताहि के जोर अनेक तैं मारे॥
वृद्ध भयो तुहि अंग रहे थकि, बोलत बोल कहै तुतरारे।
देखि शरीर के लक्षण भैया तू, चेतत क्यों नहिं चेतन हारे॥

और सौं जाय लग्यो हित मानिकै, वाहि के संग सुज्ञान विडारे।
काल अनादि बसौ जिनके ढिंग, जानौ न लक्षण ये अरि सारे॥
भूलि गयो निज रूप अनूपम, मोह महामद के मतवारे।
तेरो हू दाब वनौ अबकै अब, चेतत क्यों नहिं चेतन हारे॥

काहे को कूर तू भूर सहै दुख, पंचन के पर पंच भखाये।
ये अपने अपने रस कौं नित, पोषत है तोहि लोभ लगाये॥
तू कछू भेद न बूझत रंचक, तोहि दगा करि देत बंधाये।
है अब कै यह दाव भलौ तोहि, जीति ले पंच जिनन्द बताये॥

इक बात कहूँ शिवनायक की, तुम लायक ठौर कहाँ अटके।
यह कौन विचक्षण रीति गही, बिन देखहि अक्षन सों भटके॥
अजहूँ गुन मानौ तौ सीख कहूँ, तुम खोलत क्यों न पटा घटके।
चिनमूरति आप विराजत हैं, तिन सूरत देखि सुधा गटके॥

न्हाये तै मीन, पियै पय बालक, रासभ अङ्ग भभूति लगाये।
राम कहे शुक, ध्यान गहै बक, भेड़ तिरै पुनि मूड मुड़ाये॥
वस्त्र बिना पशु, व्योम चलै खग, व्याल तिरैं नित पौन के खाये।
एतौ सवै जड़ रीति विचक्षण, मोक्ष नहीं बिन तत्त्व के पाये॥

एक दिन आत्मा ने शरीर से पूछा

सोलै शृंगार विलेपन भूषण सों निशि बासर तोहि संभारे।
पुष्ट करी बहु भोजन पान दे धर्म रु कर्म सवैहि बिसारे॥
सेय मिथ्यात्व अन्याय किये बहु तो तन कारन जीव संघारे।
भक्ष गिनौ न अभक्ष गिनौ अब तौ चल काय तू संग हमारे॥

शरीर का उत्तर

ये अनहोनी कहौ कहा चेतन भाँग खाई कि भये मतवारे।
संग चली न चलूं कबहू लखि ये तो स्वभाव अनादि हमारे॥
इन्द्र नरेन्द्र फणीन्द्रन के नहिं संग चली तुम कौन विचारे।
कोटि उपाय करौ क्यों न चेतन मैं न चलूं अब संग तुम्हारे॥

एक जैनी और चिदानंद की बातें

(दोहा)

पूछत है जन जैन कोउ, चिदानंद सौं बात।
आये हो किस देश से, कहौ कहाँ को जात॥

चिदानन्द का उत्तर

देश तो प्रसिद्ध है निगोद नाम सिन्धु महा,
तीन से तेतालू राजू जाकौ परमान है।
तहाँ के बसैया हम चेतन के बसवारे,
बसत अनादि काल बीतौ बिन ज्ञान है॥
तहाँ तैं निकसि कोऊ कर्म शुभ योग पाय,
आये हम यहां सुने पुरुष प्रधान हैं।
ताके पांव परिवे को महाव्रत धरिवे को,
शिष्य संग करिवे को चलि वो निदान है॥

ज्ञान और चारित्र की बातें

एक दिन एक ठौर मिलै ज्ञान चारित सौं,
पूछी निज बात कहाँ रावरौ निवास है।
बोले ज्ञान सत्यरूप चिदानंद नाम भूप,
असंख्यात परदेश ताके पुर वास है॥
एक एक देश में अनन्त गुण ग्राम लसें,
तहां के बसैया हम चरणों के दास हैं।
तू हू चलि मेरे संग दोहू मिलि लूटैं सुख,
मेरे आंख तेरे पांउ बनौ योग खास है॥

घट में घटनायक गायो

बहुत कालतें फिरत फिरत जिय अब यह उत्तम नरभव पायो।
समझि समझि मूरख नर प्रानी तेरे कर चिंतामणि आयो॥
घट की आँखें खोलि अब जौहरी रतन जीव जिनदेव बतायो।
तिल में तेल वास फूलन में त्यों घट में घटनायक गायो॥

सलाह

तू नित चाहत भोग नये नर पूरव पुन्य बिना किम पै है।
कर्म संयोग मिलै कहू जोग गहै तब रोग न भोगि सकै है॥
जो दिन चारकौ ब्योंत बनौ कहुँ तौ परि दुर्गति में पछितै है।
याहि तें यार सलाह यही कि गई कर जाह निवाहन ह्वै है॥

क्या बुद्धि हरी है

मात पिता रज वीरज सौं उपजी सब सात कुधाात भरी है।
माखिन के पर माफिक बाहर चाम के बेठन बेड़ि धरी है॥
नातर आय लगें अब ही बक वायस जीव न चैन घरी है।
देह दशा यह दीखत भ्रात घिनात नहीं किन बुद्धि हरी है॥

ज्ञायक

जो अपनी दुति आप विराजत है परधान पदारथ नामी।
चेतन अङ्ग सदा निकलंक महासुख सागर कौ बिसरामी॥
जीव अजीव जिते जग में तिन कौ गुन ज्ञायक अन्तरयामी।
सो शिवरूप बसै शिव थानक ताहि विलोकि नमै शिवगामी॥

जिनबानी

जोग धरैं रहैं जोग सों भिन्न अनंत गुनातम केवलज्ञानी।
तासु हृदै द्रहसों निकसी सरिता सम ह्वै श्रुति सिंधु समानी॥

यातें अनंत नयातम लक्षण सत्य सरूप सिद्धान्त बखानी।
बुद्धि लखै, न लखै दुरबुद्धि सदा जगमांहि जगे जिनबानी॥

सिद्ध समान

जबतैं अपनौ जिय आप लखो तबतैं जु मिटी दुविधा मन की।
अति शीतलचित्त भयो तबही सब छांड़ि दई ममता तन की॥
चिंतामणि जब प्रगटो घर में फिर कौन जु चाह करै धन की।
जो आप में सिद्ध में फेर न मानै सो क्यों परवाह करै जन की॥

अनित्यता

चाहत है धन होय किसी विधि तौ सब काज सरै जियराजी।
गेह चिनाय करूँ गहना कछु व्याहि सुता सुत बाँटिये भाजी॥
चिंतत यों दिन जात चले जम आन अचानक देत दगाजी।
खेलत खेल खिलारि गये रहि जाय रुपी सतरंज की बाजी॥

अशरणता

तेज तुरंग सुरंग भले रथ मत्त मतंग उतंग खरे ही।
दास खवास अबास अटा धन जोर करोरन कोष भरे ही॥
ऐसे भये तो कहा भयौ हे नर छोड़ि चले उठि अन्त छरे ही।
धाम खड़े रहे काम परे रहे दाम डरे रहे ठाम धरे ही॥

बाहर नहीं अन्तर में है

केई उदास रहें प्रभू कारन केई कहें उठि जाहिं कहीं के।
केई प्रणाम करें गढ़ि मूरति केई पहाड़ चढ़ैं चढ़ि छींके॥
केई कहें असमान के ऊपर केई कहें प्रभू हेठि जमी के।
मेरो धनी नहिं दूरि दिशंतर मोहि में है मोहि सूझत नीके॥

हम ऐसे हैं

जगवासी जीवनि सौं गुरु उपदेश करें,
तुम्हें यहाँ सोवत अनंत काल बीते हैं।
जागो ह्वै सचेत चित्त समता समेत सुनौ,
केवलि वचन जामै अक्ष रस जीते हैं ॥
आओ मेरे निकट बताऊँ मैं तुम्हारे गुण,
परम रस सौं भरे करम सौं रीते हैं।
ऐसे बैन कहें गुरु तऊ तौ न धरै उर,
मित्र के से पुत्र किधौं चित्र कैसे चीते हैं॥

अपने को भूल गया

काया चित्र सारी में करम परयंक भारी,
माया की संभारी सेज चादर कलपना।
सैन करै चेतन अचेतनता नींद लिये,
मोह की मरोर यह लोचन की ढपना॥
उदय बल जोर यह श्वास को शबद घोर,
विषै सुख कारज की दौर यह सुपना।
ऐसी मूढ़ दशा में मगन भयो तिहुं काल,
धावै भ्रम जाल में न पावै रूप अपना॥

जो सोता है सो खोता है

सोवत अनादि काल बीतौ तोहि चिदानंद,
अजहुं संभारि क्यों न मोह नींद खोइ कै।
सोयो तू निगोद माहिं ज्ञान नैन मूँदि आप,
सोयो पंच थावर में शक्ति को समोइ कै॥

विकलत्रै देह पाय तहाँ हू तू सोय रह्यौ,
सोयो नव प्राण धरि वाही रूप होइ कैं।
पंचेन्द्री विषै माहिं मग्न होय सोइ रह्यौ,
खोयो तैं अनंतो काल याही भांति सोइ कै॥

यहां चोरन को डर है

ढई सी सराय काय पंथी जीव बसो आय,
रत्नत्रय निधि जापै मोक्ष जाकौ घर है।
मिथ्या निशिकारी महामोह अन्धकार भारी,
कामादिक तस्कर समूहन को थर है॥
सोवैगौ अचेत सोई खोवै निज संपदा को,
तहां गुरु पाहरू पुकारें दयाकर है।
गाफिल न हूजै भ्रात ऐसी है अंधेरी राति,
जागि रे बटोई यहां चोरन को डर है॥

मिथ्या मत रैन माहिं ज्ञान भानु उदै नाहिं,
आतम अनादि पंथी भूलौ मोख घर है।
नरभौ सराय काय भटकत बसौ आय,
काम क्रोध आदि जहाँ तस्कर कौ थर है॥
सोवेगौ अचेत सोई खोवैगे धरम धन,
तहाँ गुरु पाहरू पुकारें दयाकर है॥
गाफिल न हूजै भ्रात ऐसी है अंधेरी रात,
जागि रे बटोई यहाँ चोरन को डर है॥

अब तो जाग जा

नर भौ सराय सार चारों गति चारों द्वार,
आतम पथिक तहाँ सोवत अघोरी है।
तीनोंपन जामें आयु निकसि वितीत भई,
अजों परमाद मद निद्रा नाहिं मोरी है।।
तौ भी उपकारी गुरु पाहरू पुकार करें,
हाहा रे निदारू नर कैसी नींद जोरी है।
उठै क्यों न मोही दूरि देश का बटोई,
अब जागि पंथ लागि भाई रही रैन थोरी है।।

लोभी

जीवन कितेक तापै सामा तू इतेक करै,
लक्ष कोड़ि जोड़ि जोड़ि नैक न अघातु है।
चाहत है धरा कौ धन सब भरूँ गेह,
यों न जानै जनम सिरानौ मोहि जातु है।।
काल सो क्रूर जहाँ निश दिन घेरा करै,
ताके बीच शशा जीव कोलौं ठहरातु है।
देखतु है नैननि सौं जग सब चलो जात,
तौ हू मूढ़ चेते नाहिं लोभै ललचातु है।।

मूर्खता

जीवन कितेक तामें कहा बीति बाकी रह्यौ,
तापे अन्ध कौन कौन करै हेर-फेर ही।
आपको चतुर जानै औरन कौ मूढ़ मानै,
साँझ हौन आई है विचारत सवेर ही।।

चाम ही के चक्षुन सौं चितवै सकल चाल,
उर सौं न चौंधे करि राखो है अंधेर ही।
आ है वान तान कै अचानक ही ऐसो यम,
देखिये मसान थान हाड़न को ढेर ही।।

डेढ़ दिना में तेरा नम्बर

कहाँ हैं वे वीतराग जीते जिन राग-द्वेष,
कहाँ है वे चक्रवर्ति छहौ खंड के धनी।
कहाँ है वे वासुदेव युद्ध के करैया वीर,
कहाँ है वे कामदेव काम कीसी जे अनी।।
कहाँ है वे राजा राम रावण से जीते जिन,
कहाँ हैं वे शालिभद्र लक्षि जाकैं थी धनी।
ऐसे तो कितेक जीव ह्वै गये अनंती वेर,
डेढ़ दिना तेरी वारी काहे को करै मनी।।

समय की चाल

सुनरे सयाने नर कहा करै घर घर,
तेरौ जु शरीर घर घरी ज्यों तरतु है।
छिन छिन छीजे आयु जल जैसे घरी जाय,
ताहू कौ इलाज कछु उर हू धरतु है।।
आदि जे सहे हैं तेतो यादि कछु नाहिं तोहि,
आगै कहौ कहा गति काहे उछरतु है।
घरी एक देखौ ख्याल घरी की कहा है चाल,
घरी घरी घरियाल शोर यों करतु है।।

पिंजरा खाली रह जायेगा

पाय नर देह कहो कीनौ कहा काज तुम,
रामा रामा धन धन करत विहातु है।
कैक दिन कैक छिन रहि है शरीर यह,
जाके संग ऐसे काज करत बिहातु है॥
जानतु है यह घर मरिवे को नाहिं डर,
देखि भ्रम भूलि मूढ़ फूलि मुसिकातु है।
चेत रे अचेत पुनि चेतिवे कौ नाहिं ठौर,
आजकाल पींजरेसौं पंछी उड़ि जातु है॥

आपनौ करै अकाज

सेर आध नाज काज आपनौ करै अकाज,
खोवत समाज सब राजन तैं अधिकै।
इन्द्र हो तौ चन्द्र हो तौ नर नाग इन्द्र हो तौ,
करतौ तपस्या जो पैं बैठि साधु मधि कै॥
इन्द्रिनि कौ दम होतौ यम औ नियम होतौ,
जम को न गम होतौ ज्ञान होतौ अधिकै॥
लोकालोक भास होतौ अष्ट कर्म नाश होतौ,
मोक्ष में सुवास होतौ चल तो जु सधि कै॥

आओ आज तुम ज्ञान के महल में

कहां कहां कौन संग लागे हि फिरत लाल,
आओ क्यों न आज तुम ज्ञान के महल में।
नैकहू विलोकि देखो अतंर सुदृष्टि सेती,
कैसी कैसी नीकी नारि ठाड़ी है टहल में॥

एकन तैं एक बनी सुन्दर सरूप घनी,
उपमा न जाय गनी बाम की चहल में।
ऐसी विधि पाय कहूं भूलि और काज कीजै,
एतौ कह्यौ मानि लीजै वीनती सहल में॥

चेतना के नाथ को अचेतना क्यों भई है

दासिन के संग खेल खेलत अनादि बीते,
अजहूँ लौं बहैं बुद्धि कौन चतुराई है।
कैसी है कुरूपकारी निशि जैसी अन्धियारी,
औगुण गहनहारी कहा जानि लई है॥
इनही की संगति से संकट अनेक सहे,
जानि बूझि भूलि जाउ कैसी सुधि गई है।
आवत परेखो हंस मोहि इन बातन को,
चेतना के नाथ को अचेतना क्यों भई है॥

तीन लोक नाथ ह्वै कै दीन से फिरतु हौ

कौन तुम कहाँ आये कौन बोराये तुमहिं,
आके रस रसे कछु सुधि हू धरतु हौ।
कौन हैं ये कर्म जिन्हें एक मेक मानि रहे,
अज हूँ न लगे हाथ भांवर भरतु हौ॥
वे दिन चितारौ जहाँ बीते हैं अनादि काल,
कैसे कैसे संकट सहे हू विसरतु हौ।
तुम तौ सयाने पै सयान यह कौन कीनौ,
तीन लोक नाथ ह्वै कै दीन से फिरतु हौ॥

सब जग देखियतु रागरस रंग में

कोऊ तौ करें किलोल भामिनि सौं रीझि रीझि,
वाही सौं सनेह करे काम राग अंग में।
कोऊ तो लहैं अनंद लक्ष कोड़ि जोड़ि जोड़ि ,
लक्ष लक्ष मान करें लक्ष की तरंग में॥
कोऊ महा सूरवीर कोटि के गुमान करैं,
यो समान दूसरो न देखो कोऊ जंग में।
कहैं कहा भैया कछु कहिवे कि बात नाहिं,
सब जग देखियतु रागरस रंग में॥

तेरे पास क्या है ?

छयानवे हजार नारि छिनक में दीनी छारि,
अरे मन ता निहारि काहे तू डरतु है।
छहौं खंड की विभूति छांडत न बेर कीनी,
चमू चतुरंगनिसौं नेह न धरतु है ॥
नौ निधान आदि जे चौदह रतन छांडि,
देह सेती नेह तोड़ि बन विचरतु है।
ऐसी विभौ त्यागत विलंब जिन कीनौं नाहिं,
तेरे कहौ केती निधि सोच क्यों करतु हैं॥

नरक की साही है बड़ाई डेढ़ दिन की

जासूं तू कहत यह संपदा हमारी सो तौ,
साधुन ने डारी ऐसे जैसे नाक सिनकी।
जासूँ तू कहत हम पुण्य योग पाई सो तौ,
नरक की साही है बड़ाई डेढ़ दिन की॥

घेरा मांहि परौ तू विचारे सुख अक्षनि को,
मक्षनि के चूंटत मिठाई जैसे भिन की।
एते पर होय न उदासी जग वासी जीव,
जग में असाता है न साता एक छिन की॥

चेत चेत रे चेत

नारिन संग कई सागरन केलिकरी,
राग रंग नाटक सौं नेक न अघाये हो।
नर जन्म पाय तुम आयु पल्य तीन पाई,
तहाँ हूं विषै किलोल नाना भाँति गाये हो॥
जहाँ गये तहाँ तुम विषै सौं विनोद कीनौ,
ताही ते नरक में अनेक दुख पाये हौ।
अज हूं संभारि विषै डारि क्यों न चिदानंद,
जाके संग दुख होय ताही सों लुभाये हो॥

संग तेरै कौन चलै देखि तू विचार हिये

जहाँ तोहि चलिवो है साथ तू तहाँ के ढूंड़ि,
यहाँ कहाँ लोगन सों रह्यो तू लुभाय रे।
संग तेरै कौन चलै देखि तू विचार हिये,
पुत्र कै कलत्र धन धान्य यह काय रे॥
जाके काज पाप करि भरत है पिंड निज,
ह्वै है को सहाय तेरे नर्क जब जायरे।
तहां तो अकेलौ तू ही पाप पुन्य साथी दोय,
तामें भलो होय सोई कीजै हंसराय रे॥

कौड़ी के अनंत भाग आपन बिकाय चुके

कई कई बेर भये भू पर प्रचंड भूप,
बड़े बड़े भूपन के देश छीन लीने हैं।
कई कई बेर भये सुर भौन वासी देव,
कई कई बेर तौ निवास नर्क कीने हैं ॥
कई कई बेर भये कीट मल मूत मांहि,
ऐसी गति नीच बीच दुख मानि भीने हैं।
कौड़ी के अनंत भाग आपन बिकाय चुके,
गर्व कहा करे मूढ़ देख दृग दीने हैं॥

बाद में अवसर नहीं मिलेगा

वर्ष सौ पचास मांहि ऐते सब मर जांहि,
जेते तेरी दृष्टि विषै दीसत है बावरे।
इनमें को कोऊ नाहिं बचिवे कौ काल पाहिं,
राजा रंक क्षत्री और शाह उमराव रे ॥
जम ही की जमा माहिं घरी पल चले जाहिं,
घटै तेरी आयु कछु नाहिं को उपावरे।
आज काल तोहू को समेटि काल गाल माहिं,
चाविजै है चेति देखि पीछै नाहिं दावरे॥

आतम प्रकाश बिन पीछै पछितैहै रे

नर देह पाये कहा पंडित कहाये कहा,
तीरथ के न्हाये कहा तिर तौ न जैहै रे।
लच्छि के कमाये कहा अच्छ के अघाये कहा,
छत्र के धराये कहा छीनता न ऐहै रे॥

केश के मुड़ाये कहा भेष के बनाये कहा,
जोवन के आये कहा जरा हू न खैहै रे।
भ्रम को विलास कहा दुर्जन में बास कहा,
आतम प्रकाश बिन पीछै पछितैहै रे॥

नर भौ अमोल हीरा

भानु उदै जागे देह कारज करन लगे,
खान पान अवागच्छ दिन यों बितायो रे।
सांझ भये सोये भ्रात प्रातउ फिरि वे ही बात,
यों ही सुख मानि भरि जनम गंवायो रे॥
एक दिन मरना है पर भौ में परना है,
कर्म भोग भरना है सो न मन लायो रे।
विष को सौ कीरा नित विष हीमें रमो वीरा,
नर भौ अमोल हीरा वादि डहकायो रे॥

यज्ञ में हिंसा निषेध

(कवित्त मनहर)

कहै पशु दीन सुन यज्ञ के करैया मोहि,
होमत हुताशन में कौनसी बड़ाई है।
स्वर्ग सुख मैं न चहौं ''देहु मुझे'' यौं न कहौं,
घास खाय रहौं मेरे यही मन भाई है॥
जो तू यह जानत है वेद यों बखानत है,
जग्य जलौ जीव पावै स्वर्ग सुखदाई है।
डारैं क्यों न वीर यामें अपने कुटुम्ब ही कौं,
मोहि जिन जारै ''जगदीश की दुहाई है''॥

बोवेंगे बबूल तेतौ आम कैसे खावेंगे

हिंसा के करैया जो पै जैहैं सुरलोक माहिं,
नर्क माहिं कहो बुधि कौन जीव जावेंगे।
लेके हाथ शस्त्र जेही छेदत पराये प्राण,
ते नहीं पिशाच कहौ और को कहावेंगे॥
ऐसे दुष्ट पापी जे संतापी पर जीवन के,
तेतौ सुख संपति से कैसे कै अघावेंगे।
अहो ज्ञानवंत संत तंत के विचारि देखो ,
बोवेंगे बबूल तेतौ आम कैसे खावेंगे॥

सीख बिना नर सीखत है ....

(मत्तगयन्द सवैया)

राग उदै जग अन्ध भयौ सहजैं सब लोगन लाज गवांई।
सीख बिना नर सीखत है विषयादिक सेवन की सुघराई॥
तापर और रचें रस काव्य कहा कहिये तिनकी निठुराई।
अन्ध असूझन की अंखियान में झोंकत हैं रज रामदुहाई॥

परस्त्री निषेध

(छप्पै)

कुगति बहन गुनगहन-दहन दावानलसी है ,
सुजस चंद्र घनघटा देहकृशकरन छई है।
धन सर सोखन धूप धरम दिन सांझ समानी ,
विपति भुजंग निवास बांबई वेद बखानी॥
इहिविधि अनेक औगुन भरी प्रान हरन फांसी प्रबल।
मत करहु मित्र यह जान जिय परबनितासौं प्रीतिपल॥

(मत्तगयन्द सवैया)

दिवि दीपक लोय बनी बनिता जड़ जीव पतंग जहां परते।
दुख पावत प्रान गवाँवत हैं बरजे न रहैं हठसौं जरते॥
इहि भांति विचक्षन अक्षन के वश होय अनीति नहीं करते।
पर ती लखि जे धरती निरखें धनिहैं धनिहैं धनिहैं नर ते॥

दिढ़शील शिरोमन कारज में जग में जस आरज तेई लहै।
तिनके जुग लोचन बारिज हैं इहि भांति अचारज आप कहैं॥
परकामिनिकौ मुखचंद चितै मुँद जांहि सदा यह टेव गहैं।
धनि जीवन है तिन जीवन कों धनिमाय उनैं उरमाँय चहैं॥

जे परनारि निहारि निलज्ज हँसै विगसैं बुद्धिहीन बड़ेरे।
जूंठन की जिमि पातर पेखि खुशी उर कूकर होत घनेरे॥
है जिनकी यह टेब वहै तिनकी इस भौ अपकीरति ह्वै रे।
ह्वै परलोक विषैं दृढ़दंड करै शतखंड सुखाचल केरे॥

शराब निषेध (सवैया 23)

कृमि राम कुबास सरायंद है शुचिता सब छीवतजात सही।
जिस पान किये सुधि जात हिये जननी जन जानत नार वही॥
मदिरा सम और निषिद्ध कहा यह जान भले कुल में न गही।
धिक है उनकौं वह जीभ जले जिन मूढ़न के मतलीन कही॥

(कब्बाली)

गिलासों में जो डूबे फिर न उभरे जिन्दगानी में।
हजारों बह गए इन बोतलों के बन्द पानी में॥
न कर बरबाद अपनी जिन्दगी बोतल के दीवाने।
वो काटेगा बुढ़ापे में जो बोता है जवानी में॥

ये दारू का प्याला मौत का कड़वा पियाला है।
मिला है जहर शर्बत में छुपी है आग पानी में॥
जलाकर खून दारू जिस्म को बरबाद कर देगा।
चलेगी क्या घड़ी दम ही न होगा जब कमानी में॥

शरीर की अवस्था

(दोहा)

सुनि प्रानी सद्गुरु कहैं, देह खेह की खानि।
धरै सहज दुख दोष कों, करै मोक्ष की हानि॥

(सवैय्या 23)

रेत की सी गढ़ी किधों मढ़ी है मशान की सी,
अन्दर अंधेरी-जैसी कन्दरा है सैल की।
ऊपर की चमक दमक पट भूषन की,
धोखे लागे भली जैसी कली है कनैल की॥
आँगन की ओंडी महा भोंडी मोह की कनौडी,
माया की सूरति है मूरति है मैल की।
ऐसी देह याही के सनेह याकी संगति सों,
ह्वै रही हमारी गति कोल्हू के से बैल की॥

ठौर ठौर रक्त के कुण्ड केसनि के झुण्ड,
हाड़निसों भरी जैसे थरी है चुरैल की।
थोरे से धकाके लगे ऐसे फट जाय मानो,
कागद की पुरी किधौं चादर है चैल की॥
सूचे भ्रम वानि ठानि मूढ़नि सों पहिचानि,
करै सुख हानि अरु खानि वदफैल की।

ऐसी देह याहि के सनेह याकी संगति सों,
ह्वै रही हमारी गति कोल्हू के से बैल की॥

पाटी बंधे लोचन सों संकुचे दबोचनि सों,
कोचनि की सोच सों न वेदे खेद तन को।
धाइबो ही धंधा अरु कंधा माहिं लग्यो जोत,
बार बार आर सहै कायर ह्वै मन को॥
भूख सहे प्यास सहे दुर्जन को त्रास सहे,
थिरता न गहे न उसास लहे छिन को।
पराधीन घूमै जैसे कौल्हू को कमेरौ बैल,
तैसोहि स्वभाव भैया जगवासी जन को॥

जगत में डोलैं जगवासी नर रूप धरें,
प्रेत कैसे दीप किधों रेत कैसे थूहे हैं।
दीसे पट भूषण आडम्बर सों नीके फिरैं,
फीके छिन मांझ सांझ अम्बर ज्यौं सूहे हैं॥
मोह की अनल दगे माया की मनी सों पगे,
डाभ की अनीसों लगे ओस कैसे फूहे हैं।
धरम की बूझि नाहिं उरझे भरम माहिं,
नाचि नाचि मर जाहिं मरी कैसे चूहे हैं॥

कैसे कैसे वली भूप भू पर विख्यात भये,
बैरी कुल कांपै नेक भौंहि के विकार सौं।
लंघे गिरि सायर दिवायर से दिपैं जिन,
कायर किये हैं भट कोटिन हुँकार सों॥

ऐसे महामानी मौत आये हू न हार मानी,
क्यों ही उतरे न कभी मानके पहार सों।
देव सों न हारे पुनि दाने सों न हारे और,
काहू सौं न हारे एक हारे होनहार सों॥

लोहमई कोट कई कोटन की ओट करो,
कांगुरेन तोप रोपि राखो पट भेरकैं।
चारों ओर चेरा गण चौकस ह्वै चौकी देंहि,
चाउ रंग चमू चहूँ ओर रहौ घेरिकै॥
तहाँ एक भौंहिरा बनाय बीच बैठो पुनि,
बोलौ मति कोऊ न बुलावो नाम टेरिकै।
ऐसैं परपंच-पांति रचो क्यों न भांति-भांति,
तो हू तो न छोरैं जम देख्यो हम हेरिकैं॥

मीठा बोलो

काहे को बोलत बोल बुरे नर नाहक क्यों जस धर्म गमावै।
कोमल वैन चवै किन एन लगै कछु है न सबै मन भावै॥
तालु छिदै रसना न भिदै न घटै कछु अङ्क दरिद्र न आवै।
जीभ कहैं जिय हानि नहीं तुझ जी सब जीवन को सुख पावै॥

ज्ञाता-दृष्टा बनकर रहना

केई भये शाह केई पातशाह पुहुमि पै,
केई भये मीर केई बड़े ही फकीर हैं।
केई भये राव केई रंक भये विललात,
केई भये कायर औ केई भये धीर हैं॥

केई भये इन्द्र केई चन्द्र छबिवंत लसैं,
केई भये पौन और केई भये नीर हैं।
एक चिदानंद केई स्वांग में कलौल करैं,
धन्य तेई जीव जे भये तमाशगीर हैं॥

जो पै चारों वेद पढ़े रचि पचि रीझि रीझि,
पंडित की कला में प्रवीण तू कहायो है।
धरम व्यौहार ग्रन्थ ताहू के अनेक भेद,
ताके पढ़े निपुण प्रसिद्ध तोहि गायो है॥
आत्मा के तत्त्व कौ न भेद कहूँ रंच पायो,
तोलौं तोहि ग्रंथन में ऐसे कहि बतायो है।
जैसे रस व्यंजन में करछी फिरै सदीव,
मूढ़ता स्वभाव सौं न स्वाद कछु पायो है॥

(छप्पै)

दस दिन विषय विनोद फेर बहु विपति परम्पर,
अशुचि गेह यह देह नेह जानत न आप पर।
मित्र बंधु-सनबंध और परिजन जे अंगी,
अरे अन्ध सब धंध जान स्वारथ के संगी॥
पर हित अकाज अपनौ न कर, मूढ़राज अब समझ उर।
तजि लोकलाज निज काज कर, आज दाव है कहत गुर॥

गुरु शिक्षा (दोहा)

जैन वचन अंजन बटी, आंजैं सुगुरु प्रवीन।
राग तिमर तौहु ना मिटै, बड़ो रोग लख लीन॥

परिशिष्ट-२

उपयोगी चरचा

चौबीस तीर्थंकरों के नाम

ऋषभ अजित संभव अभिनन्दन सुमति पद्म सुपार्श्व जिनराय।
चन्द पहुप शीतल श्रेयान्स नमि वासुपूज्य पूजत सुरराय॥
विमल अनंत धर्म यश उज्वल शांति कुन्थु अरि मल्लिमनाय।
मुनिसुव्रत नमि नेमि पार्श्वप्रभु वर्द्धमान पद पुष्प चढ़ाय॥

चौबीस तीर्थंकरों के चिन्ह

गऊपुत्र गजराज बाज वानर मन मोहै,
कोक कमल साँथिया सोम सफरीपति सोहै।
सुरतरु गैंडा महिष कोल पुनि सेही जानौं,
वज्र हिरन अज मीन कलश कच्छप उर आनौं॥
शतपत्र शंक अहिराज हरि ऋषभदेव जिन आदि ले।
श्री वर्द्धमानलौं जानिये चिन्ह चारु चौबीस ये॥

चौबीस तीर्थंकरों के रंग

पुष्पदंत प्रभु चंद चंद सम सेत बिराजै,
पारसनाथ सुपार्श्व हरित पन्नामय छाजै।
वासुपूज्य अरु पद्म रक्त माणिक द्युति सोहै,
मुनिसुव्रत अरु नेमि श्याम सुन्दर मन मोहै॥
बाकी सोलै कंचन वरन, यह व्यवहार शरीर थुति।
निहचै अरूप चेतन विमल, दरशन ज्ञान चरित्र जुत॥

अधोलोक में अकृत्रिम जिनमंदिरों की संख्या

चौसठ लाख असुर जिनमंदिर, लाख चौरासी नाग कुमार।
हेम कुमार के लाख बहत्तर, छहविधि के लख छिहत्तर धार॥
लाख छयानवै वात कुमर हैं, पाताल लोक भवन दस सार।
सात कोड़ि अर लाख बहत्तर, जिन चैत्याले वन्दौं सुखकार॥

मध्यलोक में अकृत्रिम चैत्यालयों की संख्या

पंचमेरु के असी असी वक्षार विराजे,
गज दंतन पर बीस तीस कुल पर्वत छाजे।
सौ सत्तर वैताड्य धार कुरु भूमि दसोत्तर,
इक्ष्वाकार पहाड़ चार-चार मानुषोत्तर पर॥
नंदीश्वर बावन रुचक में चार-चार कुण्डल शिखर।
इम मध्य लोक में चार सै अट्ठावन वन्दौं विघ्न हर॥

अट्ठाईस नक्षत्रों के अकृत्रिम चैत्यालयों की संख्या

षट् पांच तीन एक षट् तीन षट् चार,
दो दो पांच एक एक चौषठ तीन लहे।
नव चौ चौ तीन तीन पांच एक सौ ग्यारह,
दोय दोय बत्तीस पांच तारे तीन लहे॥
कृतिकादि ठाईसके सब दोसें इकताल,
एक एक के ग्यारा ग्यारहसै सरदहे।
दोय लाख सरसठ हजार नव सै व्यानु,
हैं चैताले प्रतिबिंब जिनवानी में कहे॥

ऊर्ध्व लोक में अकृत्रिम चैत्यालयों की संख्या

प्रथम बत्तीस अट्ठाबीस तीजे वारै,
चौथे आठ पांचै छटै चौलाख विख्यात है।
सातें आठे में पच्चास नौ में दसमें चालीस,
ग्यारै बारै छै हजार चार शत सात है॥
अधो एक शत ग्यारे मध्य एक शत सात,
ऊरध इक्यानुं नव नऊतरे जात है।
पंच पंचोत्तरे चौरासी लाख सत्यानु हजार,
तेईस चैताल्ये वन्दौं अघघात है॥

तीन लोक में अकृत्रिम चैत्यालयों की संख्या

सात किरोड़ बहत्तर लाख, पताल विषै जिनमंदिर जानौ।
मध्यहि लोक में चार से ठावन व्यंतर जोतिष के अधिकानौ॥
लाख चोरासि हजार सत्तानवै तेईस ऊरध लोक बखानौ।
एकेक में प्रतिमा शत आठ, नमौ तिहुंजोग त्रिकाल शहानो॥

तीन लोक के अकृत्रिम चैत्यालय व प्रतिमाएँ

वन्दौं आठ किरोड़ लाख छप्पन सत्यानौ।
सहस चार से असी एक जिनमंदिर जानौ।
नवसै पच्चीस कोड़ि लाख त्रेपन सत्ताइस।
वन्दौं प्रतिमा सबै सहस नोसै अड़तालीस॥
व्यंतर जोतिष अगनित सकल, चैत्याल्ये प्रतिमा नमौ।
आनंदकार दुखहार सब, फेर नहीं भव वन भ्रमौ॥

ज्योतिष मंडल की ऊंचाई

सात शतक अरु नवै तास पर तारे राजे,
ता ऊपर दस भानु असी पर चंद्र विराजे।
चार नखत बुध चार तीन पर शुक्र बतायो,
तीन गुरू कुज तीन तीन पर शनि ठहरायो॥
इम नौसे योजन भूमिते, जोतिष चक्र बखानिये।
इकसौ दस जोजन गगन में, फैलि रह्यो परमानिये॥

अढाई द्वीप में ज्योतिष मंडल की संख्या

एकचंद इकसूर्य अठासी ग्रह, अठाइस नखत बखान।
छय्यासठ सहस नव से पिचहत्तर, कोड़ाकोड़ी तारे जान॥
इकसौ बत्तीस चंद यही विधि, ढाई द्वीप मध्य परवान।
सब चैत्याले प्रतिमा मंडित, वन्दन करौं जोर जुग पान॥

सर्व द्वीप समुद्र के चंद्रमाओं की गिनती

जंबू द्वीप दोय लवणांवुधि में चार चंद,
धातुखंड बारै कालोदधि बीयालीस हैं।
पुष्कर के भाग दोय इधर बहत्तरि हैं,
उधै बारै सै चौसठ भाखे जगदीश हैं॥
पुष्कर जलधिसार दो शत ग्यारै हजार,
आगै आगै चौगने बखाने जगदीश हैं।
जेते लाख ते ते बले दूने दूने आधेकेतें,
सब असंख्य चैत्याले वन्दत मुनीश हैं॥

मानुषोत्तर पर्वत वलयाकार (कंकणाकार) है

मानुषोत्तर पर्वत चौराई, भू पर एक सहस बाईस।
मध्य सात से तेईस जोजन, ऊपर चार शतक चौबीस॥
सतरहसै इकबीस उचाई, जड़ा चारसै पावरु तीस।
ऋजुविमान किहि भांति मिल्यो है, जोजन लाख कह्यो जगदीश॥

देव-देवी संभोग व देवलोक प्रवीचार कथन

दोय सुरग में काय भोग है, दोय सुरग में फरस निहार।
चार सुरग में रूप निहारे, चार सुरग में शब्द विचार॥
चार सुरग में मन कौ विकलप, आगे सहज शील निरधार।
अहमिन्द्र सब महा सुखी हैं, वन्दौं सिद्ध सुखी अविकार॥

सात नरक , सोलह स्वर्ग में गमनागमन

साततैं निकसि पशु छट्टे नर व्रत नाहिं,
पांचै महाव्रत चौथे सेति मोक्ष सार है।
तीजे दूजे पहिले ते आय जिनराय होय,
भवनत्रक स्वर्ग दोय एकेन्द्रिधार है।
द्वादशम स्वर्ग तांई पंचेंद्रि पशु होय,
ऊपर को आयो एक नर कौ औतार है।
दक्षिणेंद्र सौधर्म राणि लोकपाल लौकांतिक,
सर्वार्थसिद्ध मोक्ष लहै नमस्कार है॥

केवलज्ञान होने पर...

नर्क पशु गति आनुपूरवि प्रकृति चार,
पंचेन्द्रि बिना चार आताप उदोत है।

साधारण सूक्षम थावर प्रकृति तेरै,
नर आयु बिना तीन मिल सोल होत है॥
सैंतालीस घातिया की त्रेसठ प्रकृति सर्व,
नाश भये तीर्थंकर ज्ञानमई जोत है।
देवनि के देव अरिहंत हैं परम पूज्य,
तिन ही को बिंब पूजि होइ ऊंच गोत है॥

आयुकर्म का नव बंध त्रिभाग में

आयुअंश पैसठिसौ-इकसठ; इक्कीससौ-सत्तासी[1] जान।
सात-शतक-उनतीस[2] दोयसै-तेतालीस[3] इक्यासी[4] मान।
सत्ताईस[5] और नौ[6] तीन[7] एक[8] आठवाँ भेद बखान।
नौमे अन्तकाल में बांधे अगली गति की आयु निदान॥

कर्म के बंध उदय सत्ता का कथन

बंध एक सौ बीस उदय सौ बाइस आवै,
सत्ता सौ अड़ताल पाप की सौ कहिलावै।
पुन्य प्रकृति अड़सठि अठत्तर जीव विपाकी,
बासठ देह विपाकि खेत भव चवचव बाकी॥
इकईस सर्वघाती प्रकृति, देशघाति छब्बीस हैं।
बाकी अघातिया एकशत, भिन्न सिद्ध शिव ईस हैं॥

सत्तावन जीव समास

भू[1] जल[2] पावक[3] वायु[4] नित्य[5] इतर[6]-साधारण,
सूक्षम-बादर[×2] करत होत द्वादश उच्चारण।

सप्रतिष्ठ[13]-अप्रतिष्ठ[14] मिलि चौदै परवानों,
परज-अपरज-अलब्ध[×3] गुणत ब्यालीस बखानों॥
गुण वे-ते-चौ इन्द्री त्रिविध, सर्व एक-पंचास[51] भन।
मनरहित-सहित तिहुँ-भेद[×3] सौं[57], सत्तावन धरि दया मन॥

अट्ठाणवें जीव समास

इक्कावन थान जान थावर विकलत्रय के,
गर्भज दोय तीन सन्मूर्छन गाये हैं।
पांचौं सैनि औ असैनि जल थल नभचर,
भोग भूमि भूचर खेचर दो दो पाये हैं॥
दो दो नारकी हैं देव नवविध मानुष हैं,
चव भोगभू कुभोगभू म्लेछ बताये हैं।
दोय दोय दोय तीन आरज में राजत हैं,
अट्ठाणवे दया करैं साधु ते कहाये हैं॥

सोलह कषाय के दृष्टांत और फल

पाहन की रेख थंभ पाथर को बाँस बीडो,
क्रमरंग सम चारों नर्कमाहिं ले धरैं।
हल लीक हाड़ थंभ मेष सींग गाड़ी मल,
क्रोध मान माया लोभ तिरयंच में परैं॥
रथ लीक काठथंभ गोमूतर देह मैल,
से कषाय भरे जीव मानुष में औतरैं।
जल रेख वेतदंड खुरपा हलदरंग,
द्यानत ये चारों भाव स्वर्ग रिद्धि को करैं॥

छह काल, संहनन व चौदह गुणस्थान

प्रथम द्वितीय अरू तृतिय काल में पहला जानौ,
चौथे षट संहनन पंच में तीन बखानौ।
करम भूमि तिय तीन एक छट्टे के माहीं,
विकल चतुष्कै एक एक इंद्री के नाहीं॥
षट कहै सात गुणस्थान लग, तीन हि ग्यारेलौ लहे।
इक क्षपक श्रेणी गुण तेरहै, धन जिनवाणी में कहे॥

छह संहनन वाले जीव मरकर कहां-कहां जाते हैं

छहौं तीसरे जाइ पांच चौथे पंचम लग,
चारि संहनन छट्टे इक साथ नरक मग।
छहौं आठमें स्वर्ग पंच बारम सुर जावे,
चारि सोल में लोक तीन नौ ग्रीवक पावे॥
दो संहनन नउ नउत्तरे एक पंच पंचोत्तरे,
इक चरम शरीरी शिव लहै वन्दौं जैन वचन खरे॥

एकेन्द्री आदि सैनी पंचेन्द्री पर्यंत जीवों के उत्कृष्ट विषय की सीमा

फरस च्यारसै धनुष असैनी लों दुगना गिनि,
रसना चौसठ धनुष घ्राणसौ ते इन्द्री भनि।
चखु जोजन उनतीस शतक चौवन परवानो,
कान आठसै धनुष सुनै सैनी सो जानो॥
नवयोजन घ्राण रसना फरस, कान दुवादश योजना।
चखु सैंतालीस सहस दुसै, त्रेसठि देखे जिन भना॥

एकेन्द्री से पंचेन्द्री तक के जीवों की उत्कृष्ट आयु

मृदु भूमी बारै खरभू बाईस जल सात,
बात तीन तरु काय की दस हजार है।
पंखी की बहत्तर सहस बियालीस सांप,
आगि दिन तीन बेइंद्री बरष बार है।।
तेइंद्री दिन उनचास चौइंद्री छह मास,
सीरी सर्प पूरवांग नव आयु धार है।
मच्छकोटि पूरव मनुष्य पशू तीन पल्ल,
सागर तेतीस देव नारकी की सार है।।

चौरासी लाख जाति के प्रत्येक जीव का वर्णन

सात लाख पृथ्वीकाय सात लाख अपकाय,
सात लाख तेजकाय सात लाख बात है।
सात लाख नित्य और इतर सात साधारण,
दसलाख प्रत्येक एक इंद्री गात है।।
वे ते चव इंद्री दो दो मानुष चौदह लाख,
नर्क स्वर्ग पशु चार चार लाख जात है।
चवरासी लाख जाति मो ऊपरि क्षमा करो,
हमहू ने क्षमा करि वैर किये घात है।।

आठ कर्म के ८ दृष्टांत

देव पै पर्‌यो है पट रूप को न ज्ञान होय,
जैसे दरवान भूप देखनौ निवारे है।
शहद लपेटी असि धारा सुख दुखकारा,
मदिरा ज्यों जीवनि कौं मोहनी विथारे है।।

काठ में दियो है पांव करे थिति को सुभाव,
चित्रकार नाना नाम चित्र को संभारे है।
चक्री ऊंच-नीच करै भूप दियो मना करै,
येहि आठ कर्म हरै सोहि हमें तारै है।।

आठ कर्म के नाश होने पर अष्ट गुण प्रगट

ज्ञानावरनी के गये जानिये जु है सु सब,
दर्शनावरन के गये तें सब देखिये।
वेदनी करम के गये ते निराबाध गुन,
मोहनी के गये शुद्ध चारित बिसेखिये।।
आयु कर्म गये अवगाहन अटल होइ,
नामकर्म गये ते अमूरतीक पेखिये।
अगुरु अलघु रूप होत गोत कर्म गये,
अंतराय गये ते अनंत बल लेखिये।।

गुणस्थानों में प्रकृतियों का क्षय

(छप्पय)

सात प्रकृति को घात ठीक सातम गुण ठानै,
तीन आयु नहिं होय नवम छत्तीसौ भाने।
दशमें लोभ विदार बारमें सोल मिटावै,
चौदह में के अंत बहत्तरि तेर खिपावे।।
इम तोरि कर्म अठताल सौ, मुक्ति माहिं सुख करत हैं।
प्रभु मोहि बुलावो आप ढिंग, हमहू पायनि परत हैं।।

सभी प्रकृतियों के क्षय होने का विवरण

चौथे किय सातौं प्रकृति छीन, चौ अनंतानु मिथ्यात तीन।
सातैं किय तीनों आयु नाश, फिर नवे अंस नवमें विलास।
तिन माहिं प्रकृति छत्तीस चूर, इस भांति कियो तुम ज्ञान पूर।
पहिले मुँह सोलह कहँ प्रजाल, निद्रा निद्रा प्रचला प्रचाल।
हनि थानगृद्धिकों सकल कुब्ब, नर तिर्यगति गत्यानुपुब्ब।
इक वे ते चौ इन्द्रीय जात, थावर आतम उद्योत घात।
सूच्छम साधारन एम चूर, पुनि दुतिय अंश वसु कर्‌यो दूर।
चौ प्रत्याप्रत्याख्यान चार, तीजे सु नपुंसक वेद टार।
चौथे तिय वेद विनाश कीन, पांचै हास्यादिक छहों छीन।
नरवेद छटें छय नियत धीर, सातयें संज्वलन क्रोध चीर।
आठवें संज्वलन मान भान, नवमें माया संज्वलन हान।
इमि घात नवें दशमें पधार, संज्वलन लोभ तितहू बिदार।
पुनि द्वादश के द्वय अंश माहिं, सोरह चकचूर कियो जिनाहिं।
निद्रा प्रचला इक भागमाहिं, दुति अंश चतुर्दश नाश जाहिं।
ज्ञानावरनी पन दरश चार, अरि अंतराय पांचों प्रहार।
इमि छय त्रेसठ केवल उपाय, धरमोपदेश दीन्हों जिनाय।
नवकेवल लब्धि विराजमान, जय तेरम गुन थितिगुन अमान।
गत चौदह में द्वै भाग तत्र, छय कीन बहत्तर तेरहत्र।
वेदनी असाता को विनाश, औदारि विक्रियाहार नाश।
तैजस्य कारमानों मिलाय, तन पंच पंच बंधन विलाय।
संघात पंच घाते महन्त, त्रय आंगोपांग सहित भनंत।
संठान संहनन छह छहेव, रस वरन पंच वसु फरस भेव।

जुगगंध देवगति सहित पुव्व, पुनि अगुरुलघू उस्वास दुव्व।
पर उपघातक सुविहाय नाम, जुत अशुभगमन प्रत्येक खाम।
अपरज थिर अथिर अशुभ सुभेव, दुरभाग सुसुर दुस्सुर अमेव।
अन आदर और अजस्य कित्त, निरमान नीच गोतौ विचित्त।
ये प्रथम बहत्तर दिय खपाय, फिर दूजे में तेरह नशाय।
पहले साता वेदनी जाय, नर आयु मनुष गति को नशाय।
मानुषगत्यानु सुपूरवीय, पंचेन्द्रिय जात प्रकृति विधीय।
वस वादर परजापति सुभाग, आदिर जुत उत्तम गोतपाग।
जस कीरत तीरथ प्रकृति जुक्त, ए तेरह छय करि भये मुक्त।

सम्यक्त्व का स्वरूप (चौपाई)

सत्य प्रतीति अवस्था जाकी, दिन दिन रीत गहै समता की।
छिन छिन करे सत्यकौ साको, समकित नाम कहावे ताको॥

सम्यक्त्वों के नाम (छप्पय)

सात प्रकृति उपसमहि जासु सो उपसम मंडित,
सात प्रकृति क्षय करन हार छायिकी अखंडित।
सात माहिं कछु खिपहिं कछुक उपसम करि रक्खे,
सो क्षय उपसमवंत मिश्र समकित रस चक्खे॥
षट् प्रकृति उपशमै वा खिपै, अथवा छय उपशम करे।
सातई प्रकृति जाके उदय, सो वेदक समकित धरे॥

सम्यक्त्व के नव भेद

छय उपसम वरते त्रिविधि, वेदक चार प्रकार।
छायक उपसम जुगलयुत, नौधा समकित धार॥

क्षयोपशम सम्यक्त्व के तीन भेद

चारि खिपहि त्रय उपसमहि, पनछय उपसम दोइ।
खै षट उपसम एक यों, छय उपसम त्रिक होइ॥

वेदक सम्यक्त्व के चार भेद

जहां चारि प्रकृति खिपहिं, द्वै उपसम इक वेद।
क्षय उपसम वेदक दशा, तासु प्रथम यह भेद॥1॥
पंच खिपै इक उपसमै, इक वेदे जिहि ठौर।
सो छयउपसम वेद की दशा दुतिय यह और॥2॥
छय षट् वेदे एक जो, छायक वेदक सोइ।
षट् उपसम इक प्रकृति विद, उपसम वेदक होइ॥3॥
छायक उपसम की दशा, पूरव षट् पद माहिं।
कही प्रकट अब पुनरुकति, कारन वरनी नाहिं॥4॥

नव प्रकार के सम्यक्त्व

छय उपसम वेदक खिपक, उपसम समकित चारि।
तीन चार इक इक मिलत, सब नव भेद विचारि॥

श्रावक के २१ गुण

लज्जावन्त दयावन्त प्रसन्न प्रतीतवन्त,
परदोष को ढकैया पर उपकारी है।
सोमदृष्टी गुनग्राही गरिष्ट सबको इष्ट,
शिष्टपक्षी मिष्टवादी दीरघ विचारी है॥
विशेषज्ञ रसज्ञ कृतज्ञ तज्ञ धर्मज्ञ,
न दीन न अभिमानी मध्य विवहारी है।
सहजै विनीत पाप क्रिया सों अतीत ऐसा,
श्रावक पुनीत इकबीस गुनधारी है॥

बाईस अभक्ष्य

ओरा घोरबरा निशि भोजन, बहु बीजा बेंगन सन्धान।
पीपर वर ऊमर कठूँमरी, पाकर फल जो होइ अजान॥
कन्दमूल माटी विष आमिष, मधु माखन अरु मदिरा पान।
फल अतितुच्छ तुषार चलित रस, जिनमत ए बावीस बखान॥

प्रतिमा स्वरूप व भेद

संजम अंश जग्यो जहाँ, भोग अरुचि परिणाम।
उदय प्रतिज्ञा कौ भयौ, प्रतिमा ताको नाम॥

दर्शन प्रतिमा का स्वरूप

आठ मूलगुण संग्रहे, कुविसन क्रिया न कोइ।
दर्शन गुन निर्मल करे, दर्शन प्रतिमा सोइ॥

व्रत प्रतिमा का स्वरूप

पंच अनुव्रत आदरे, तीन गुणव्रत पाल।
शिक्षाव्रत च्यारौ धरे, यह व्रत प्रतिमा चाल॥

सामायिक प्रतिमा का स्वरूप

दर्व भाव विधि संजुगत, हिये प्रतिज्ञा टेक।
तजि ममता समता गहे, अन्तरमुहुरत एक॥
जो अरि मित्र समान विचारै, आरत रौद्र कुध्यान निवारे।
संजम सहित भावना भावे, सो सामायिकवंत कहावे॥

प्रौषध प्रतिमा का स्वरूप

सामायिक की सी दशा, चार पहर लों होइ।
अथवा आठ पहर रहे, पोषह प्रतिमा सोइ॥

सचित्तत्याग प्रतिमा का स्वरूप

जो सचित्त भोजन तजे, पीवे प्रासुक नीर।
सो सचित्तत्यागी पुरुष, पंच प्रतिज्ञा गीर॥

दिवामैथुनत्याग प्रतिमा का स्वरूप

जो दिन ब्रह्मचर्य व्रत पाले, तिथि आये निशिद्यौस संभाले।
गहि नौबाढ़ि करै व्रत रक्षा, सो षट प्रतिमा साधक अक्षा॥

ब्रह्मचर्य प्रतिमा का स्वरूप

जो नव बाढ़ि सहित विधि साधे, निशिदिन ब्रह्मचर्य आराधे।
सो सप्तम प्रतिमाधर ज्ञाता, शील शिरोमणि जगत विख्याता॥

नव बाड़ों के नाम

तिय थल वास प्रेम रुचि निरखत, दे परीछ भाषत मधुबैन।
पूरव भोग केलिरस चिन्तन, गुरु[1] आहार लेत चित चैन॥
करि सुचि तन श्रृङ्गार बनावत, तिय परयंक मध्य सुख सैन।
मनमथ कथा उदरभरि भोजन, ए नव बाड़ि जान मत जैन॥

आरम्भत्याग प्रतिमा का स्वरूप

जो विवेक विधि आदरे, करै न पापारंभ।
सो अष्टम प्रतिमाधनी, कुगति विजै रनथंभ॥

परिग्रहत्याग प्रतिमा का स्वरूप

जो दसधा परिग्रह कौ त्यागी, सुख संतोष सहित वैरागी।
समरस संचित किंचित ग्राही, सो श्रावक नौ प्रतिमावाही॥

1. गरिष्ठ

अनुमतित्याग प्रतिमा का स्वरूप

पर कों पापारंभ कौ, जो न देय उपदेश।
सो दशमी प्रतिमासहित, श्रावक विगत कलेश॥

उद्दिष्टत्याग प्रतिमा का स्वरूप

जो सुछन्द वरतै तजि डेरा, मठ मंडप महिं करे बसेरा।
उचित आहार उदंड बिहारी, सो एकादश प्रतिमाधारी॥

प्रतिमाओं के सम्बन्ध में मुख्य उल्लेख

एकादश प्रतिमा दशा, कही देशव्रत माहिं।
वही अनुक्रम मूलसों, गही सु छूटे नाहिं॥

प्रतिमाओं की अपेक्षा श्रावकों के भेद

षट् प्रतिमा तांई जघन, मध्यम नव परजंत।
उत्तम दशमी ग्यारमी, इति प्रतिमा विरतंत॥

पांचवें गुणस्थान का काल

एक कोटि पूरव गनि लीजै, तामें आठ बरष घट कीजै।
यह उत्कृष्ट काल थिति जाकी, अन्तरमुहूर्त जघन्य दशा की॥

एक पूर्व का प्रमाण

सत्तरि लाख करोड़ मिति, छप्पन सहस करोड़ि।
एते बरष मिलाइ करि, पूरव संख्या जोड़ि॥

अन्तर्मुहूर्त्त का प्रमाण

अन्तरमुहूरत द्वै घड़ी, कछुक घाटि उत्कृष्ट।
एक समे एकावली, अन्तरमुहूर्त कनिष्ट॥

परिशिष्ट-४

सुभाषित मणिमाला

साहित्य सङ्गीत कलाविहीनः,
साक्षात् पशुः पुच्छ विषाणहीनः।
तृणन्न खादन्नपि जीवमान,
स्तद्भागधेयं परमं पशूनाम्॥

जो मनुष्य साहित्य और सङ्गीत शास्त्र की कला से हीन है, वह साक्षात् बिना सींग और पूंछ का पशु है, बस घास नहीं खाता और जीता है – यह पशुओं का भाग्य है।

येषां न विद्या न तपो न दानं,
ज्ञानं न शीलं न गुणो न धर्मः।
ते मर्त्यलोके भुविभार भूता,
मनुष्यरूपेण मृगाश्चरंति॥

जिनके विद्या, तप, दान, ज्ञान, शील, गुण और धर्म नहीं है वे मर्त्युलोक में वृथा पृथ्वी का भार बढ़ाने वाले मनुष्य के रूप में मृगों की तरह पशु हैं।

लाङ्गूलचालनमधश्चरणावपातं,
भूमौनिपत्य वदनोदरदर्शनं च।
श्वापिंडदस्यकुरुतेगजपुंगवस्तु,
धीरं विलोकयतिचाटुशतैश्चभुंक्ते॥

कुत्ते को देखिये अपने टुकड़ा देने वाले के सामने पूंछ हिलाता है, उसके चरणों पर पड़ता है, पृथ्वी पर लोट कर पेट और मुंह दिखलाता है; लेकिन हाथी अपने आहार देने वाले से सौ खुशामद कराकर खाता है।

अम्भोजनीवननिवासविलासमेव,
हंसस्यहन्ति नितरां कुपितो विधाता।
नत्वस्य दुग्ध जल भेदविधै प्रसिद्धां,
वैदग्ध्य कीर्तिमपहर्तुमसौ समर्थः॥

विधाता यदि हंस पर कोप करै तौ उसके कमल वन के आनन्द को नष्ट कर सकता है, लेकिन उसकी चोंच में दूध और जल को जुदा करने की जो चतुराई की प्रसिद्ध कीर्ति है, उसे थोड़े ही नष्ट कर देगा।

***सारांश** – कोई धनी किसी विद्वान पर नाराज होगा तो अपनी पाठशाला की नौकरी छीन लेगा, किन्तु उसके कंठ में सरस्वती व मृदुवाणी द्वारा जो कीर्ति है, उसे थोड़े ही छीन लेगा।*

रे रे चातक सावधान मनसा मित्र क्षणं श्रूयता,
मम्भोदा बहवो हि सन्ति गगने सर्वे तु नैतादृशाः।
केचिद्वृष्टिभिरार्द्रयन्तिवसुधां गर्जन्ति केचिद्वृथा,
यं यं पश्यसि तस्य तस्य पुरतो मा ब्रूहि दीनं वचः॥

अरे! चातक जरा सावधान होकर हमारी बात तो सुन – आकाश में बहुत से मेघ हैं, परन्तु सब एकसे नहीं हैं, कितने ही तो बरस कर पृथ्वी को तृप्त कर देते हैं और कितने ही वृथा गर्जिकरि चले जाते हैं। इसलिये जिसको तुम देखो उसी के आगे तुम दीनता का वचन मत कहो।

***सारांश** – विद्वानो! जरा सुनो, तुम हरेक धनवान को देखकर प्रार्थना मत किया करो कि सेठजी हमारी संस्था को कुछ*

दान दे दो, कुछ तो देने वाले होते हैं और कुछ सूखी नमस्कार वाले होते हैं।

एक सेठ जी तो ऐसा कहा करते थे कि –

लाखों रुपये बोल-बोल कर नाम लिखाया दानी में।
दानवीर की पदवी लेकर दई न कौड़ी कानी मैं॥
बड़ी-बड़ी संस्थाओं का मैं सभापती बन जाता हूँ।
सच्चा हार गले में डलवा कुर्सी पर डट जाता हूँ॥
मंत्री मैनेजर आदिक से स्वागत खूब कराता हूँ।
धन्यवाद देकर सबकों मैं सूखा ही टरकाता हूँ॥
तीर्थ स्थानों पै जाकर हज्जारों ही लिख आता हूँ।
जो घर पै आवै लेने तो उलटी डांट दिखाता हूँ॥

(दोहा)

पप्पा तौ परखा नहीं, दद्दा कीना दूर।
लल्ला सौं लौ लग रही, नन्ना खड़ा हजूर॥

मांगने वाला सबसे हलका

तृणं लघु तृणात्तूलं, तूलादपि च याचकः।
वायुना किंन नीतोऽसौ, मामयं याचयिष्यति॥

तृण सब से हलका होता है, तृण से रूई हलकी होती है, रूई से भी हलका मांगने वाला होता है; फिर भी उसे हवा क्यों नहीं उड़ा ले जाती, इसलिये कि शायद वह मुझसे भी कुछ मांगे।

मृग मीन सज्जनानां तृणजल सन्तोष विहित वृत्तीनाम्।
लुब्धक धीवर पिशुना, निष्कारणवैरिणो जगति॥

हिरण, मछली और सज्जन क्रम से तृण, जल और

संतोष पर अपनी जीविका करते हैं; परन्तु व्याध, धीवर और चुगल लोग बिना प्रयोजन ही इन से बैर रखते हैं।

भवंति नम्रास्तरवः फलोद्‌गमै र्नवांबुभिर्भूमि विलम्बिनो घनाः।
अनुद्धताः सत्पुरुषाः समृद्धिभिः स्वभाव एवैष परोपकारिणाम्॥

फल लगने से जैसे वृक्ष नम्र हो जाते हैं, नवीन जल भरने से जैसे मेघ भूमि पर झुकि आते हैं। वैसे ही सत्पुरुष भी सम्पत्ति पाकर नम्र हो जाते हैं। परोपकारी जीवों का यह स्वभाव ही है।

श्रोत्रं श्रुतेनैव न कुण्डलेन, दानेन पाणिर्नतुकङ्कणेन।
विभाति कायः करुणा पराणां, परोपकारैर्नतुचन्दनेन॥

दयालु पुरुषों के कानों की शोभा शास्त्र सुनने से है, कुण्डल पहनने से नहीं। उनके हाथों की शोभा दान करने से है, कंगन पहनने से नहीं। उनके शरीर की शोभा परोपकार करने से है, चन्दन लगाने से नहीं।

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदिवास्तुवन्तु,
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा,
न्याय्यात्पथः प्रविचलंति पदन्नधीराः॥

चाहे कोई निन्दा करै या स्तुति, लक्ष्मी घर में आवै चाहे चली जाय, प्राण चाहे अभी जांय या कल्पांत में; परन्तु नीति निपुण धीर लोग न्याय के मार्ग से एक पैर भी इधर-उधर नहीं चलते।

किंतेन हेमगिरिणा रजताद्रिणावा,
यत्राश्रिताश्च तरवस्तरवस्त एव।

मन्यामहेमलयमेव यदाऽऽश्रयेण,
कंकोलनिम्बकुटजान्यपि चन्दनानि॥

उस सोने के सुमेरु पर्वत और चाँदी के कैलाश पर्वत से संसार को क्या लाभ? जिसके आश्रित वृक्ष सदा जैसे के तैसे ही बने रहते हैं। हम तो मलयाचल को ही श्रेष्ठ मानते हैं जिसके संसर्ग से कंकोल, नीम और कुटुजादि कड़वे वृक्ष भी चन्दन हो जाते हैं।

सारांश – *उन जगत के देवों को क्या करें? जिनके भक्त सदा दास ही बने रहे। वे उन भक्तों को अपने बराबर नहीं कर पाये इसलिये हम तो उस अरहंत (जिनेन्द्र) देव को ही अच्छा समझते हैं जो कि दुनियां के अधम पापी जीवों को भी अपने बराबर कर लेता है।*

वने रणे शत्रुजलाग्निमध्ये, महाऽर्णवे पर्वत मस्तके वा।
सुप्तं प्रमत्तं विषमस्थितं वा, रक्षन्ति पुण्यानि पुराकृतानि॥

वन में, रण में, शत्रुओं में, जल में, अग्नि में, समुद्र में और पर्वत की चोटी पर असावधान और विषम अवस्था में पुरुष की रक्षा पूर्व जन्म के पुण्य ही करते हैं।

भीमं वनं भवति तस्य पुरं प्रधानं,
सर्वेजनाः सुजनतामुपयान्ति तस्य।
कृत्सना च भूर्भवति सन्निधि रत्नपूर्णा,
यस्यास्ति पूर्व सुकृतं विपुलं नरस्य॥

जिस पुरुष के पूर्व जन्म के पुण्य अधिक होते हैं उसके लिये भयानक वन अच्छा नगर हो जाता है, सब मनुष्य उसके

मित्र हो जाते हैं और समस्त पृथ्वी उसके लिये रत्नों से पूर्ण हो जाती है।

कुग्रामवासः कुलहीन सेवा,
कुभोजनम् क्रोध मुखी च भार्या।
पुत्रश्चमूर्खो विधवा च कन्या,
विनाग्नि ना षट् प्रदहन्तिकायम्॥

खोटे ग्राम में रहना, कुलहीन की सेवा करना, खोटा भोजन मिलना, क्रोध मुखी स्त्री मिलना, मूर्ख पुत्र और विधवा कन्या ये छः बातें बिना अग्नि ही शरीर को जलाती हैं।

कान्ता वियोगः स्वजनापमानो, रणस्यशेषः कुनृपस्य सेवा।
दरिद्रभावो विषभासभाच, विनाग्निमेते प्रदहन्तिकायम्॥

स्त्री का विरह, अपने जनों से अनादर, युद्ध से बचा शत्रु, खोटे राजा की सेवा, दरिद्रता और अविवेकियों की सभा – ये बिना आग ही शरीर को जलाते हैं।

न वेत्ति यो यस्य गुण प्रकर्ष, सतं सदा निन्दति नात्रचित्रम्।
यथाकिराती करिकुम्भलब्धां, मुक्तांपरित्यज्य विभर्ति गुंजाम्॥

जो जिसके गुण की महिमा को नहीं जानता वह उसकी सदा निन्दा करता है, इसमें आश्चर्य नहीं; जैसे भिल्लनी हाथी के मस्तक के मोतियों को छोड़ि गोमची को धारण करती है।

दानार्थिनो मधुकरा यदि कर्णतालैः,
दूरी कृता करिवरेणमदान्ध बुद्धयाः।
तस्यैव गण्ड युग मण्डन हानि रेषाः,
भृङ्गाः पुनर्विकच पद्मवने वसन्ति॥

यदि मदान्ध हाथी ने अपनी मदोद्धता से कर्ण रूपी बीजना से भौरों को उड़ा दिया तो उसने अपने ही उरस्थल की शोभा को खो दिया। भौरे तो किसी और खिले हुए कमल वन में निवास कर लेंगे।

सारांश – *धनवान यदि गुणियों का आदर नहीं करते तो वे अपनी शोभा को खोते हैं। गुणवानों को तो और बहुत सी सज्जनों की सभायें मौजूद हैं।*

व्यालाश्रयापि विफलापि च संकटापि,
वक्रापिपंकिलभवापि दुरासदापि।
गन्धेनबन्धु रसकेतकि सर्वजन्तो,
रेकोगुणः खलुनिहन्ति समस्तदोषान्॥

हे केतकी ! यद्यपि तू सांपों का घर है, फल रहित है, तुझ में कांटे भी हैं, कीचड़ से तेरी उत्पत्ति है और तू कष्टों से मिलती भी है तथापि एक गन्ध गुण से प्राणियों की बन्धु हो रही है अर्थात् सब तुझसे प्रेम करते हैं। इससे यह बात सच है किसी में एक गुण भी हो तो समस्त दोषों को छिपा देता है।

वितर वारिद वारिद वातुरे,
चिरपिपासित चातक पोतके।
प्रचलिते मरुतेक्षण मन्यथा,
क्वचभवान् क्वपयः क्व च चातकः॥

रे बादलो तुम बरस जाओ, बरस जाओ और बहुत काल के प्यासे पपीहों की प्यास को बुझा दो, वरना कोई प्रचण्ड हवा चल गई तो न जाने तुम कहाँ होगे, तुम्हारा पानी कहाँ होगा और

चातक कहाँ होंगे। सारांश ये है कि धनवानो ! तुम अपने धन को दान कर के दुखियों का दुख दूर करदो, वरना देखना यदि काल रूपी पवन चल पड़ी तो न तुम रहोगे न तुम्हारा धन रहेगा न ये दीन रहेंगे।

पद्माकरं दिनकरो विकसी करोति,
चन्द्रो विकाशयति कैरवचक्र बालम्।
नाभ्यर्थितो जलधरोऽपि जलं ददाति,
संतः स्वयंपरहितेषु कृताभियोगाः॥

जैसे सूर्य बिना कहे स्वयं ही कमलों को खिलाता है, चन्द्रमा बिना कहे कुमुदों को प्रफुल्लित करता है, बादल बिना मांगे मेह बरसाते हैं, वैसे ही सन्तजन भी बिना कहे परोपकार करते हैं।

तानीन्द्रियाणि सकलानि तदेवकर्म,
सा बुद्धिरप्रतिहता वचनन्तदेव।
अर्थोष्मण विरहितः पुरुषः स एव,
त्वन्यः क्षणेण भवतीति विचित्रमेतत्॥

सब इन्द्रियाँ वही हैं, व्यापार भी सब वही है और वचन भी वैसे ही हैं, परन्तु एक द्रव्य की गर्मी के बिना वही पुरुष और का और हो जाता है यह विचित्र बात है।

दानंभोगोनाश स्तिस्रोगतयो भवन्तिवित्तस्य।
योनददाति न भुङ्क्तेतस्य च त्रितियागतिर्भवति॥

दान, भोग, नाश – ये धन की तीन गति हैं। जिसने न दान दिया और न भोगा, उस धन की तीसरी गति होती है। अर्थात वह नाश को प्राप्त होता है।

न निर्मिताकेन न दृष्ट पूर्वा न श्रूयते हेममयो कुरंगः।
तथापि तृष्णा रघुनन्दनस्य विनाशकाले विपरीतबुद्धिः ॥

सोने का हिरण न किसी ने बनाया, न पहले देखा और न सुना तो भी श्री रामचन्द्रजी तृष्णा के वश होकर उसके पीछे दौड़े। सच है जब किसी का विनाश काल आता है तो बुद्धि उल्टी हो जाती है।

दैवोहिपुन्सा प्रतिकूलवृत्तौ विवेकितातैव भवेद्गुणाय।
किं लक्ष्मणस्यस्यास्ति रणेषुभंग सीतामसौ येनमुमोच रामः॥

जब मनुष्यों का दैव प्रतिकूल होता है तब सब विवेकादिक गुण जाते रहते हैं। अरे ! लक्ष्मण रण में हार थोड़े ही जाता, जो रामचन्द्रजी सीता को वन में अकेली छोड़कर लक्ष्मण की मदद करने चले गये।

पुरागर्भादिन्द्रो मुकुलितकरः किङ्कर इव,
स्वयंसृष्टासृष्टेः पतिरथनिधीनां निजसुतः।
क्षुधित्वाषणमाशान् सकिल पुरुरप्याटजगती,
महोकेनाप्यस्मिन् विलसित मलंघ्यंहतविधेः ॥

जिनके गर्भ में आने से पहले से ही इन्द्रादि देव हाथ जोड़कर नौकर की तरह खड़े रहते थे, जो स्वयं कर्मभूमि के विधाता थे, जिनका पुत्र नौनिधि और चौदह रत्न का स्वामी था। ऐसे श्रीऋषभदेव भगवान भी दैव के प्रेरे छह महिने तक निराहार फिरे। फिर और सामान्य मनुष्य की क्या बात है ?

गजभुजं गमयोरपि बन्धनं शशिदिवाकरयोर्ग्रह पीडनम्।
मतिमतांच विलोक्य दरिद्रतां विधिरहोबलवानितिमेमतिः ॥

हाथी और सर्प को बंधन में देखकर। चन्द्रमा और सूर्य में ग्रहण लगते देखकर। बुद्धिमानों को दरिद्री देखकर। हमारी समझ में यही आता है कि भाग्य ही बलवान है।

हस्तौदानविवर्जितौ श्रुतिपुटौ सारस्वतद्रोहिणौ।
नेत्रेसाधुविलोकनेन रहिते पादौ न तीर्थंगतौ ॥
अन्यायार्जित वित्त पूर्णमुदरं गर्वेण तुंगंशिरो।
रे रे जंबुक मुः मुः सहसा नीचं सुनिंद्यं वपुः ॥

हाथों से दान नहीं दिया, कानों से शास्त्र नहीं सुना, नेत्रों से साधु दर्शन नहीं किये, पैरों से तीर्थयात्रा नहीं की और अन्याय करके एकत्रित किये हुये धन से पेट भरा है, घमंड में शिर से किसी को नमस्कार नहीं किया; इसलिये हे गीदड़ ! तू ऐसे नीच पुरुष के शरीर को न खा।

अनंत शास्त्रं बहुलाश्चविद्या अल्पश्चकालो बहुविघ्नताच।
यत्सारभूतं तदुपासनीयं हंसो यथा क्षीरमिबाम्बुमध्यात् ॥

शास्त्र अनंत हैं, और विद्या बहुत है, काल थोड़ा है और विघ्न बहुत हैं, अतः जो सार है उसे प्राप्त करना चाहिये। जैसे हंस जल के मध्य से दूध को पी लेता है।

पठंति चतुरोवेदान् धर्मशास्त्राणयनेकशः।
आत्मानं नैव जानन्ति दर्वीपाक रसं यथा ॥

जिसने चारों वेद और अनेक धर्म शास्त्रों को पढ़ा किन्तु आत्मा को नहीं जाना तो ऐसा है जैसे करछी ने एक रस का स्वाद नहीं जाना।

पुष्पे गंधं तिले तैलं काष्ठे वह्नि पयो घृतम्।
इक्षौ गुडं तथा देहे पश्यात्मानं विवेकतः॥

जैसे फूल में गंध, तिल में तेल, काष्ठ में आग, दूध में घी , ईख में गुड़ है; वैसे ही विचार कर विवेक से देह में आत्मा को देखो।

चला लक्ष्मीश्चलाः प्राणांश्चले जीवित मंदिरे।
चलाचले च संसारे धर्म एकोहि निश्चलः॥

लक्ष्मी चलायमान है, प्राण, जीवन, घर – ये चलायमान हैं। इस चलाचल संसार में केवल एक धर्म ही निश्चल है।

स्वयं कर्म करोत्यात्मा स्वयं तत्फल मश्नुते।
स्वयं भ्रमति संसारे स्वयं तस्माद्विमुच्यते॥

जीव आप ही कर्म करता है, उसका फल भी आप ही भोगता है। आप ही संसार में भ्रमण करता है और आप ही उससे मुक्त होता है।

एक वृद्धा स्त्री की कमर बहुत ही झुक गई थी, उससे एक लड़के ने हंसकर पूछा–

अधः पश्यसि किं माते पतितं तव किं भुवि।
रे रे मूर्ख न जानासि गतं तारुण्य मौक्तिकम्॥

हे माता ! तू नीचे को क्या देख रही है ? क्या तेरा कुछ जमीन में गिर गया है ? (स्त्री ने जवाब दिया) अरे मूर्ख तू नहीं जानता मेरी जवानी रूपी मोती गिर गया है।

एक चोर राजा के महल में चोरी करने को गया और कोशिश करता हुआ राजा के पलंग के नीचे जा बैठा।

राजा को नींद नहीं आई थी सो पड़े पड़े राजा ने एक श्लोक बनाया उसके तीन चरण तो बने पर चौथा चरण न बन सका उस चौथे चरण को चोर ने बना दिया।

चेतोहरायुवतयः सुहृदानुकूलाः,
सद्बान्धवाः प्रणयगर्व गिराश्च भृत्याः।
गर्जन्तिदन्तिनिवहा तरलातुरंगाः,

राजा *– मेरे चित्त को हरने वाली स्त्री है, मित्र मेरे अनुकूल हैं, मेरे भाई बन्धु बड़े सज्जन हैं, मेरे नौकरों को घमंड बिलकुल नहीं है, मेरे द्वारे परे हाथी गरज रहे हैं, घोड़े हिनहिना रहे हैं; मैं ऐसी सम्पदा वाला हूँ। इस प्रकार तीन चरणों को राजा बार-बार गुनगुना रहा था, तब चौथा चरण चोर ने कहा–*

सम्मीलनेनयनयो र्नेहिं किंचिदस्ति॥

चोर *– अर्थात् आँख बन्द हो गई तो तुम्हारा कुछ भी नहीं।*

मेरी भावना

क्षेम रहे आनन्द रहे हो प्रजा सुखी धन-कन भरपूर।
राजा हो धर्मज्ञ अहिंसक रोग शोक सब भागैं दूर॥
हैजा प्लेग मरी बीमारी न हो देश में भूकम्पान।
वृष्टि समय पर होय फलें फूलें फल हो खेतों में धान॥
परशत्रु का भय नहिं व्यापै राजा प्रजा होय बलवान।
न्यायासन पर जो बैठैं उनको सद्बुद्धि देय भगवान॥
खान-पान हो शुद्ध सत्य व्यवहार झूठ चोरी का त्याग।
नियम शील व्रत संयम पालैं 'मक्खन' हो निजात्म से राग॥

परिशिष्ट-३

समयसार का सार

अनुभौ समान न धरम कोऊ और है

(दोहा)

कहों शुद्ध निहचे कथा, कहों शुद्ध व्यवहार।
मुक्ति पंथ कारन कहों, अनुभौ कौ अधिकार॥1॥

वस्तु विचारत ध्यावतैं, मन पावै विश्राम।
रस स्वादत सुख ऊपजे, अनुभौ ताको नाम॥2॥

अनुभौ चिंतामणि रतन, अनुभौ है रसकूप।
अनुभौ मारग मोक्ष को, अनुभौ मोक्ष सरूप॥3॥

(सवैया 31)

अनुभौ के रस को रसायन कहत जग,
अनुभौ अभ्यास यह तीरथ की ठौर है।
अनुभौ की जो रसा कहावे सोई पोरसा सु,
अनुभौ अधोरसा सो ऊरध की दौर है॥
अनुभौ की केलि यहै कामधेनु चित्रावेलि,
अनुभौ को स्वाद पंच अमृत को कौर है।
अनुभौ करम तोरे परमसों प्रीति जोरै,
अनुभौ समान न धरम कोऊ और है॥4॥

आपनौ स्वभाव भूलि जगत में फिर्‌यो है

जैसे कोई स्वान परो कांच के महल बीच,
ठौर ठौर स्वान देखि भूंसि भूंसि मरो है।

बानर ज्यों मुट्ठी बांध परो है पराये वश,
कूप में निहार सिंह आप कूदि परो है॥
फटिक की शिला में विलोकि गज आप अरो,
नलकी के सूबटा को कौन धौं पकर्‌यो है।
तैसे ही अनादि को अज्ञानभाव मान हंस,
आपनौ स्वभाव भूलि जगत में फिर्‌यो है॥5॥

सुभाव जब गहिये

जैसे तृण काठ बांस आरने इत्यादि और,
ईंधन अनेक विधि पावक में दहिये।
आकृति विलोकत कहावै आगि नाना रूप,
दीसै एक दाहक-सुभाव जब गहिये॥
तैसे नव तत्त्व में भयो है, बहु भेषी जीव,
शुद्धरूप मिश्रित अशुद्ध रूप कहिये।
जाही छिन चेतना शकति कौ विचार कीजै,
ताहि छिन अलख अभेद रूप लहिये॥6॥

एक आतमा ही राम है

जैसे बनवारी में कुधातु के मिलाप हेम,
नाना भांति भयौ पै तथापि एक नाम है।
कसिकै कसौटी लीक निरखै सराफ ताहि,
बान के प्रमान करि लेतु देतु दाम है॥
तैसे ही अनादि पुद्‌गलसों संयोगी जीव,
नव तत्त्व रूप में अरूपी महाधाम है।
दीसै उन्मान सों उद्योतवान ठौर ठौर,
दूसरौ न और एक आतमा ही राम है॥7॥

जे जे वस्तु साधक हैं तेउ तहां बाधक हैं

जैसे रवि मंडल के उदै महि मंडल में,
आतप पटल तम पटल विलात है।
तैसैं परमातम कौ अनुभौ रहत जौलों,
तौलों कहुं दुविधा न कहुँ पक्षपात है॥
नय कौ न लेश परमान कौ न परवेश,
निच्छेप के वंश को विध्वंस होतु जात है।
जे जे वस्तु साधक हैं तेउ तहां बाधक हैं,
बाकी राग दोष की दशा की कौन बात है॥8॥

स्वभाव निज गह्यो है

जैसे कोउ जन गयौ धोबी के सदन तिन,
पहिरो परायो वस्त्र मेरो मानि रह्यो है।
धनी देखि कह्यो भैया यहु तो हमारो वस्त्र,
चिन्ह पहिचानत ही त्याग भाव लह्यो है॥
तैसे ही अनादि पुद्‌गलसों संयोगी जीव,
संग के ममत्वसों विभावता में बह्यो है।
भेद ज्ञान भयौ जब आपापर जान्यो तब,
न्यारौ परभावसौं स्वभाव निज गह्यो है॥9॥

शुद्धता संभारै जग जाल सों निकरि कै

जैसे कोऊ पातुर बनाय वस्त्र आभरण,
आवति अखारे निशि आड़ौ पट करि कै।
दुहूँ ओर दीवटि संवारि पट दूरि कीजे,
सकल सभा के लोग देखैं दृष्टि धरिकै॥

तैसैं ज्ञान सागर मिथ्यात ग्रन्थ भेदि करि,
उमग्यो प्रकट रह्यो तिहुँ लोक भरि कै।
ऐसो उपदेश सुनि चाहिये जगत जीव,
शुद्धता संभारै जग जाल सों निकरि कै॥10॥

भेदज्ञान

जैसे करवत एक काठ बीच खंड करै,
जैसे राजहंस निरवारै दूध जल को।
तैसे भेदज्ञान निज भेदक शकति सेती,
भिन्न भिन्न करै चिदानन्द पुद्‌गल को॥
अवधिकों धावै मनपर्ये की अवस्था पावै,
उमगि कें आवै परमावधि के थल को।
याही भांति पूरनस्वरूप कौ उदोत धरै,
करै प्रतिबिंबित पदारथ सकल को॥11॥

अकर्त्ता

जैसौ जो दरब ताके तैसे गुन परजाय,
ताहीसों मिलत पै मिलै न काहु आन सों।
जीव वस्तु चेतन करम जड़ जाति भेद,
अमिल मिलाप ज्यों नितंब जुरे कान सों॥
ऐसौ सुविवेक जाकै हिरदै प्रगट भयौ,
ताकौ भ्रम गयौ ज्यों तिमिर भागौ भान सों।
सोई जीव करम कौ करता सौ दीसै पै,
अकरता कह्यौ है शुद्धता के परमान सों॥12॥

कर्त्ता

जैसे महाधूप की तपति में तिसायो मृग,
भरमसों मिथ्याजल पीवन को धायो है।
जैसे अन्धकार माहिं जेवरी निरखि नर,
भरमसों डरपि सरप मानि आयो है॥
अपने सुभाव जैसे सागर सुथिर सदा,
पवन संजोग सों उछरि अकुलायो है।
तैसे जीव जड़सों अव्यापक सहज रूप,
भरमसों करम को करता कहायो है॥13॥

तमासगीर है

जैसे राजहंस के बदन के सपरसते,
देखिये प्रगट न्यारो क्षीर न्यारो नीर है।
तैसे समकिती की सुदृष्टि में सहज रूप,
न्यारो जीव न्यारो कर्म न्यारोई शरीर है॥
जब शुद्ध चेतना कौ अनुभौ अभ्यासे तब,
भासे आपु अचल न दूजो और सीर है।
पूरब करम उदै आइके दिखाई देइ,
करता न होइ तिन्ह को तमासगीर है॥14॥

ज्ञानकला जागी भरम की दृष्टि भागी

जैसे काहू बाजीगर चौहटे बजाइ ढोल,
नाना रूप धरिके भगल विद्या ठानी है।
तैसे मैं अनादि कौ मिथ्यात की तरंगनिसों,
भरम में धाइ बहुकाय निज मानी है॥

अब ज्ञानकला जागी भरम की दृष्टि भागी,
अपनी पराई सब सोंज पहिचानी है।
जाके उदै होत परवान ऐसी भांति भई,
निहचै हमारी ज्योति सोई हम जानी है॥15॥

दूहु मांहि दौर धूप दोउ कर्म बंध रूप

जैसे काहु चंडाली जुगल पुत्र जने तिन्ह,
एक दियौ बांमन कै एक घर राख्यो है।
बांमन कहायो तिन्ह मद्य मांस त्याग कीनो,
चांडाल कहायो तिन मद्य मांस चाख्यो है॥
तैसे एक वेदनी करम के जुगल पुत्र,
एक पाप एक पुन्य नाम भिन्न भाख्यो है।
दूहु मांहि दौर धूप दोउ कर्म बंध रूप,
यातें ज्ञानवंत नहिं कोउ अभिलाख्यो है॥16॥

वेदे निज संपति

जैसे रज सोधा रज सोध के दरव काढ़े,
पावक कनक काढ़ि दाहत उपल कों।
पंक के गरभ में ज्यों डारिये कतक फल,
नीर करे उज्ज्वल नितारि डारे मल कों॥
दधि को मथैया मथि काढ़े जैसे माखन कों,
राजहंस जैसे दूध पीवै त्यागि जल कों।
तैसे ज्ञानवंत भेदज्ञान की सकति साधि,
वेदे निज संपति उछेदे पर दल कों॥17॥

तिनकों कर्ता हम तो न कहेंगे

(सवैया 23)

जे निज पूरब कर्म उदै, सुख भुंजत भोग उदास रहेंगे।
जो दुख में न विलाप करैं, निरबैर हिये तन ताप सहेंगे॥
है जिनके दृढ़ आतमज्ञान, क्रिया करके फल को न चहेंगे।
तेसु विचक्षन ज्ञायक हैं, तिनकों कर्ता हम तो न कहेंगे॥18॥

आत्मा नित्य है

ज्यों कलधौत सुनार कि संगति, भूषन नांउ कहै सब कोई।
कंचनता न मिटी तिहिं हेतु, वहै फिर औंटि के कंचन होई॥
त्यों यह जीव अजीव संयोग, भयो बहुरूप भयो नहिं दोई।
चेतनता न गई कबहूँ तिहि, कारन ब्रह्म कहावत सोई॥19॥

आत्मानुभव का दृष्टांत

ज्यों नट एक धरै बहु भेष, कला प्रगटै जग कौतुक देखै।
आपु लखै अपनी करतूति, वहै नट भिन्न विलोकत पेखै॥
त्यें घट में नट चेतन राउ, विभाउ दसा धरि रूप विसेखै।
खोलि सुदृष्टि लखै अपनो पद, दुन्द विचार दशा नहिं लेखै॥20॥

ज्ञान बिना शिवपन्थ न सूझै

काज बिना न करे जिय उद्यम, लाज बिना रन माहिं न जूझै।
डील बिना न सधै परमारथ, शील बिना सतसों न अरूझै॥
नेम बिना न लहे निहचे पद, प्रेम बिना रस रीति न बूझै।
ध्यान बिना न थमे मनकी गति, ज्ञान बिना शिवपन्थ न सूझै॥21॥

ज्ञान की महिमा

ज्ञान उदै जिनके घट अन्तर, ज्योति जगी मति होति न मैली।
वाहिज दृष्टि मिटी जिनके हिय, आतमध्यान कलाविधि फैली॥

जे जड़ चेतन भिन्न लखैं, सुविवेक लिये परखैं गुन थैली।
ते जग में परमारथ जानि, गहै रुचि मानि अध्यातम सैली॥22॥

जे दृगवंत तिन्हें सब सूझी

ज्यों चिरकाल गड़ी वसुधा महि, भूरि महानिधि अंतर गूझी।
कोउ उखारि धरै महि ऊपरि, जे दृगवंत तिन्हें सब सूझी।
त्यों यह आतम की अनुभूति, पगी जड़भाव अनादि अरूझी।
नै जुगतागम साधि कही गुरु, लक्षन वेदि विचक्षन बूझी॥23॥

परमार्थिक शिक्षा

(सवैया 31)

भैया जगवासी तू उदासी ह्वै के जगत सों,
एक छै महीना उपदेश मेरो मान रे।
और संकलप विकलप के विकार तजि,
बैठ के एकांत मन एक ठौर आन रे॥
तेरो घट सर तामें तू ही है कमल ताकौ,
तू ही मधुकर व्है सुवास पहिचान रे।
प्रापति न ह्वै है कछु ऐसौ तू विचारतु है ,
सही ह्वै है प्रापति सरूप याहि जान रे॥24॥

उपादान-निमित्त

ज्यों माटी में कलश होन की शक्ति रहै ध्रुव,
दंड चक्र चीवर कुलाल बाहिज निमित्त हुव।
त्यों पुदगल परमानु पुंज वरगना भेष धरि,
ज्ञानावरनादिक सरूप विचरंत विविध परि॥
बाहिज निमित्त बहिरातमा, गहि संसै अज्ञानमति।
जगमाहिं अहंकृत भावसों, करम रूप ह्वै परिनमति॥25॥

निश्चय से अकर्ता और व्यवहार से कर्ता

विवहार दृष्टि सों विलोकत बंध्यो सो दीसै,
निहचै निहारत न बांध्यो यह किनही।
एक पक्ष बंध्यो एक पक्ष सों अबंध सदा,
दोऊ पक्ष अपने अनादि धरे इनही॥
कोऊ कहै समल विमल रूप कोऊ कहै,
चिदानन्द तैसोई बखान्यो जैसो जिनही।
बंध्यो मानै खुल्यो मानै दुहुनको भेद जानै,
सोई ज्ञानवन्त नर तत्व पायो तिनही॥26॥

उपशम तथा क्षयोपशम भावों की अस्थिरता

(सवैया 31)

जेते जीव पंडित क्षयोपशमी उपशमी,
तिन्ह की अवस्था ज्यों लुहार की संडासी है।
छिन आग माहिं छिन पानी माहिं तैसे एऊ,
छिन में मिथ्यात छिन ज्ञानकला भासी है॥
जौलों ज्ञान रहै तौलों शिथिल चरन मोह,
जैसे कीले नाग की सकति गति नासी है।
आवत मिथ्यात तब नाना रूप बंध करैं,
ज्यों उकीले नाग की सकति परगासी है॥27॥

सम्यग्ज्ञान के बिना चारित्र निस्सार

(सवैया 23)

जो नर सम्यकवंत कहावत सम्यक्‌ज्ञान कला नहीं जागी।
आतमअंग अबंध विचारत धारत संग कहे हम त्यागी॥
भेष धरै मुनिराज पटंतर, मोह-महानल अंतर दागी।
सून्य हिये करतूति करे पर, सो सठ जीव न होइ विरागी॥28॥

समुझै न अनातम आतम सत्ता

(सवैया 23)

ग्रन्थ रचै चरचै शुभ पन्थ, लखै जग में व्यवहार सुपत्ता।
साधि संतोष अराधि निरंजन, देइ सुसीख न लेइ अदत्ता।
नंग धरंग फिरै तजि संग, छके सरवंग सुधारस मत्ता।
ये करतूति करै सठ पै समुझै, न अनातम आतम सत्ता॥29॥
ध्यान धरै करि इंद्रियनिग्रह, विग्रहसों न गिनै निज नत्ता।
त्यागि विभूति वभूति मढ़ै तन, जोग गहै भवभोग विरत्ता॥
मोन रहै लहि मंद कषाय, सहै बध बंधन होइ न तत्ता।
ए करतूति करै सठ पै, समुझै न अनातम आतम सत्ता॥30॥

(चौपाई)

जो बिनु ज्ञान क्रिया अवगाहै, जो बिनु क्रिया मोख पद चाहै।
जो बिनु मोख कहै मैं सुखिया, सो अजान मूढ़नि में मुखिया॥

ज्ञानरूपी दीपक की प्रशंसा

(सवैया 31)

जामें धूम को न लेश बात को न परवेस,
करम पतंगनि को नाश करे पल में।
दशा को न भोग न सनेह को संयोग जामें,
मोह अंधकार कौ विजोग जाके थल में॥
जामें न तताई नहिं राग रंकताई रंच,
लहलहे समता समाधि जोग जल में।
ऐसी ज्ञान दीप की सिखा जगी अभंग रूप,
निराधार फुरी पै दुरी है पुदगल में॥32॥

शरीर में त्रिलोक के विलास गर्भित हैं

(सवैया 31)

याही नरपिंड में विराजै त्रिभुवन-निधि,
याही में त्रिविध परिणाम रूप सृष्टि है।
याही में करम की उपाधि दुख दावानल,
याही में समाधि सुख वारिद की वृष्टि है॥
यामें करतार करतूति याही में विभूति,
यामें भोग याही में वियोग यामें घृष्टि है।
याही में विलास सब गर्भित गुप्तरूप,
ताही को प्रगट जाके अन्तर सुदृष्टि है॥33॥

निर्विकल्प आत्मानुभव

जामें लोक वेद नाहिं थापना उछेद नाहिं,
पाप पुन्य खेद नाहिं क्रिया नाहिं करनी।
जामें राग-दोष नाहिं जामें बंध मोख नाहिं,
जामें प्रभु दास न आकाश नाहिं धरनी॥
जामें कुलरीत नाहिं जामें हार जीत नाहिं,
जामें गुरु शिख नाहिं विष नांहि भरनी।
आश्रम वरन नाहिं काहू की शरनि नाहिं,
ऐसी शुद्ध सत्ता की समाधि भूमि वरनी॥34॥

नेक न हटत है

रवि के उद्योत अस्त होत दिन दिन प्रति,
अंजुली के जीवन ज्यों जीवन घटत है।
काल के ग्रसत छिन छिन होत छीन तन,
आरे के चलत मानौ काठ सो कटत है॥

एते परि मूरख न खोजै परमारथ को,
स्वारथ के हेतु भ्रम भारत ठटत है।
लग्यो फिरै लोगनिसों पग्यो पर जोगनिसों,
विषै रस भोगनिसों नेक न हटत है॥35॥

जैसे मृग मत्त वृषादित्य की तपति माहिं,
तृषावंत मृषा जल कारण अटत है।
तैसे भववासी माया ही सों हित मानि मानि,
ठानि ठानि भ्रम भूमि नाटक नटत है।
आगे को धुकत धाय पीछे बछरा चबाय,
जैसे दृगहीन नर जेवरी बटत है।
तैसे मूढ़ चेतन सुकृत करतूति करे,
रोवत हँसत फल खोवत खटत है॥36॥

लिये दृढ़ पेच फिरै लौटन कबूतर सौ,
उलटो अनादिकों न कहुँ सुलटत है।
जाको फल दुख ताहि सातासों कहत सुख,
शहद लपेटी अति धारासी चटत है॥
ऐसे मूढ़ जन निज संपति न लखै क्योंही,
मेरी मेरी मेरी निशि वासर रटत है॥
याही ममता सों परमारथ विनसि जाइ,
कांजी को परस राइ दूध ज्यों फटत है॥37॥

(दोहा)

सब सारन में सार है, समयसार को सार।
बिन जाने इस सार के, है नर जन्म असार॥

परिशिष्ट-७

समयसार का सार

अनुभौ समान न धरम कोऊ और है

(दोहा)

कहों शुद्ध निहचे कथा, कहों शुद्ध व्यवहार।
मुक्ति पंथ कारन कहों, अनुभौ कौ अधिकार॥1॥

वस्तु विचारत ध्यावतैं, मन पावै विश्राम।
रस स्वादत सुख ऊपजे, अनुभौ ताको नाम॥2॥

अनुभौ चिंतामणि रतन, अनुभौ है रसकूप।
अनुभौ मारग मोक्ष को, अनुभौ मोक्ष सरूप॥3॥

(सवैया 31)

अनुभौ के रस को रसायन कहत जग,
अनुभौ अभ्यास यह तीरथ की ठौर है।
अनुभौ की जो रसा कहावे सोई पोरसा सु,
अनुभौ अधोरसा सो ऊरध की दौर है॥
अनुभौ की केलि यहै कामधेनु चित्रावेलि,
अनुभौ को स्वाद पंच अमृत को कौर है।
अनुभौ करम तोरे परमसों प्रीति जोरै,
अनुभौ समान न धरम कोऊ और है॥4॥

आपनौ स्वभाव भूलि जगत में फिरयो है

जैसे कोई स्वान परो कांच के महल बीच,
ठौर ठौर स्वान देखि भूंसि भूंसि मरो है।

बानर ज्यों मुट्ठी बांध परो है पराये वश,
कूप में निहार सिंह आप कूदि परो है॥
फटिक की शिला में विलोकि गज आप अरो,
नलकी के सूबटा को कौन धौं पंकरयो है।
तैसे ही अनादि को अज्ञानभाव मान हंस,
आपनौ स्वभाव भूलि जगत में फिरयो है॥5॥

सुभाव जब गहिये

जैसे तृण काठ बांस आरने इत्यादि और,
ईंधन अनेक विधि पावक में दहिये।
आकृति विलौकत कहावै आगि नाना रूप,
दीसै एक दाहक-सुभाव जब गहिये॥
तैसे नव तत्त्व में भयो है, बहु भेषी जीव,
शुद्धरूप मिश्रित अशुद्ध रूप कहिये।
जाही छिन चेतना शकति कौ विचार कीजै,
ताहि छिन अलख अभेद रूप लहिये॥6॥

एक आतमा ही राम है

जैसे बनवारी में कुधातु के मिलाप हेम,
नाना भांति भयौ पै तथापि एक नाम है।
कसिकै कसौटी लीक निरखै सराफ ताहि,
बान के प्रमान करि लेतु देतु दाम है॥
तैसे ही अनादि पुद्गलसों संयोगी जीव,
नव तत्त्व रूप में अरूपी महाधाम है।
दीसै उन्मान सों उद्योतवान ठौर ठौर,
दूसरौ न और एक आतमा ही राम है॥7॥

जे जे वस्तु साधक हैं तेउ तहां बाधक है

जैसे रवि मंडल के उदै महि मंडल में,
आतप पटल तम पटल विलात है।
तैसैं परमातम कौ अनुभौ रहत जौलों,
तौलों कहुँ दुविधा न कहुँ पक्षपात है॥
नयकौं न लेश परमान कौ न परवेश,
निच्छेप के वंश को विध्वंस होतु जात है।
जे जे वस्तु साधक हैं तेउ तहां बाधक है,
बाकी राग दोष की दशा की कौन बात है॥8॥

स्वभाव निज गह्यो है

जैसे कोउ जन गयौ धोबी के सदन तिन,
पहिरो परायो वस्त्र मेरो मानि रह्यो है।
धनी देखि कह्यो भैया यहु तो हमारो वस्त्र,
चिन्ह पहिचानत ही त्याग भाव लह्यो है॥
तैसे ही अनादि पुद्‌गलसों संयोगी जीव,
संग के ममत्वसों विभावता में बह्यो है।
भेद ज्ञान भयौ जब आपापर जान्यो तब,
न्यारौ परभावसौं स्वभाव निज गह्यो है॥9॥

शुद्धता संभारै जग जाल सों निकरि कै

जैसे कोऊ पातुर बनाय वस्त्र आभरण,
आवति अखारे निशि आड़ौ पट करि कै।
दुहूँ ओर दीवटि संवारि पट दूरि कीजे,
सकल सभा के लोग देखैं दृष्टि धरिकै॥

तैसैं ज्ञान सागर मिथ्यात ग्रन्थ भेदि करि,
उमग्यो प्रकट रह्यो तिहुँ लोक भरि कै।
ऐसो उपदेश सुनि चाहिये जगत जीव,
शुद्धता संभारै जग जाल सों निकरि कै॥10॥

भेदज्ञान

जैसे करवत एक काठ बीच खंड करै,
जैसे राजहंस निरवारै दूध जल को।
तैसे भेदज्ञान निज भेदक शकति सेती,
भिन्न भिन्न करै चिदानन्द पुद्‌गल को॥
अवधिकों धावै मनपर्ये की अवस्था पावै,
उमगि कें आवै परमावधि के थल को।
याही भांति पूरनस्वरूप कौ उदोत धरै,
करै प्रतिबिंबित पदारथ सकल को॥11॥

अकर्त्ता

जैसौ जो दरब ताके तैसे गुन परजाय,
ताहीसों मिलत पै मिलै न काहु आन सों।
जीव वस्तु चेतन करम जड़ जाति भेद,
अमिल मिलाप ज्यों नितंब जुरे कान सों॥
ऐसौ सुविवेक जाकै हिरदै प्रगट भयौ,
ताकौ भ्रम गयौ ज्यों तिमिर भागौ भान सों।
सोई जीव करम कौ करता सौ दीसै पै,
अकरता कह्यौ है शुद्धता के परमान सों॥12॥

कर्त्ता

जैसे महाधूप की तपति में तिसायो मृग,
भरमसों मिथ्याजल पीवन को धायो है।
जैसे अन्धकार माहिं जेवरी निरखि नर,
भरमसों डरपि सरप मानि आयो है॥
अपने सुभाव जैसे सागर सुथिर सदा,
पवन संजोग सों उछरि अकुलायो है।
तैसे जीव जड़सों अव्यापक सहज रूप,
भरमसों करम को करता कहायो है॥13॥

तमासगीर है

जैसे राजहंस के बदन के सपरसते,
देखिये प्रगट न्यारो क्षीर न्यारो नीर है।
तैसे समकिती की सुदृष्टि में सहज रूप,
न्यारो जीव न्यारो कर्म न्यारोई शरीर है॥
जब शुद्ध चेतना कौ अनुभौ अभ्यासे तब,
भासे आपु अचल न दूजो और सीर है।
पूरब करम उदै आइके दिखाई देइ,
करता न होइ तिन्ह को तमासगीर है॥14॥

ज्ञानकला जागी भरम की दृष्टि भागी

जैसे काहू बाजीगर चौहटे बजाइ ढोल,
नाना रूप धरिके भगल विद्या ठानी है।
तैसे मैं अनादि कौ मिथ्यात की तरंगनिसों,
भरम में धाइ बहुकाय निज मानी है॥

अब ज्ञानकला जागी भरम की दृष्टि भागी,
अपनी पराई सब सोंज पहिचानी है।
जाके उदै होत परवान ऐसी भांति भई,
निहचै हमारी ज्योति सोई हम जानी है॥15॥

दूहु मांहि दौर धूप दोउ कर्म बंध रूप

जैसे काहु चंडाली जुगल पुत्र जने तिन्ह,
एक दियौ बांमन कै एक घर राख्यो है।
बांमन कहायो तिन्ह मद्य मांस त्याग कीनो,
चांडाल कहायो तिन मद्य मांस चाख्यो है॥
तैसे एक वेदनी करम के जुगल पुत्र,
एक पाप एक पुन्य नाम भिन्न भाख्यो है।
दूहु मांहि दौर धूप दोउ कर्म बंध रूप,
यातें ज्ञानवंत नहिं कोउ अभिलाख्यो है॥16॥

वेदे निज संपति

जैसे रज सोधा रज सोध के दरव काढ़े,
पावक कनक काढ़ि दाहत उपल कों।
पंक के गरभ में ज्यों डारिये कतक फल,
नीर करे उज्ज्वल नितारि डारे मल कों॥
दधि को मथैया मथि काढ़े जैसे माखन कों,
राजहंस जैसे दूध पीवै त्यागि जल कों।
तैसे ज्ञानवंत भेदज्ञान की सकति साधि,
वेदे निज संपति उछेदे पर दल कों॥17॥

तिनकों कर्ता हम तो न कहेंगे

(सवैया 23)

जे निज पूरब कर्म उदै, सुख भुंजत भोग उदास रहेंगे।
जो दुख में न विलाप करैं, निरबैर हिये तन ताप सहेंगे॥
है जिनके दृढ़ आतमज्ञान, क्रिया करके फल को न चहेंगे।
तेसु विचक्षन ज्ञायक हैं, तिनकों कर्ता हम तो न कहेंगे॥18॥

आत्मा नित्य है

ज्यों कलधौत सुनार कि संगति, भूषन नांउ कहै सब कोई।
कंचनता न मिटी तिहिं हेतु, वहै फिर औटि के कंचन होई॥
त्यों यह जीव अजीव संयोग, भयो बहुरूप भयो नहिं दोई।
चेतनता न गई कबहू तिहि, कारन ब्रह्म कहावत सोई॥19॥

आत्मानुभव का दृष्टांत

जज्यों नट एक धरै बहु भेष, कला प्रगटै जग कौतुक देखै।
आपु लखै अपनी करतूति, वहै नट भिन्न विलोकत पेखै॥
त्यें घट में नट चेतन राउ, विभाउ दसा धरि रूप विसेखै।
खोलि सुदृष्टि लखै अपनो पद, दुन्द विचार दशा नहिं लेखै॥20॥

ज्ञान बिना शिवपन्थ न सूझै

काज बिना न करे जिय उद्यम, लाज बिना रन माहिं न जूझै।
डील बिना न सधै परमारथ, शील बिना सतसों न अरूझै॥
नेम बिना न लहे निहचे पद, प्रेम बिना रस रीति न बूझै।
ध्यान बिना न थमे मनकी गति, ज्ञान बिना शिवपन्थ न सूझै॥21॥

ज्ञान की महिमा

ज्ञान उदै जिनके घट अन्तर, ज्योति जगी मति होति न मैली।
वाहिज दृष्टि मिटी जिनके हिय, आतमध्यान कलाविधि फैली॥

जे जड़ चेतन भिन्न लखैं, सुविवेक लिये परखैं गुन थैली।
ते जग में परमारथ जानि, गहै रुचि मानि अध्यातम सैली॥22॥

जे दृगवंत तिन्हें सब सूझी

ज्यों चिरकाल गड़ी वसुधा महि, भूरि महानिधि अंतर गूझी।
कोउ उखारि धरै महि ऊपरि, जे दृगवंत तिन्हें सब सूझी।
त्यों यह आतम की अनुभूति, पगी जड़भाव अनादि अरूझी।
नै जुगतागम साधि कही गुरु, लक्षन वेदि विचक्षन बूझी॥23॥

परमार्थिक शिक्षा

(सवैया 31)

भैया जगवासी तू उदासी ह्वै के जगत सों,
एक छै महीना उपदेश मेरो मान रे।
और संकलप विकलप के विकार तजि,
बैठ के एकांत मन एक ठौर आन रे॥
तेरो घट सर तामें तू ही है कमल ताकौ,
तू ही मधुकर व्है सुवास पहिचान रे।
प्रापति न ह्वै है कछु ऐसौ तू विचारतु है,
सही ह्वै है प्रापति सरूप याहि जान रे॥24॥

उपादान-निमित्त

ज्यों माटी में कलश होन की शक्ति रहै ध्रुव,
दंड चक्र चीवर कुलाल बाहिज निमित्त हुव।
त्यों पुदगल परमानु पुंज वरगना भेष धरि,
ज्ञानावरनादिक सरूप विचरंत विविध परि॥
बाहिज निमित्त बहिरातमा, गहि संसै अज्ञानमति।
जगमाहिं अहंकृत भावसों, करम रूप ह्वै परिनमति॥25॥

निश्चय से अकर्ता और व्यवहार से कर्ता

विवहार दृष्टि सों विलोकत बंध्यो सो दीसै,
निहचै निहरत न बांध्यो यह किनही।
एक पक्ष बंध्यो एक पक्ष सों अबंध सदा,
दोऊ पक्ष अपने अनादि धरे इनही॥
कोऊ कहै समल विमल रूप कोऊ कहै,
चिदानन्द तैसोई बखान्यो जैसो जिनही।
बंध्यो मानै खुल्यो मानै दुहुनको भेद जानै,
सोई ज्ञानवन्त नर तत्व पायो तिनही॥26॥

उपशम तथा क्षयोपशम भावों की अस्थिरता

(सवैया 31)

जेते जीव पंडित क्षयोपशमी उपशमी,
तिन्ह की अवस्था ज्यों लुहार की संडासी है।
छिन आग माहिं छिन पानी माहिं तैसे एऊ,
छिन में मिथ्यात छिन ज्ञानकला भासी है॥
जौलों ज्ञान रहै तौलों शिथल चरन मोह,
जैसे कीले नाग की सकति गति नासी है।
आवत मिथ्यात तब नाना रूप बंध करैं,
ज्यों उकीले नाग की सकति परगासी है॥27॥

सम्यग्ज्ञान के बिना चारित्र निस्सार

(सवैया 23)

जो नर सम्यकवंत कहावत सम्यक्ज्ञान कला नहीं जागी।
आतमअंग अबंध विचारत धारत संग कहे हम त्यागी॥
भेष धरै मुनिराज पटंतर, मोह-महानल अंतर दागी।
सून्य हिये करतूति करे पर, सो सठ जीव न होइ विरागी॥28॥

समुझै न अनातम आतम सत्ता

(सवैया 23)

ग्रन्थ रचै चरचै शुभ पन्थ, लखै जग में व्यवहार सुपत्ता।
साधि संतोष अराधि निरंजन, देइ सुसीख न लेइ अदत्ता।
नंग धरंग फिरै तजि संग, छके सरवंग सुधारस मत्ता।
ये करतूति करै सठ पै समुझै, न अनातम आतम सत्ता॥29॥
ध्यान धरै करि इंद्रियनिग्रह, विग्रहसों न गिनै निज नत्ता।
त्यागि विभूति वभूति मढै तन, जोग गहै भवभोग विरत्ता॥
मोन रहै लहि मंद कषाय, सहै बध बंधन होइ न तत्ता।
ए करतूति करै सठ पै, समुझै न अनातम आतम सत्ता॥30॥

(चौपाई)

जो बिनु ज्ञान क्रिया अवगाहै, जो बिनु क्रिया मोख पद चाहै।
जो बिनु मोख कहै मैं सुखिया, सो अजान मूढ़नि में मुखिया॥

ज्ञानरूपी दीपक की प्रशंसा

(सवैया 31)

जामें धूम को न लेश बात को न परवेस,
करम पतंगनि को नाश करे पल में।
दशा को न भोग न सनेह को संयोग जामें,
मोह अंधकार कौ विजोग जाके थल में॥
जामें न तताई नहिं राग रंकताई रंच,
लहलहे समता समाधि जोग जल में।
ऐसी ज्ञान दीप की सिखा जगी अभंग रूप,
निराधार फुरी पै दुरी है पुदगल में॥32॥

शरीर में त्रिलोक के विलास गर्भित हैं

(सवैया 31)

याही नरपिंड में विराजै त्रिभुवन-निधि,
याही में त्रिविध परिणाम रूप सृष्टि है।
याही में करम की उपाधि दुख दावानल,
याही में समाधि सुख वारिद की वृष्टि है॥
यामें करतार करतूति याही में विभूति,
यामें भोग याही में वियोग यामें घृष्टि है।
याही में विलास सब गर्भित गुप्तरूप,
ताही को प्रगट जाके अन्तर सुदृष्टि है॥33॥

निर्विकल्प आत्मानुभव

जामें लोक वेद नाहिं थापना उछेद नाहिं,
पाप पुन्य खेद नाहिं क्रिया नाहिं करनी।
जामें राग-दोष नाहिं जामें बंध मोख नाहिं,
जामें प्रभु दास न आकाश नाहिं धरनी॥
जामें कुलरीत नाहिं जामें हार जीत नाहिं,
जामें गुरु शिख नाहिं विष नांहि भरनी।
आश्रम वरन नाहिं काहू की शरनि नाहिं,
ऐसी शुद्ध सत्ता की समाधि भूमि वरनी॥34॥

नेक न हटत है

रवि के उद्योत अस्त होत दिन दिन प्रति,
अंजुली के जीवन ज्यों जीवन घटत है।
काल के ग्रसत छिन छिन होत छीन तन,
आरे के चलत मानौ काठ सो कटत है॥

ऐते परि मूरख न खोजै परमारथ को,
स्वारथ के हेतु भ्रम भारत ठटत है।
लग्यो फिरै लोगनिसों पग्यो पर जोगनिसों,
विषै रस भोगनिसों नेक न हटत है॥35॥

जैसे मृग मत्त वृषादित्य की तपति माहिं,
तृषावंत मृषा जल कारण अटत है।
तैसे भववासी माया ही सों हित मानि मानि,
ठानि ठानि भ्रम भूमि नाटक नटत है।
आगे को धुकत धाय पीछे बछरा चबाय,
जैसे दृगहीन नर जेवरी बटत है।
तैसे मूढ़ चेतन सुकृत करतूति करे,
रोवत हँसत फल खोवत खटत है॥36॥

लिये दृढ़ पेच फिरै लौटन कबूतर सौ,
उलटो अनादिकों न कहुँ सुलटत है।
जाको फल दुख ताहि सातासों कहत सुख,
शहद लपेटी अति धारासी चटत है॥
ऐसे मूढ़ जन निज संपति न लखै क्योंही,
मेरी मेरी मेरी निशि वासर रटत है॥
याही ममता सों परमारथ विनसि जाइ,
कांजी को परस राइ दूध ज्यों फटत है॥37॥

(दोहा)

सब सारन में सार है, समयसार को सार।
बिन जाने इस सार के, है नर जन्म असार॥

॥इति समाप्तम्॥